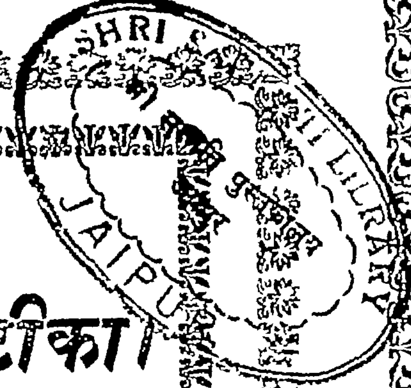


॥ ॐ नमः सिद्धेभ्य ॥

श्री तारणतरणस्वामी विरचित—

आध्यात्मिक चौवीसठाणा टीका।

(अन्वयार्थ, भावार्थ और विशेषार्थ सहित)

टीकाकार:—

श्रीमान् जैनधर्मभूषण धर्मदिवाकर ब्रह्मचारी सीतलप्रसादजी।

"जैनविजय" प्रिन्टिंग प्रेस, गांधीचौक–सूरतमें
मूलचन्द किसनदास कापड़ियाने मुद्रित किया।

प्रथमावृत्ति] वीर सं० २४६५ [प्रति १०००

मूल्य–एक रुपया।

भूमिका।

श्री जिन तारणतरणस्वामी रचित यह चौवीस ठाणा ग्रंथ है। इसमें भी स्वामीने आध्यात्मीक मननका रस भर दिया है। इस ग्रंथके लिखनेका प्रयोजन यह झलकता है कि आत्माके निज शुद्ध स्वभावको पर भावोंसे या कर्म द्वारा रचित अवस्थाओंसे भिन्न पहचान लिया जावे। मनमें वे ही भाव आते हैं जो कर्मसे सम्बन्ध रखते हैं। इन सबसे भेदज्ञान होनेपर अपना स्वभाव भिन्न झलकने लग जायगा जो स्वभाव स्वसंवेदन गम्य है, मन वचन कायसे अगोचर है। यह भी दिखलाया है कि मुमुक्षुको व्यवहाराश्रित आत्माकी सर्व अवस्थाओंको भी जानना चाहिये कि कर्मोंके संयोगमें रहते हुए क्या क्या अवस्थाएं होजाती हैं, जो सर्व अवस्थाएं केवल शुद्ध स्वभावमें नहीं हैं। भेद विज्ञान होनेके लिये तत्वार्थसूत्र व श्री गोम्मटसारका ज्ञान बहुत जरूरी है। फिर समयसार ग्रंथसे आत्माको स्वभावसे शुद्ध जानकर इन कर्मजनित व कर्म सापेक्ष भावोंको दूर किया जावे। चौवीस स्थान या विशेष अवस्थाएं संसारी जीवोंकी होती हैं ये सब विकल्प शुद्ध आत्माके स्वभावमें नहीं हैं। इसलिये नीचेप्रकार भावना भानी चाहिये—

(१) मैं नरकादि चार गतिसे भिन्न स्वभाव मात्रका धारी शुद्धात्मा हूं।
(२) मैं पांचों इन्द्रियोंसे भिन्न अतीन्द्रिय स्वभावधारी शुद्धात्मा हूं।
(३) मैं छः कायोंसे भिन्न अकाय व अमूर्तीक शुद्धात्मा हूं।
(४) मैं १५ प्रकार योगोंकी चंचलतासे शून्य समुद्रवत् निश्चल हूं।
(५) मैं तीनों वेदोंके काम विकारसे परे ब्रह्मचर्यका धारी परब्रह्म स्वरूप हूं।
(६) मैं क्रोधादि पच्चीस कषायोंसे रहित वीतराग शांत आत्मा हूं।
(७) मैं मतिज्ञानादि आठ ज्ञानके भेदोंसे रहित एक अभेद शुद्ध सहज ज्ञानका धारी हूं।
(८) मैं सामायिकादि सात प्रकार संयमकी श्रेणीसे परे परम संयमी आत्मरमी हूं।
(९) मैं चार प्रकार दर्शनके भेदोंसे बाहर एक अभेद दर्शन गुणका धारी हूं।
(१०) मैं कृष्णादि छहों लेश्याओंसे रहित परम शुद्ध निर्मल भावका धारी हूं।

भूमिका
॥ ३ ॥

(११) मैं भव्य अभव्यकी कल्पनासे शून्य एक शुद्ध जीवत्व भावका स्वामी हूं।
(१२) मैं छह प्रकार सम्यक्त भेदोंसे रहित सदा ही एक शुद्ध सम्यग्दृष्टी हूं।
(१३) मैं सैनी असैनीकी कल्पनासे शून्य, मनसे गोचर स्वानुभवगम्य आत्म वस्तु हूं।
(१४) मैं आहारक अनाहारकके मार्गसे परे सदा ही निरास्रव स्थिर आत्मा हूं।
(१५) मैं चौदह गुणस्थानोंकी श्रेणीसे दूरवर्ती परम कृतकृत्य शुद्ध बुद्ध परमात्मा हूं।
(१६) मैं उन्नीस जीव समासोंसे दूरवर्ती परम शुद्ध अशरीरी आत्मा हूं।
(१७) मैं आहारादि छः पर्याप्तियोंसे शून्य परम निरंजन ज्ञानाकार आत्मा हूं।
(१८) मैं दस प्राणोंसे रहित सुख सत्ता चैतन्य बोध प्राणोंका धारी अमर आत्मा हूं।
(१९) मैं चार प्रकार संज्ञासे रहित सदा ही तृप्त परम निस्पृह व निर्भय आत्मा हूं।
(२०) मैं बारह प्रकार उपयोगके भेदोंसे रहित शुद्ध सहज ज्ञान दर्शन उपयोगका धारी हूं।
(२१) मैं सोलह प्रकार ध्यानके प्रपंचसे दूरवर्ती सदा ही स्वानुभूति रमणकारी राम हूं।
(२२) मैं सत्तावन आस्रवोंसे रहित सदा ही निर्बंध व स्वतंत्र परमेश्वर हूं।
(२३) मैं चौरासीलाख योनियोंके गमनसे रहित सदा ही अजन्मा अजर अमर परमात्मा हूं।
(२४) मैं १९७॥ लाख कुल कोडिकी संज्ञाओंसे दूरवर्ती परम चैतन्य कुलवान परम शुद्ध सहज स्वभावधारी आत्मा हूं।

इसतरह मनन करनेसे अपना आत्मा देव अपने शरीररूपी मंदिरमें प्रगट दिखलाई पड़ेगा। शुद्ध नय या शुद्ध दृष्टिसे हरएक आत्मा निर्बंध व परम शुद्ध सिद्धके समान है। यही श्रद्धान, यही ज्ञान, यही ध्यान मोक्षमार्ग है व परमानन्दका कारण है।

इस ग्रंथकी टीका लिखनेमें शुद्ध प्रतिका मिलना बड़ा कठिन था। भाई मथुराप्रसाद बजाज सागरने दो गुटके भिजवाए, जिससे ग्रंथ समझमें आसका।

१ गुटका १०० वर्षके अनुमानका लिखा होगा उसमें लिपि सरल नहीं है।

दूसरा गुटका बहुत पुराना है व बहुत शुद्ध है। इसकी प्रशस्ति यह है जो पृष्ठ २६० पर ममलपाहुड़ ग्रंथकी समाप्तिमें दी हुई है। चौवीस ठाणा गुटकेके अंतमें है—

भूमिका
॥ ४ ॥

प्रशस्ति ।

संवत् १६६४ (**सोलहसौ चौसठ**) वर्षे पुस्तक आरम्भ ज्येष्ठ सुदी ७ का । समाप्त श्रावण वदी ७ का ग्रन्थ समाप्तमिति । तत् वास्तव्य स्थान **देवगढ़नगरे** तत् महाराजाध्यराजा..... ....व्रतधारी पाडे **रैणचंद** तत पट्टे शिष्य पाडे **असोले** पुस्तक लिखापितं आत्म पठणार्थं । तत चैत्यालये साहिपति साहि श्री **उदोतकारी** श्री साहि अधिकारी तत पुत्र सुखानन्द न्यानी श्री अधिकारी णजु पुस्तक लिखापितोयं । दत्तं मनःकामना सिद्धचर्थे परोपकारार्थं धर्मफल प्राप्त्यर्थं । लिखितं लेखक भट्ट राघवदास स्वहस्त लिखितः ।

इस ग्रंथमें गद्य बहुत है । आत्म मननके वाक्य हैं । मूल प्रति हस्ताक्षरके नकल करके नम्बर देकर अर्थ लिखा है । तुच्छ बुद्धिके अनुसार समझके लिखा है। कहीं भूलचूक हो तो ज्ञानीजन सुधार लें व अल्पज्ञपर क्षमा करें । श्री जिन तारणतारण स्वामीका स्वर्गवास १५७२ में हुआ । मल्हारगढ नसियामें स्मारक स्थापित है । चौवीस स्थानोंके कोष्ठकोंका मिलान **चौवीस ठाणा** चर्चा पुस्तकसे किया है जिसे वीर स० २४५६ में जैन साहित्य प्रचारक कार्यालय हीराबाग बम्बईने प्रसिद्ध किया है ।

मुलतान शहर।
दासुराम सुखानन्द जैन बाग,
ता० २७-९-१९३८।

अध्यात्मरसीक—
ब्रह्मचारी सीतलप्रसाद ।



प्रशस्ति
॥ ५॥

विषय-सूची।



शुद्धाशुद्धि पत्र।

पृष्ठ	लाइन	अशुद्ध	शुद्ध
२	१२	आचरण	आवरण
५	१४	मनको	मन जो
,,	१५	ज्ञानं	ज्ञानं
६	४	वर्णन	वर्ण
,,	१६	पर्यास पद	अपर्यास पद
१०	१५	वेद्ना	वेद
११	१०	—०—	(११) इतर निगोद सूक्ष्म (१२) इतर निगोद बादर
१५	७	कर्ममें	कर्म थे
१७	१५	आचरण	आवरण
२१	२२	में शून्य	से शून्य
२६	१७	केवल	कमल
३०	७	है थ	है तथ
३२	४	आवरेण	आयरेण
३३	११	अशुद्ध	शुद्ध
३५	१५	पुष्य	तुष्य
३७	९	बिम्ब	स्वरूप
४१	१५	आवरण	आयरण
४३	१५	वन्दनयुक्त	बन्धनमुक्त
४५	१४	भय २	भव्य २
,,	२१	अलस्य	अलक्ष्य
४६	१०	आवरण	आयरण
,,	११	,,	,,
४७	४	दर्शनीय योग	दर्शनोपयोग
५१	१५	तथ	रमण करता है तथ १६
५२	२	१७	ज्ञान मूर्ति अविनाशी कमलमें रमण होरहा है १७
,,	१९	भव्य	भव
५३	१५	अप	अथ
५४	९	कासु	फासु
,,	११	आवरण	आयरण
,,	१७	कीर्ति	क्रांति
५५	१०	आवरण	आयरण
५६	११	भय	मय
,,	१३	अव्या	अष्या
,,	१४	माया	मात्रा
५७	६	रहित	सहित
,,	२१	भाव	भाव, शरीर रंजन भाव

॥ ७ ॥

पृष्ठ	लाइन	अशुद्ध	शुद्ध
,,	२२	घल	मल
६०	१६	वियो	पियो
६१	अन्तमें	तप	तय
६२	६	द्वेष	प्रेम
६३	६	वाय	काय
,,	८	वाइ	काइ
,	१०	धाईस	बारह
,,	१४	रमण	रमणता
६४	२०	यायु	वायु
६५	१	आवरण	आयरण
,,	५	मुक्त	भुक्त
,,	६	आवरण	आयरण
,,	१६	,,	,,
६९	७	आयरण	आवरण
,,	९	सुनाई	सुभाइ
७२	१	आयरण	आयरण
,,	६	मुक्ति	भुक्ति
,,	९	आवरण	आयरण
,,	११	,,	,,
७४	७	आवरण	आयरण

पृष्ठ	लाइन	अशुद्ध	शुद्ध
७४	११	मघ	मघ
७५	१६	प्रक्षादिक	क्षायिक
,,	अन्तमें	२३	२२
७६	१०	मद्द	पद्
७८	११	६३	६६
७९	१३	परिण	परिणय
८०	५	मुक्त	भुक्त
,,	१९	लेंगी	लेगा
८२	१६	लोयनं	लोपनं
८५	१२	लोयन	लोपन
८६	२	निस्वास	विस्वास
९४	८	८८३३६	६६३३६
,,	९	३७७६	३७७३
९८	१	ध्यान ६	ध्यान ८
१००	९	अडग	षड्ग
१०१	१४	मुक्त	भुक्त
१०५	४	सुमन	सुपन
,,	५	मिषाय	विषय
१११	४	स्वाध्यायिक	स्वाभाविक
११७	१०	मुक्ति	उक्ति





श्रीतारणतरणस्वामी विरचित—

चौवीस ठाणा टीका।

प्रथम अध्याय।

मङ्गल अर्हत् सिद्ध मुनि, जिन भाषित जिन धर्म।
लोकोत्तम रक्षक परम, नमहुँ कटैं सब कर्म॥ १॥

ॐ उवन उवन विंद विंद भवनं, विन्यान विनय सुयं।
उत्पन्नंतानन्त सुयं च सुरयं, सुद्धं च सुद्धात्मनं॥
उवन उवन सुभाव मनस्य ममलं, मय मूर्ति न्यानं सुयं।
लोकालोक सुयं सुरं च सुरयं, सुन्नं सहावं सुरं॥ १॥

अन्वयार्थ—(ॐ उवन उवन विंद विंद भवन) ॐ मंत्र द्वारा प्रकाशित परमात्मा ज्ञानमई है व ज्ञानमें रमण कर रहे हैं (विन्यान विनय सुयं) जो स्वयं आप अपने ज्ञानकी विनय कर रहे हैं अर्थात् ज्ञानाराधनमें तत्पर हैं (उत्पन्नंतानंत सुयं च सुरयं) जहां अनन्तानन्त प्रकाश धारी ज्ञान सूर्य स्वयं उत्पन्न होरहा है (सुद्धं च सुद्धात्मनं) जो कर्म रहित शुद्ध आत्मा है (उवन उवन सुभाव मनस्य ममलं) जहां स्वभावका प्रकाश है व जहां शुद्धोपयोग है (मय मूर्ति न्यानं सुयं) जो ज्ञान मूर्ति है, स्वयं ज्ञान स्वरूप है (लोकालोक सुयं सुरं च

सुरयं) लोकालोकको दिखानेके लिये स्वयं सूर्य हैं (सुन्न सुहाव सुरं) वे सर्व पर भावोंसे शून्य स्वभावधारी हैं व परम सूर्य हैं।

भावार्थ—इसमें ॐ शब्द द्वारा श्री अरहन्त परमात्माका स्मरण किया गया है जो केवलज्ञानमई वीतराग स्वभावमें है व स्वानुभवमें तत्पर है।

मनुव मन उववन्न उवन उवनं, विंदस्य त्रितियं सुयं।
आचरनं तं न्यान सुद्ध विमलं, दस च अदरसं सुयं॥
दर्सं नन्त नन्त सुद्ध विमलं, आचर्नं दर्सं सुयं।
मननं तं विसेष सुद्ध विमलं, परमप्प परमं ध्रुवं॥ २॥

अन्वयार्थ—(मनुव मन उववन्न उवन उवनं) मनके द्वारा शुक्लध्यानका मनन करनेसे जहां केवलज्ञानका उदय होगया है (विंदस्य त्रितियं सुयं) जो तीसरा ज्ञान नेत्र स्वयं प्रकाशित होता है (आचरनं तं न्यान सुद्ध विमलं) वह परमात्मा निर्मल शुद्ध ज्ञानमें रमण कर रहे हैं (दर्सं च अदरस सुयं) उन्होंने स्वयं ही आत्माके दर्शनको देख लिया है (दर्सं नन्त नन्त सुद्ध विमलं) वहां शुद्ध आचरण रहित अनन्त दर्शन प्रकाशित है (आचर्न दर्सं सुय) वे स्वयं अपने दर्शन गुणमें आचरण कर रहे हैं (मनन तं विसेष सुद्ध विमल) वहां शुद्ध निर्विकार शुद्धोपयोग है (परमप्प परम ध्रुव) वे ही अविनाशी उत्तम परमात्मा हैं।

भावार्थ—अरहन्त परमात्माके अनन्त ज्ञान व अनन्त दर्शन गुण हैं, वे अपने ही ज्ञान दर्शनमें ही रमण कर रहे हैं।

आचरनं तं मान सुयं च सुरयं, विंदस्य रमनं परं।
न्यानं न्यान विन्यान न्यान ममलं, अंतर सुरं अंतरं॥
विंद त्रितिय विसेष सुयं च रमनं, सद्भाव भावं सुरं।
संसारं सुरयंति सहस रवनं, आचन न्यानं परं॥ ३॥

अन्वयार्थ—(आचरनं त मान सुय च सुरयं) वह केवलज्ञान प्रमाण स्वयं सूर्यके समान आप ही शोभा-

यमान है (विंदस्य रमनं पर) **वहां उत्कृष्टपने ज्ञानमें ही रमण है** (न्यान न्यान विन्यान न्यान मयं) **यह निर्मल ज्ञान परम विज्ञान है** जो सूक्ष्मसे सूक्ष्म पर्यायको जानता है (अंतर गुरं अंतर) **यह अंतरंगमें प्रकाशित** सूर्य है (विंद त्रितिय विसेष सुय च रमनं) वह तीसरा ज्ञान नेत्र है जो आपमें रमण कर रहा है (न्यान पर) **वह स्वभावसे प्रकाशित सूर्य है** (संसारं सुरयति सहस रयन) हजार किरण धारी संसारिक सूर्य है (आनंद न्यान पर)वह ज्ञान उत्कृष्ट सूर्य है आपमें ही आचरण कर रहा है।

भावार्थ—यहां भी केवलज्ञानका ही महात्म्य है।

उवनं उवन स विंद विंद भवनं, विन्यान न्यानं मयं।
उत्पन्नं उववन्न उवन उवनं, उत्पन्नं श्रियं साश्वतं॥
उत्पन्नं हियहेय गुय ममलं, हितकारं श्रीयं सुयं।
उत्पन्न महयार रंज रमनं, महयार श्रीयं परं॥ ४॥

अन्वयार्थ—(उवनं उवन स विंद विंद भवनं) स्वानुभवमें परिणमन करता हुआ प्रकाशका उदय होरहा है (विन्यान न्यानं मयं) यह केवलज्ञान प्रमाण है (उत्पन्नं उववन्न उवन उवनं) जो कुछ प्रकाश झलकना था सो झलक गया है, कोई अन्धकार नहीं है (उत्पन्नं श्रियं साश्वतं , अविनाशी ज्ञान-लक्ष्मीका उदय होगया है (उत्पन्नं हिय हेय गुय ममलं) उस शुद्ध ज्ञानमें उपादेय हेय व ज्ञेय सब झलक रहा है। क्या ग्रहण करने योग्य है, क्या त्यागने योग्य है, क्या जानने योग्य है (हितकारं श्रीयं सुयं) यह सूर्यके समान हितकारी ज्ञानका ऐश्वर्य है। (उत्पन्न महयार रंज रमनं) इसीकी महानतासे आनन्दमें रमण होरहा है (महयार श्रीयं परं) यह आत्माका हितकारी ईश्वर स्वरूप ज्ञान है।

भावार्थ—केवलज्ञानका महात्म्य है कि उसमें कोई आवरण नहीं है, यह अविनाशी है, सर्व हेय, उपादेय, ज्ञेय तत्वोंको बतानेवाला है। यह स्वानुभव रूप है, परमानन्दमय है।

उत्पन्नं नं न्यान तत्त विमलं, पयं च पद विंदं सुयं।
उत्पन्नं नं हिय हेय ममलं, मलं अपलं सुयं॥

उत्पन्नं उत्पन्न प्रान ममलं, इन्द्री अतिन्द्री सुरं ।
उत्पन्नं नन्त विसेष भाव सहजं, सहजं सहावं परं ॥ ५ ॥

अन्वयार्थ—(उत्पन्नं त न्यान नत विमलं) निर्मल अनन्तज्ञान पैदा होगया है (पयं च पद विंद सुर) जो प्रत्येक पदमें स्वानुभव रूप हैं व सूर्यके समान हैं (उत्पन्नं तं दिष्ट इष्ट ममलं) निर्मल प्रिय अनन्तदर्शनका प्रकाश होगया है (सब्द असब्द सुर) उस केवलज्ञानीके जो शब्द प्रगट होता है वह शब्द रहित सूर्यसम ज्ञानको ही बतानेवाला है (उत्पन्नं उत्पन्न प्रान ममल) अरहंत भगवानके सुख, सत्ता, चैतन्य, बोध इन शुद्ध आत्मीक प्राणोंका विकाश होगया है (इन्द्री अतिन्द्री सुरं) केवलीके अतीन्द्रिय ज्ञान सूर्यसम प्रगट है, ज्ञान ही इन्द्रिय है और स्पर्शनादि पांच इन्द्रियोंकी सहायता नहीं है (उत्पन्न नत विसेष भाव सहज) केवलीके सहज स्वाभाविक अनन्तशक्तिधारी विशेष भावकी शुद्धि प्रगट है (सहज सहावं परं) अरहंतका आत्मा सहज स्वरूपमें है व परम उत्कृष्ट है ।

भावार्थ—यहां भी अरहंत भगवानकी स्तुति है ।

उत्पन्नं गय इंद्रि काय रवनं, जोगं च वेयं सुरं ।
उववन्नं कषाइ न्यान ममलं, दर्सं अदर्सं परं ॥
दंसन संजम लेस्य भव्य भवनं, भयं सि विलयं परं ।
सम्मतं सहकार नंत ममलं, सैनी असयनी सुरं ॥ ६ ॥
आहारं गुनठान न्यान ममलं, जीवस्य पज्जय परं ।
मन्न विगयं तं नंत नंत चपलं, कम्मस्य रमनं परं ॥
ज्ञानं चि पच्चय विहञ्च रवनं, जायं कुल कोटि सुरं ।
सुर विंजन सञ्जोय ऐत वैन ममलं, चौवीसठाणं सुरं ॥ ७ ॥

अन्वयार्थ—(उत्पन्नं गय इंद्रि काय रवन) केवली भगवानके मनुष्यगति उत्पन्न होचुकी है । पांच इंद्रियां

हैं, त्रस काय सुन्दर है (जोग च वेय सुरं) मन वचन कायके १५ योगोंमेंसे सत्य व अनुभय मन, सत्य अनुभय वचन, औदारिक काय, औदारिक मिश्र काय, कार्माण काय ऐसे सात योग हैं। वेद तीनों नहीं हैं ज्ञानका ही वेद है, काय वेद नहीं है (उववन्नं कषाय न्यान ममल) कषाय चार या पचीस पहले थे अब ज्ञान कषाय रहित निर्मल है, मात्र एक केवलज्ञान है (दर्सं अदर्सं पर) जिस ज्ञानसे अतीन्द्रिय उत्कृष्ट आत्माको देख रहे हैं (दंसन संजम लेस्य भव्य भवन) चार दर्शनमेंसे केवलीके अनन्त दर्शन है, सात संयममेंसे एक यथाख्यात संयम है, छः लेश्यामेंसे एक शुक्ल लेश्या है, भव्य भावका व्यवहार है (भयासि विकय पर) केवलज्ञानीके कोई भय नहीं रहा। वे परमात्मा होगए (सम्मत्त सहकार नन्त ममल) छः सम्यक्तमेंसे क्षायिक अनन्त शुद्ध सम्यक्त परम सहकारी है (सैनी असयनी सुरं) सैनी असैनीसे रहित ये निर्मल ज्ञान सूर्य हैं (आहारं गुनठान न्यान ममलं) सयोग गुणस्थानमें केवली आहारक है, कर्म नोकर्म ग्रहण करते हैं इसतरह चौदह मार्गणाओंके चौदह स्थान हैं। गुणस्थान तेरहवां सयोगकेवली जिन शुद्ध ज्ञानमय है यह पंद्रहवां स्थान है (जविस्य पज्जय पर) सोलहवां स्थान जीव समास है, केवली पर्याप्त पञ्चेन्द्रिय सैनी हैं। १७ वा स्थान पर्याप्ति है केवली पर्याप्त हैं।१८ वां स्थान प्राण है। केवलीके वचनबल, कायबल, आयु, श्वासोछ्वास चार प्राण हैं। १९ वां स्थान संज्ञा है, केवलीके कोई नहीं है। २० वां स्थान उपयोग है केवलीके केवलज्ञान केवलदर्शन उपयोग है (मन विगयं तं नन्त नन्त चपल) चंचल मनको अनन्तानन्त विकल्पोंका करनेवाला है, केवलीके नहीं है (कम्मस्य रमन पर) केवल अघातीय कर्मोंका सम्बन्ध है (ज्ञानं चि पच्चय विह च रवन) २१ वां स्थान ध्यान है, केवलीके शुक्लध्यान होता है। २२ वां स्थान प्रत्यय या आस्रव है, केवलीके ५७ आस्रवोंमेंसे ७ योग ही आस्रव है (जाय कुल कोटि सुरं) २३ वां स्थान योनि ८४ लाख हैं केवलीके यथासम्भव मनुष्य योनि है। कुल कोटि १९७॥ लक्ष कोटि कुलमेंसे केवलीके मनुष्य सम्बन्धी कुल है। यह २४वां स्थान है (सुर विंजन संजोय एत वैन ममलं चौवीसठाणं सुर) ऐसे २४ स्थानके धारी केवलीके सुरव्यंजनके संयोग रहित शुद्ध निरक्षर वचन निकलते हैं।

भावार्थ—जिन स्थानोंमें संसारी जीवोंकी अवस्थाओंको जाना जावे ये स्थान कुल चौवीस हैं उनको चौवीस ठाण या चौवीस स्थान कहते हैं। इनका विस्तारसे कथन, गोम्मटसार जीवकांडमें है।

चौबीस स्थानोंका विस्तार।

(१) गति ४—प्राणीके शरीरादिकी अवस्था विशेष। वे चार हैं-नरक, तिर्यंच, देव, मनुष्य। संसारी जीव इनमेंसे किसी गतिमें मिलेगा।

(२) इन्द्रिय ५—जिनके द्वारा मतिज्ञान स्पर्श, रस, गन्ध, वर्णन शब्दको जान सके। ये पांच हैं-स्पर्शन इन्द्रिय, रसना इन्द्रिय, घ्राणइंद्रिय, चक्षुइंद्रिय, कर्णइन्द्रिय। संसारी जीव कोई एकेन्द्रिय है, कोई दो, कोई तीन, कोई चार, कोई पांच इंद्रिय धारी हैं।

(३) काय ६—शरीरकी रचनाकी अपेक्षा संसारी प्राणियोंके जाति भेद-ये छः हैं-पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय और त्रस काय।

(४) योग १५—आत्माके कर्म नोकर्म पुद्गल ग्रहण करनेकी शक्तिको योग कहते हैं। जब आत्माके प्रदेश चञ्चल होते हैं तब यह योगशक्ति काम करती है। आत्माके प्रदेश पंद्रह योगोंमेंसे किसी एक योगके निमित्त होनेपर हिलते हैं। एक समयमें कोई एक योग होता है। चार मनके-सत्य (जहां सच्चा विचार हो), असत्य, उभय (जहां सच्चा झूठा मिला हुआ विचार हो, अनुभय (ऐसा विचार जिसके सत्य या असत्य कुछ भी नहीं कह सक्ते हैं, जैसे विचार करना वह क्या पूछते थे, वे क्यों बुलाते थे,) इसी तरह चार वचनके-सत्य, असत्य, उभय, अनुभय। कायके योग सात-औदारिक काय (मनुष्य व तिर्यंचोंके) औदारिक मिश्र काय (इनहीके अपर्याप्त अवस्थामें) वैक्रियिककाय (देव नारकियोंके) वैक्रियिक मिश्र (इनहीके पर्याप्तपदमें) आहारक काय (मुनिके मस्तकसे आहारक शरीर निकलता है तब) आहारक मिश्र काय (आहारक शरीरके बनते हुए) कार्माण काय योग विग्रह गतिमें सबके होता है, समुद्घात केवलीमें भी होता है।

(५) वेद ३—कामभावको वेद कहते हैं। स्त्री वेद, पुंवेद, नपुंसक वेद। जहांतक वेदका अभाव न हो वहांतक कोई न कोई वेद रहेगा।

(६) कषाय २५—जो आत्माके ज्ञानको मैला, कलुषित, कलंकी व कषायला करदे। वे कषाय कुल पचीस हैं।

४–अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ—जो सम्यग्दर्शन व स्वरूपाचरण चारित्रको रोके, न होने दे।

४–अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ—जो श्रावकके बारह व्रतरूप देश चारित्रको न होनेदे, रोके। अप्रत्याख्यानका अर्थ कुछ त्यागके हैं।

४–प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ—जो साधुके महाव्रतको रोके। प्रत्याख्यान नाम पूर्ण त्यागका है, उसको जो न होनेदे।

४–संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ—जो संयमको घात न करे, संयमके साथ साथ रह सके। परन्तु यथाख्यात चारित्र व वीतरागताको रोके।

९–नोकषाय, कुछ कषाय—जो कषायकी सहायताके विना काम न कर सके। हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा (घृणा), स्त्रीवेद, पुंवेद, नपुंसक वेद। इनमेंसे संसारी जीवोंके यथासंभव कषायें एक समयमें पाई जाती हैं। जैसे किसी जीवको अनन्तानुबन्धी अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान, संज्वलन चारों ही कषायोंके साथ अरति, शोक, भय, जुगुप्सा व पुंवेद हो अर्थात् एक साथ ९ कषायें उदयमें रह सकती हैं।

(७) ज्ञान ८—तीन कुज्ञान–कुमति, कुश्रुति, कुअवधि, पांच सम्यग्ज्ञान। मति श्रुत, अवधि, मनःपर्यय, केवलज्ञान।

सम्यक्त सहित ज्ञानको सम्यग्ज्ञान कहते हैं, मिथ्यात्वसहित ज्ञानको कुज्ञान कहा है। इंद्रियोंसे या मनसे सीधा किसी पदार्थको जानना मतिज्ञान है।

मतिज्ञान द्वारा जाने हुए पदार्थके द्वारा दूसरे पदार्थको जानना श्रुतज्ञान है। द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्यादा पूर्वक रूपी पदार्थोंको आत्माके द्वारा प्रत्यक्ष जानना अवधिज्ञान है।

दूसरोंके द्वारा विचार किये जानेवाले रूपी पदार्थोंको आत्मा द्वारा प्रत्यक्ष जानना मनःपर्यय ज्ञान है।

सर्व द्रव्योंकी सर्व गुण पर्यायोंको एक काल प्रत्यक्ष क्रम रहित जानना केवलज्ञान है। एक अकेला केवलज्ञान होता है। मति श्रुत दो किसी जीवके होते हैं, किसीके अवधि या मनःपर्यय सहित तीन या दोनों सहित चार ज्ञान एक साथ होते हैं।

(८) संयम ७—पांच अहिंसादि व्रतोंको पालना, इंद्रियोंको व मनको रोकना संयम है। उसके सात भेद हैं—

१-असंयम—संयमका बिलकुल न होना। चार गुणस्थान तक असंयम रहता है।

२-देश संयम—श्रावकका चारित्र पालना। पांचवां गुणस्थान।

३-सामायिक—समभावसे ध्यानमें रहना।

४-छेदोपस्थापन—समभावसे गिरकर फिर समभावमें स्थिर होना।

५-परिहारविशुद्धि—जिस संयममें विशेष जीव हिंसाका त्याग हो।

६-सूक्ष्मसांपराय—केवल सूक्ष्म लोभके होते हुए संयम रहना।

७-यथाख्यात—नमूनेदार वीतराग चारित्र।

एक समयमें एक जीवके एक प्रकार संयम मिलेगा। पिछले पांच मुनियोंके होते हैं।

(९) दर्शन ४—विशेष रहित सामान्य ग्रहणको दर्शन कहते हैं। इसके चार भेद हैं—

१-चक्षु दर्शन—आंखके द्वारा सामान्य ग्रहण।

२-अचक्षु दर्शन—आंखके सिवाय अन्य चार इंद्रिय व मनसे सामान्य ग्रहण।

३-अवधि दर्शन—जो सम्यक्तीके अवधिज्ञानसे पहले होता है।

४-केवलदर्शन—सबको ग्रहण करना। केवलीके होता है।

तीन इंद्रिय तक अचक्षु दर्शन चार व पांच इंद्रियोंके चक्षु अचक्षु दोनों दर्शन होते हैं। अवधि-दर्शन सहित तीन दर्शन अवधिज्ञानीको होंगे, केवलीके एक केवलदर्शन होगा।

(१०) लेश्या ६—जिन भावोंसे पाप या पुण्यका बन्ध हो। ऐसे भाव लेश्या कहलाते हैं, आत्म प्रदेश कम्पन रूप योग कषाय सहित या कषाय रहितको लेश्या कहते हैं। ये छः हैं—

१-कृष्णलेश्या-अशुभतम भाव—मूलसे नाश करनेवाले भाव।

२-नील-अशुभतर भाव—मूल रखकर नाश करनेवाले भाव।

३-कापोत-अशुभ भाव—कुछ बिगाड़ करनेवाले भाव।

४-पीत-शुभ भाव—परोपकारके भाव।

५-पद्म-शुभतर भाव—अपनी हानि सहकर परोपकारके भाव।

६-शुक्ल-शुभतम भाव—रागद्वेष रहित समभाव या वैराग्य भाव, निःपक्षपात भाव। एक काल एक लेश्या, एक जीवके पाई जाती है।

(११) भव्य २—जो सम्यक्तको प्राप्त कर सके वह भव्य, जो सम्यक्तको न प्राप्त कर सके वह अभव्य। ऐसे दो भेद।

(१२) सम्यक्त ६—जीवके श्रद्धानको सम्यक्त कहते हैं। इसके छः भेद हैं—

१-मिथ्यात्व—मिथ्या श्रद्धान।

२-सासादन—सम्यक्तसे छूटकर मिथ्यात्वमें आते हुए भाव।

३-मिश्र—सम्यक्त व मिथ्यात्वके मिश्रभाव।

४-उपशम—चार अनन्तानुबन्धी कषाय व दर्शनमोहके उपशम या दबनेसे जो सम्यक्त हो। इसका काल अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं है।

५-वेदक या क्षयोपशम—चार अनन्तानुबन्धी कषाय, मिथ्यात्व, मिश्र इन ६ के उदय न होनेपर केवल सम्यक्त प्रकृतिके उदय होनेपर जो मलीन श्रद्धान हो वह वेदक सम्यक्त है। जघन्य अन्तर्मुहूर्त व उत्कृष्ट ६६ सागर काल है।

६-क्षायिक—सातों प्रकृतियोंके क्षयसे जो हो, अनन्त कालतक रहनेवाला, एक कालमें एक जीवके छः मेंसे एक भाव होगा।

(१३) सैनी २—मन सहित सैनी, मन रहित असैनी कहलाते हैं। हृदयमें आठ पत्तेके कमलाकार द्रव्य मन द्वारा तर्क करनेकी जो शक्ति धरे उसे सैनी कहते हैं।

(१४) आहारक २—औदारिक, वैक्रियक व आहारक। किसी भी शरीरके योग्य आहारक वर्गणाको जो ग्रहण करे वह आहारक है। जो इनको न ग्रहण कर सके वह अनाहारक है। जैसे विग्रहगतिका जीव, अयोगकेवली।

(१५) गुणस्थान १४—मोहनीय कर्मके उदय, उपशम, क्षय, क्षयोपशम तथा योगके निमित्तसे होनेवाले जीवके भावोंको गुणस्थान कहते हैं। वे चौदह इस क्रमसे हैं कि एकसे दूसरेमें ऊपर ऊपर भावोंकी निर्मलता है। इन चौदह सीढ़ियोंको पार कर जीव सिद्ध परमात्मा होता है।

१-मिथ्यात्व—जहां आत्माका श्रद्धान न हो, मोहमें भूला हुआ हो।

२-सासादन—सम्यक्तसे गिरकर मिथ्यात्व गुणस्थानमें पड़ते हुए बीचके भाव, कुछ देर मात्र, उत्कृष्ट छः आवली। यहां अनन्तानुबन्धी कषायका उदय रहता है, मिथ्यात्वका नहीं।

३-मिश्र—सम्यक्त व मिथ्यात्वके मिले भाव। अन्तर्मुहूर्त तक।

४-अविरत सम्यक्त—संयम रहित तत्वका श्रद्धान जहां हो, यहां अनन्तानुबन्धी चार कषाय व मिथ्यात्व व मिश्रका छः का उदय नहीं होता है। उपशम या क्षायिक सम्यक्तीके सम्यक्त प्रकृतिका उदय भी होता है जब कि क्षयोपशम या वेदकके सम्यक्त प्रकृतिका उदय होता है।

५-देशविरत—श्रावकके व्रतोंको पालनेवाला, दर्शन आदि ग्यारह प्रतिमाओंके पालनेवाला। यहां चार अप्रत्याख्यानावरण कषायोंका उदय भी नहीं होता है।

६-प्रमत्तविरत—साधुके महाव्रतोंको पालनेवाला। प्रमाद सहित इस गुणस्थानमें साधु आहार, विहार, उपदेशादि करते हैं। इसके आगेके सब गुणस्थान ध्यानमई अप्रमत्त हैं। यहां प्रत्याख्यानावरण चार कषायका उदय नहीं होता है।

७-अप्रमत्तविरत—यहां चार संज्वलन कषाय व नौ नोकषायोंका मन्द उदय होता है।

८-अपूर्वकरण —अपूर्व शुद्ध भाव। यहां भी १३ कषायोंका मन्दतर उदय है।

९-अनिवृत्तिकरण—खास शुद्ध भाव। यहां चार संज्वलन व तीन वेदनाका उदय रहता है सो धीरे २ मिटता जाता है।

१०-सूक्ष्म लोभ या सूक्ष्म सांपराय—यहां मात्र सूक्ष्म लोभका ही उदय है।

११-उपशांत मोह या उपशांत कषाय—यहां सर्व कषाय शांत हैं। यहां वही आता है जो कषायोंको उपशम करता हुआ उपशम श्रेणीसे चढ़ता है। यहांसे गिरता अवश्य है, फिर सातवें तक क्रमसे लौट जासक्ता है।

१२-क्षीण मोह—यहां सर्व मोह क्षय होचुका है। यह क्षपकश्रेणीसे मोहको क्षय करता हुआ ८, ९, १० गुणस्थानसे १२वेंमें आता है।

१३-सयोग केवलि जिन—चार घातीय कर्म रहित विहार करनेवाले केवली अरहन्त भगवान।

१४–अयोग केवलि जिन—योग क्रिया रहित केवली। कुछ देरमें ही चार अघातीय कर्मका क्षय करके फिर सर्व शरीर रहित सिद्ध होजाते हैं।

एक कालमें जीवके एक गुणस्थान ही होता है।

(१६) जीव समास १०—जहां जीवोंको जातिकी अपेक्षा संग्रह किया जाय ऐसे जीव समास १४ प्रसिद्ध हैं—

(१) पृथ्वीकाय सूक्ष्म, (२) पृथ्वीकाय बादर।
(३) जलकाय सूक्ष्म, (४) जलकाय बादर।
(५) अग्निकाय सूक्ष्म, (६) अग्निकाय बादर।
(७) वायुकाय सूक्ष्म, (८) वायुकाय बादर।
(९) नित्य निगोद साधारण वनस्पति सूक्ष्म, (१०) नित्य निगोद बादर।
(११) प्रत्येक वनस्पति बादर प्रतिष्ठित (निगोद सहित), (१२) प्रत्येक वनस्पति बादर अप्रतिष्ठित।
(१३) द्वेन्द्रिय, (१४) तेन्द्रिय, (१५) चौन्द्रिय, (१६) पंचेन्द्रिय असैनी, (१७) पंचेन्द्रिय सैनी। पर्याप्त अपर्याप्तके भेदसे ३८ भेद होजांयगे। कोई जीव किसी समासमें गर्भित होगा।

(१७) पर्याप्ति ६—शरीरादि बननेकी शक्तिको पर्याप्ति कहते हैं। ये छः हैं—१–आहार–पुद्गलको मोटा महीन करनेकी शक्ति, २-शरीर, ३-इंद्रिय, ४–श्वासोछ्वास, ५–भाषा, ६–मन।

एकेन्द्रियमें पहली चार, २ से पंचेंद्रिय असैनी तक पहली ५, सैनीके छहों होती हैं।

(१८) प्राण १०—जिनके कारण जीव वर्ताव कर सके, काम कर सके वे प्राण हैं। वे १० होते हैं—५ इंद्रिय प्राण, ३ बल मन वचन काय, १ आयु, १ श्वासोछ्वास।

एकेन्द्रियके स्पर्शनेन्द्रिय, काय बल, आयु, श्वास, चार प्राण।
द्वेन्द्रियके-रसना इंद्रिय वचनबल अधिक छः प्राण।
तेन्द्रियके–घ्राणेंद्रिय सहित सात प्राण।
चोन्द्रियके-चक्षु इंद्रिय अधिक आठ प्राण।
पंचेन्द्रिय असैनीके–कर्ण इंद्रिय सहित नौ प्राण।

पंचेन्द्रिय सनीके-मन बल सहित दश प्राण होते हैं।

(१९) संज्ञा ४—कर्मोंके उदयसे विशेष प्रकारकी इच्छाओंको संज्ञा कहते हैं। ये चार हैं—१ आहार संज्ञा-भोजनकी इच्छा, २ भय संज्ञा-भयका भाव, ३ मैथुन संज्ञा-काम विकार, ४ परिग्रह संज्ञा-मूर्छाभाव। ये सर्व संसारी जीवोंके होती हैं, साधुओंके कम होती जाती हैं।

(२०) उपयोग १२—चेतना गुणके परिणमनको, जो वस्तुको जाननेमें लगे उपयोग कहते हैं, बारह भेद हैं। ज्ञान आठ, दर्शन ४, पहले पढ़ चुके हैं।

(२१) ध्यान १६—दुःखरूप परिणाम आर्तध्यान है, उसके चार भेद हैं-१-इष्टवियोगज, २-अनिष्ट संयोगज, ३-पीड़ाजनित, ४-निदान (भोग वांछा) दुष्ट परिणाम रौद्रध्यान है, इसके भी चार भेद हैं।

५-हिंसानन्दी, ६-मृषानन्दी, ७-चौर्यानन्दी, ८-परिग्रहानन्दी। धर्मका चिंतवन सो धर्मध्यान है। इसके चार भेद हैं।

९-आज्ञा, १०-अपाय (कर्मनाश विचार), ११-विपाक (कर्मफल), १२ संस्थान (आत्मा व लोकका स्वरूप)। शुद्ध ध्यान शुक्लध्यान है, इसके भी चार भेद हैं—

१३-पृथक्त्व वितर्क वीचार (जहां पलटन हो), १४-एकत्व वितर्क अवीचार (जहां थिरता हो), १५-सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति (सूक्ष्म काययोग हो), १६-व्युपरत क्रिया निवृत्ति (योग रहित होजावे)।

कोई ध्यान एक जीवके पाया जायगा।

(२२) प्रत्यय या आस्रव ५७—मिथ्यात्व पांच प्रकार—

१-एकांत मिथ्यात्व—वस्तुमें अनेक स्वभाव होनेपर भी एक ही मानना।

२-विनय—निर्णय न करके सत्य असत्यको एकसा मानना।

३-विपरीत—असत्यको सत्य मानना।

४-संशय—शङ्काशील रहना। ५-अज्ञान—जानना ही नहीं।

१२ अविरति भाव-पांच इंद्रिय व मनको वश न रखना तथा छःकायके प्राणियोंकी दया न पालना।

२५ कषाय-पहले कह चुके, १५ योग पहले कह चुके। इसतरह ५+१२+२५+१५=५७ आस्रव हैं।

(२३) योनि ८४ लाख—जिन स्थानोंमें जीव जन्मते हैं उनके गुणोंकी अपेक्षा भेद क यो
कहते हैं। वे ८४ लाख नीचे प्रमाण हैं—

(१) नित्य निगोद सात लाख, (२) इतर निगोद ७ लाख, (३) पृथ्वीकाय ७ लाख, (४) जल
काय ७ लाख, (५) अग्नि काय ७ लाख, (६) वायु काय ७ लाख, (७) प्रत्येक वनस्पति १० लाख,
(८) द्वींद्रिय २ लाख, (९) तेन्द्रिय २ लाख, (१०) चौन्द्रिय २ लाख, (११) पंचेन्द्रिय तिर्यंच ४ लाख,
(१२) देव ४ लाख, (१३) नारकी ४ लाख, (१४) मनुष्य १४ लाख=८४ लाख।

(२४) कुल १९७॥ लाख कोड—एक प्रकारकी योनिसे जितने प्रकारके जीव जन्मते हैं उन प्रका-
रोंको कुल कहते हैं। जैसे एक खेतकी मिट्टीसे जौ, गेंहू, चने होना। ऐसे कुल एकसौ साढेसतानवें लाख
कोड नीचे प्रकार हैं—

(१) पृथ्वी काय ... ... २२ लाख कोड कुल
(२) जल काय ... ... ७ " "
(३) अग्नि काय ... ... ३ " "
(४) वायु काय ... ... ७ " "
(५) वनस्पति काय ... ... २८ " "
(६) दोइंद्रिय ... ... ७ " "
(७) तेइंद्रिय ... ... ८ " "
(८) चौइंद्रिय ... ... ९ " "
(९) पंचेन्द्रिय तिर्यंच ... ... ४३॥ " " (जलचर १२॥ लाख, थलचर १९ लाख, नभचर १२ लाख)

(१०) नारक ... ... २५ " "
(११) देव ... ... २६ " "
(१२) मनुष्य ... ... १२ " "

१९७॥ लाख कोड कुल

४ गतियोंके २४ स्थान।

कुल स्थान	नरक गतिमें	तिर्यञ्च गतिमें	देव गतिमें	मनुष्य गतिमें
(१) गति ४	१ नरक	१ तिर्यंच	१ देव	१ मनुष्य
(२) इन्द्रिय ५	१ पंचेन्द्रिय	पांचों इन्द्रियाले	१ पंचेन्द्रिय	१ पंचेन्द्रिय
(३) काय ६	१ त्रस काय	छहों काय	१ त्रस काय	१ त्रस काय
(४) योग १५	११ (४ मन ४ वचन वै० २) १ कार्मण	११ (४ म + ४ व + औदा० २ कार्मण १)	११ (४ म + ४ व + वै० २ + कार्मण १)	१३ (वै० २ विना)
(५) वेद ३	१ नपुंसक	तीनों वेद	२ स्त्री पुवेद	तीनों वेद
(६) कषाय २५	२३ (स्त्री पुवेद नहीं)	२५ कषाय	२४ (नपुंसक वेद विना)	२१ कषाय
(७) ज्ञान ८	६ (कुज्ञान ३ सुज्ञान ३)	६ (कुज्ञान ३ + सुज्ञान ३)	६ (कुज्ञान ३ + सुज्ञान ३)	८ ज्ञान
(८) संयम ७	१ असंयम	२ असंयम, देश संयम	१ असंयम	७ संयम
(९) दर्शन ४	३ (केवल विना)	३ (केवल विना)	३ (केवल विना)	४ दर्शन
(१०) लेश्या ६	३ (कृष्ण, नील, कापोत)	छहों लेश्या	पर्याप्त अपेक्षा ३ पीत पद्म शुक्ल अपर्याप्तके छहों	छहों लेश्या
(११) भव्य २	दोनों	दोनों	दोनों	दोनों
(१२) सम्यक्त्व ६	छहों	६ सम्यक्त्व	६	६
(१३) सैनी २	सैनी	२ सैनी, असैनी	सैनी	सैनी
(१४) आहारक २	दोनों	दोनों	दोनों	दोनों
(१५) गुणस्थान १४	पहले ४	पहले ५	पहले ४	सब १४
(१६) जीव समास १९	पंचेन्द्रिय सैनी	सब १९	पंचेन्द्रिय सैनी	पंचे० सैनी
(१७) पर्याप्ति ६	६ पर्याप्ति	६ तक	६	६
(१८) प्राण १०	१० प्राण	१० तक	१०	१०
(१९) संज्ञा ४	४	४	४	४
(२०) उपयोग १२	९ (ज्ञान ६ दर्शन ३)	९ (ज्ञान ६ दर्शन ३)	९ (ज्ञान ६ + दर्शन ३)	१२
(२१) ध्यान १६	९ (आर्त ४+रौद्र ४ + धर्म १)	११ (आर्त ४+ रौद्र ४ + धर्म ३)	१० (आर्त ४+ रौद्र ४+धर्म २)	१६
(२२) आस्रव ५७	५१ (स्त्री, पुवेद औदा० २ + आहारक २ = ६ छोडकर)	५३ (आहारक २+२=४ विना)	५२ (नपु० वेद औदा० २ आहारक २=५ विना)	५५ (वै० २ विना)
(२३) योनि ८४ लाख	४ लाख	६२ लाख	४ लाख	१४ लाख
(२४) कुल १९७॥ लाख कोड	२५ लाख कोड	१३४॥ लाख कोड	२६ लाख कोड	१२ लाख कोड

उत्पत्ति तं षिपति मुक्ति रवनं, न्यानं च उवनं सुरं ।
उत्पन्नं तं न्यान नन्त विमलं, उत्पन्न कम्मं विलं ॥
भुक्तं न्यान विसेष नन्त विमलं, भुक्तस्य कम्मं गलं ।
संसारे सरयं विनन्द विलयं, न्यानं च न्यानं सुरं ॥ ८ ॥

अन्वयार्थ-(उत्पत्ति व षिपति मुक्ति रवनं) जब मोक्षका लाभ होता है तब फिर संसारमें जन्मका अभाव होजाता है (न्यानं च उवनं सुरं) वहां सूर्यके समान ज्ञान प्रगट रहता है (उत्पन्न तं न्यान नन्त विमल) वह ज्ञान अनन्त है व शुद्ध है, सदा प्रकाशरूप है (उत्पन्न कम्म विलं) जो संचित कर्ममें थे सब क्षय होगये हैं (भुक्त न्यान विसष नन्त विमल) मोक्ष प्राप्त परमात्मा अनन्त शुद्ध ज्ञान स्वभावका ही भोग करते हैं (भुक्तस्य कम्मं गलं) कर्मोंके फलका भोग उनके क्षय होगया है (संसारे सरयं विनन्द विलय) संसारके भ्रमणका सर्व कष्ट नाश होगया है (न्यानं च न्यान सुर) ऐसा ज्ञानमई सूर्य झलकता है।

भावार्थ—सिद्ध परमात्मा कर्म रहित होजाते हैं, शुद्ध ज्ञान स्वभावमें लीन होकर ज्ञानानन्दका भोग करते हैं। उनका भव भ्रमण बन्द होगया है। वे परम सुखी हैं। कोई सांसारिक दुःख नहीं है।

उववन्नं उववन्न न्यान रवनं, उत्पन्न कम्मं विलं ।
उववन्नं हिययार न्यान रवनं, हियार कम्मं विलं ॥
उववन्नं सहकार न्यान चरन, सहयार कम्मं गलं ।
उववन्नं तं जान न्यान उवनं, जानं अनिष्टं विल ॥ ९ ॥

अन्वयार्थ—(उववन्नं उववन्न न्यान रवन) सिद्ध भगवानमें रमणीक प्रकाशका ज्ञानका उदय रहता है (उत्पन्न कम्मं विलं) जन्मके कारण सर्व कर्म क्षय होगए हैं (उववन्नं हियार न्यान रवनं) यह सुन्दर ज्ञान बड़ा ही हितकारी है (हियार कम्म विलं) आत्माको शुभ संयोगोंमें रखनेवाला हितकारी पुण्यकर्म गल गया है (उववन्न सहकार न्यान चरन) सिद्धोंके सदा आत्माको सहकारी ज्ञानमें चलनारूप ज्ञानाचार प्रगट है (सहयार कम्मं गल) संसारमें सहायकारी पुण्यकर्मका क्षय होगया है (उववन्नं तं जान न्यान उवनं) सिद्धोंके

ज्ञानमई रथका आरोहण है (ज्ञान अनिष्ट विलं) मरणरूप क्षणिक चार गतिरूपी रथका चढ़ना बन्द होगया है।

भावार्थ—सिद्धोंके शुद्ध ज्ञानका प्रकाश है इससे सिद्धोंके परम निराकुलता है, बाधक सर्व कर्म क्षय होगये हैं, पुण्य भी कोई नहीं है इसलिये स्वाभाविक ज्ञान परिणतिमें रमण करते हैं। क्षणिक चार गतिमें गमनसे सदाके लिये छूट गए हैं।

उववन्नं पय पंच न्यान विमलं, पयं च कम्मं विलं।
उवन्नंत सुकिय सुभाव षिपनं, कम्म सुभावं विलं॥
उवन्नंत विसेष न्यान रवनं, कम्म स्वनन्तं विलं।
जं जं कम्म उवन्न असेस रवनं, न्यानस्य नन्तं विलं॥ १०॥

अन्वयार्थ—(उववन्न पयं पच न्यान विमल) निर्मल पंचम केवलज्ञानका प्रकाश परमात्मामें रहता है (पयं च कम्म विल) ज्ञानावरण पांचों कर्म क्षय होगए हैं (उवन्नत सुकिय सुभाव षिपनं) सिद्धोंके अपना ही क्षायिक स्वभाव प्रगट होगया है (कम्म सुभावं विल) कर्मोंकी सब प्रकृतियें विला गई हैं, न भावकर्म है न द्रव्यकर्म है न नोकर्म है (उवन्नत विसेष न्यान रवनं) उनके रमणीक अनन्तज्ञानका प्रकाश है (कम्म स्वनन्त विल) अनन्त कर्मोंका क्षय होगया है (ज ज कम्म उवन्न असेस रवनं न्यानस्य नंत विल) जो जो कर्म संसारी गतिमें उत्पन्न होते थे वे सब अनन्त कर्म शुद्ध रमणीक ज्ञानके प्रतापसे विला गए हैं।

भावार्थ—सिद्धोंके स्वरूपकी महिमा है। वे कर्म रहित स्वभावसे ही विराजित हैं। वे परम निराकुल हैं, क्षायिक शुद्ध स्वभावमें लीन हैं, शरीरादि रहित अमूर्तीक हैं।

अन्मोयं तं न्यान नन्त अचलं, विषयस्य विलयं सुयं।
जं जं विषय चरन सहाव उवनं, अन्मोय न्यानं विलं॥
न्यानं न्यान सुयं सुरं च रवनं, बाधस्य विलयं सुयं।
अव्याबाह अनन्त न्यान रवनं, चरन सुयं सासुतं॥ ११॥

अन्वयार्थ—(अन्मोय त न्यान नन्त अचल) वे सिद्ध भगवान अनन्त ज्ञानमें निश्चल रहते हुए परमानन्दमय हैं (विषयस्य विलयं सुय) उनके पांच इंद्रिय व मनका विषय सुख सब नाश होगया है (जं जं विषय चरन सहाव उवनं) विषयोंके भीतर भोग करनेसे जो जो विभाव पैदा होते हैं (अन्मोय न्यानं विल) वे सब ज्ञानानन्दमें मगन होनेसे विला गए हैं (न्यान न्यान सुय सुर च रवनं) वे स्वयं ज्ञान सूर्यके होते हुए अपने ही ज्ञानमें रमण करते हैं (बाधस्य विलयं सुयं) सुखके बाधाकारक कर्म या भाव स्वयं विला गए हैं (अव्याबाह अनन्त न्यान रवन) उनके रमणीक अव्याबाध व बाधा रहित अनन्त ज्ञान है (चरनं सुयं सासुत) तथा उनके स्वय ध्रुव रूपसे अपने ही स्वभावमें आचरण है।

भावार्थ—सिद्धोंके अतीन्द्रिय बाधा रहित स्वाभाविक आनन्द है। सांसारिक विषय सुखकी न वांछा है, न भोग है। वे शुद्ध ज्ञानमें ही रमण करते हुए ज्ञानानन्दका ही स्वाद लेते हैं। वे शाश्वत् स्वरूप रमण चारित्रके धारी हैं।

अर्क तु जु विसेष नन्त विमलं, सुद्धं च सुद्धात्मनं।
न्यानं न्यान सुयं समं च ममलं, चरनं च सुद्धं ध्रुवं ॥
तत्कालं रवनं तवं च ममलं, सम्यक्त सार्धं सुयं।
नन्तानन्त चतुष्टयं सुसमयं, अन्मोय मुक्तिं ध्रुवं ॥ १२ ॥

अन्वयार्थ—(अर्क तु जु विसेष नन्त विमलं) वे सिद्ध भगवान विशेष अपूर्व सूर्य हैं जो मल व आचरण रहित अनेक काल तक उदय रहते हैं (सुद्धं च सुद्धात्मनं) वे कर्म रहित शुद्ध परमात्मा हैं (न्यान न्यान सुय समं च ममलं) उनके भीतर स्वयं प्रकाशित ज्ञान है व समभाव परम शुद्ध है (चरन च सुद्धं ध्रुवं) व उनमें शुद्ध अविनाशी चारित्र है या वीतराग भाव है (तत्काल रवनं तव च ममलं) वे सदाकाल अपने स्वभावमें तपते रहते हैं यही निर्मल तप हैं (सम्यक्त सार्धं सुयं) वे स्वयं क्षायिक शुद्ध सम्यग्दर्शनके धारी हैं (नन्तानन्त चतुष्टयं सु समय) वे अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, अनन्त वीर्यके धारी स्वसमय या स्वात्मरमण रूप परमात्मा हैं (अन्मोय मुक्ति ध्रुवं) वे सदाकाल मुक्तिके आनन्दका विलास करते हैं।

भावार्थ—सिद्ध भगवान अपूर्व व अनुपम सूर्य हैं जो सदा वीतराग भावसे प्रकाशित रहते हैं। वे रत्नत्रयके स्वामी सदा मोक्षमें रहते हुए आनन्द भोगते हैं।

(आगे गद्य है उसको लिखकर अर्थ किया गया है।)

गति चारि ४ नर्क गति, तियच गति, देवगति, मनुष्य गति नर्कगति निरूपनं।

अर्थ—गति चार हैं–नर्क, तिर्यंच, देव, मनुष्य। उनमेंसे नर्कगतिका विवरण करते हैं—

अर्क न दिस्यते नक, अर्कस्य नन्त सुभावं, अर्क उत्पन्न अर्क १, कंठ कमल ठहकार अर्क २, हितकार अर्क ३, गहिर अर्क ४, गुपित गुहिज अर्क ५।

अर्थ—यहां अध्यात्मदृष्टिसे वर्णन है। नर्क वही है जहां आत्मारूपी सूर्यका या शुद्ध ज्ञान सूर्यका प्रकाश न दिखलाई पड़े अर्थात् मिथ्यादृष्टीका आत्मा नर्कके समान दुःख भोगता है। वह घोर अज्ञानके अन्धकारमें पड़ा हुआ इष्ट वियोग, अनिष्ट संयोग, पीड़ा सम्बन्धी दुःख व विषय भोगोंकी तृष्णाकी दाहमें जलता हुआ महा दुःखी है। इस शुद्धात्मा रूपी सूर्यके अनन्त स्वभाव हैं। सूर्यके ध्यानसे सूर्यका प्रकाश होजाता है। जो कोई अशुद्धात्मा शुद्धात्माका ध्यान करता है वह स्वयं शुद्धात्मा होजाता है ॥ १॥ कण्ठमें कमलको विराजित करके उसके मध्यमें ॐ या श्रीं मन्त्रको रखकर उसके द्वारा शुद्धात्म सूर्यका ध्यान किया जाता है॥२॥ शुद्धात्मा ही सर्व हितकारी सूर्य है। जो मनन करता है उसको सच्ची सुख शांति मिलती है, पाप क्षय होता है, पुण्य बन्धता है ॥ ३॥ शुद्धात्मा परम गम्भीर सूर्य है जिसमें सब लोकालोकका ज्ञान व्याप्त है ॥ ४॥ शुद्धात्मा हरएक आत्मामें गुप्त गुफामें विराजित सूर्य है अर्थात् हरएक आत्माका स्वभाव शुद्ध है। हरएकमें परमात्मापदकी शक्ति भरी है ॥ ५॥

अर्कस्य विसेष–उत्पन्न अर्क १, उत्पन्न उत्पन्न नो उत्पन्न २, दर्स उत्पन्न ३, न्यान विन्यान उत्पन्न ४, उत्पन्न सूषम सुभाव ५, सूषम क्रांति ६, सुषेन रमन ७, सुषेन षिपक ८, दुषेन विलयं गत ९।

अर्थ—आत्मीक सूर्यका विशेष वर्णन करते हैं। वह ज्ञानमई शुद्धात्मारूपी सूर्य सदा उदयरूप है ॥ १ ॥ वह शुद्धात्मा व्यवहारनयसे या पर्यायार्थिकनयसे तो, भव्यके भीतर उत्पन्न होकर उदय होते हैं परन्तु द्रव्यार्थिकनयसे सदा ही हैं, कभी नये उत्पन्न नहीं होते हैं ॥ २ ॥ उनमें अनन्तदर्शन प्रकाशित रहता है ॥ ३ ॥ उनमें अनन्तज्ञान झलकता रहता है। ४ ॥ उनमें अतीन्द्रिय सूक्ष्म स्वभाव प्रगट रहता है ॥ ५ ॥ उनमें सूक्ष्म अतीन्द्रिय ज्ञानमई ज्योतिका प्रकाश है ॥ ६ ॥ वे आनन्दसे आपमें ही रमण करते हैं ॥ ७ ॥ वे अदृश्य होते हुए कर्मरहित क्षायिक भावमें लीन हैं ॥ ८ ॥ उनके सर्व दुःख व चिंताएँ व वांछाएँ विलय होगई हैं ॥ ९ ॥

उत्पन्न न्यान मिलन रञ्ज रमन भय विनस्य नन्द सनन्द रूव १० । उत्पन्न न्यान अषर सुर विंजन पद अर्थति अर्थ समय अर्थ सहकार सदर्थ अवकास अन्मोद दिस्टि, अदिस्टि दिस्टि इष्टि अइष्टि, इष्टि इष्टि ॥ ११ ॥

अर्थ—सिद्ध भगवानमें ज्ञानके साथ आनन्द मिला है। वे ज्ञानानन्दमें मगन हैं, सर्व भयोंसे रहित हैं, परमानन्द स्वरूप हैं ॥ १० ॥ सिद्धमें अविनाशी ज्ञान है तथा अक्षर स्वर व्यंजन पदके द्वारा उसी ज्ञानका ग्रहण होता है। वे रत्नत्रयमई पदार्थ हैं, वे समय या आत्मारूप पदार्थ समयसार हैं, आपमें ही रमणरूप हैं व बड़े सहकारी सत्य पदार्थ है। उनके ध्यानसे हित होता है। उनके अनन्त दर्शन, आनन्द रूप विराजित है। उन्होंने इन्द्रिय अगोचर तत्वको देख लिया है। जो संसारियोंको विषयभोग इष्ट है वह उनको इष्ट नहीं है। जो अतीन्द्रिय सुख इष्ट है वह उनको उपादेय है ॥ ११ ॥

उत्पन्न इस्ट दर्स १, उत्पन्न दर्स इस्ट इस्ट २, उत्पन्न इस्ट सब्द ३, उत्पन्न इस्ट सब्द असब्द ४, उत्पन्न असब्द गुपित ५, उत्पन्न गुपित सब्द हितकार गुपित सब्द हितकार इस्ट हितकार ६ ।

अर्थ—सिद्धोंके प्रिय सम्यग्दर्शनका प्रकाश है ॥ १ ॥ सिद्धोंके परमप्रिय आत्मदर्शनका प्रकाश है ॥२॥ अरहन्त परमात्माके प्रिय दिव्यवाणीका प्रकाश होता है ॥३॥ उस इष्ट दिव्यवाणीसे शब्द रहित आत्मतत्वका प्रकाश होता है ॥ ४ ॥ उससे गुप्त शब्द रहित आत्मतत्व झलकता है ॥ ५ ॥ अरहन्तोंसे गम्भीर गुप्त शब्द प्रगट होते हैं, वे हितकारी गुप्त शब्द हितकारी इष्ट आत्म लाभमें सहायक होते हैं ॥६॥

उत्पन्न हितकार लष्य इस्ट लष्य १, उत्पन्न लष्य इस्ट जीवस्य अहवानं २ ।

अर्थ—हितकारी जानने योग्य निश्चय तत्वका प्रकाश हुआ है ॥ १ ॥ यह जानने योग्य तत्व प्रिय जीव पदार्थका स्वरूप अपनेमें लानेवाला है, झलकानेवाला है ऐसा प्रगट हुआ है ॥ २ ॥

तत्काल रमन १, दर्स अदर्स दर्स २, सब्द असब्द, मब्द ३, वयन अवयन वयन ४, इच्छ अइच्छ इच्छ ५, लष्य अलष्य लष्य ६, पेष्य अपेष्य पेष्य ७, रमन अरमन रमन ८, गहन अगहन गहन ९, धरन अधरन धरन १०, सहन असहन सहन ११, माहन असाहन साहन १२, अवकास अनन्त १३, अवकास समय १४, असमय समय १५, अन्मोद परम १६, अन्मोद पिपक १७, पर्म पिपक १८, मुक्ति १९, परम मुक्ति २०, सुख २१ परम सुख २२ ।

अर्थ—जब जीव तत्व अनुभवमें आता है तब उसी समय उसमें रमण होजाता है ॥१॥ तब इंद्रिय अगोचर आत्माका दर्शन देख लिया जाता है ॥२॥ शब्दोंके द्वारा शब्द रहित आत्माका भाव प्रगट होता है ॥ ३ ॥ वाक्योंके द्वारा वाक्य रहित आत्माका मनन होता है ॥ ४ ॥ भावना करनेसे भावनासे अगोचर आत्मीक तत्व मिल जाता है ॥ ५ ॥ जीव तत्वपर लक्ष्य देनेसे जिसका कोई इंद्रिय व मनमें स्वरूप प्रगट नहीं होता है उस आत्माका स्वरूप जान पड़ता है ॥ ६ ॥ जीव तत्वका दर्शन करनेसे अनुभवगम्य आत्माका दर्शन होता है ॥ ७ ॥ जीव तत्वमें रमण करनेसे जो सिवाय आपके किसीमे रमण नहीं करता है, उसमें रमण होजाता है ॥ ८ ॥ जीव तत्वका ग्रहण करनेसे जो इंद्रिय व मनसे ग्रहण योग्य नहीं है उसका ग्रहण होजाता है ॥ ९ ॥ जीव तत्वको धारणामें लेनेसे जो मनकी धारणासे रहित है उसका धारण होजाता है ॥ १० ॥ जिस तत्वपर आत्मबल लगानेसे जो मन व इंद्रियोंसे नहीं जाना जाता है वह तत्व जम जाता है ॥ ११ ॥ जिसका साधन करनेसे जो किसी बाहरी साधनसे नहीं सिद्ध होता है वह साध लिया जाता है ॥१२॥ उस जीव तत्वमें अनन्त ज्ञानका प्रकाश है ॥१३॥ यह जीवतत्व ज्ञानमय है ॥१४॥ वह आत्मा ऐसा है जिसके समान दूसरा पदार्थ नहीं है व जिसमें दूसरा आत्मा नहीं है ॥ १५ ॥ यह परमानन्दमय है ॥१६॥ यह आनन्दमय क्षायिक भाव सहित है ॥१७॥ वह परम क्षायिक भाव धारी है

॥१८॥ वही मुक्ति है ॥१९॥ वही परम मुक्ति है ॥२०॥ वही सुख है ॥२१॥ वही परम सुख है ॥ २२ ॥

तत्काल उत्पन्न न्यान विन्यान भय विनस्य भय सल्य संक विलयंति १, दिस्टि इस्टि भय विलयंति उत्पन्न भय विलयंति झडव भय विलयंति २, चेत अचेत अचेत ३, गम्य अगम्य गम्य ४, अनन्त गुप्ति रमन ५, सर्वार्थ ६, सर्वन्य ७, सर्वदिष्टि ८, अर्थ ९, अर्थस्य सब्द अर्थ १०, विन्यान विंद सहकार ११, सुन्य प्रवेस १२, मुक्ति सुयं १३ ।

अथ—जिस काल आत्माके ज्ञानमें रमण होता है सर्व भय नाश होजाते हैं, सर्व शङ्काएँ व सर्व माया मिथ्या निदान शल्यें चली जाती हैं ॥ १ ॥ परम प्रिय आत्माका दर्शन होते ही भय दूर होजाते हैं, उदय होनेवाले भय भी चले जाते हैं, शीघ्र ही सर्व भय लुप्त होजाते हैं ॥ २ ॥ वह आत्मा चेतन अचेतन सर्वका चेतनेवाला है ॥ ३ ॥ स्थूल सूक्ष्म सबका जाननेवाला है ॥ ४ ॥ वह अनन्त सूक्ष्म आत्मीक गुफामें रमण करनेवाला है ॥ ५ ॥ वह परम कृतार्थ है, सर्व आत्म प्रयोजनको सिद्ध कर चुका है ॥६॥ वह सर्वज्ञ है ॥७॥ वह सर्वदर्शी है ॥८॥ वही एक पदार्थ है ॥९॥ सर्व पदार्थोंमें वही एक सत्य पदार्थ है ॥१०॥ आत्मज्ञानके अनुभवमें वह सहकारी है ॥११॥ वह निर्विकल्प भावमें, पर रागादिमें शून्यभावमें सदा प्रवेश करता है ॥१२॥ वह स्वयं मोक्षमार्ग है, आत्मा स्वयं ही आपमें रमण करनेसे परमात्मा होता है ॥१३॥

अर्कस्य अर्क सुभाव १, सुयं रमनं २, सुयं दर्स ३, सुयं दिष्टि ४, सुयं इष्टि ५, सुयं न्यान ६, सुयं विन्यान ७, अर्क मुक्ति सुभाव सुयं ८, अर्क प्रगट ९, कमल अक १०—१ ।

अथ—आत्मा अनुपम सूर्य है, प्रकाशमान वीतराग स्वभाव सूर्य समान रखता है ॥ १ ॥ वह स्वयं आपमें रमणशील है ॥ २ ॥ वह स्वयं आपको देखता है ॥ ३ ॥ वह स्वयं आप ही दृष्टि है जिससे आपको देखता है ॥ ४ ॥ वह स्वयं आपको प्यारा है ॥ ५ ॥ वह स्वयं ज्ञान स्वरूप है ॥ ६ ॥ वह स्वयं भेद-विज्ञान स्वरूप है ॥ ७ ॥ वह स्वयं सूर्यसम मोक्षका स्वभाव धारक है ॥ ८ ॥ वह प्रगट सूर्य सदा प्रकाशमान है ॥ ९ ॥ वही कमल समान शांत व प्रफुल्लित सूर्य है ॥ १० ॥

कमल सहकार कण्ठ अर्क १, ठहकारस्य मुक्ति २, सूक्ष्म परिणाम ३, सुकीय सुभाव ४,

सुयं दर्स ५, उत्पन्न दर्स ६, मुक्ति सुभाव दर्स ७, मुक्ति रमन दर्स ८, उत्पन्न श्रीदर्स ९, उत्पन्न मुक्तिश्री दर्स १०, समय सहकार ठहकार ११, मुक्ति सभाव दर्स १२, कललंकृत कम्म विली १३, कमल ठहकार मुक्ति सुभाव सुर्क १४, सूक्ष्म सुयं कलन ठहकार मुक्ति अर्क १५, सुद्ध सुभाव उत्पन्न १६, इस्ट उत्पन्न प्रमाण १७, उद्देस परिणै प्रमाण १८, उत्पन्न उद्देस १९, उत्पन्न परिणै २०, उत्पन्न प्रमाण २१, गम्य अगम्य प्रमाण २२, गम्य अर्क २३, इस्ट अर्क २४, उत्पन्न अर्क २५, प्रमाण अक २६, अर्कस्य कण्ठ अर्क २७--२ ।

अर्थ—कण्ठमें कमलको विराजमान करके उसके भीतर परमात्माका तत्व सूर्यके समान चमकता है ॥ १ ॥ जो स्वरूपमें स्थित होता है उसीको मुक्ति प्राप्त होती है ॥२॥ मुक्ति अतीन्द्रिय सूक्ष्म आत्माका परिणाम है ॥ ३ ॥ मुक्ति अपना ही स्वभाव है ॥ ४ ॥ वह स्वयं देख ली जाती है ॥ ५ ॥ वहां आत्माका दर्शन प्रगट रहता है ॥ ६ ॥ मुक्तिका स्वभाव स्वयं दिखलाई पड़ता है ॥ ७ ॥ वहां दृष्टि मुक्तिमें ही रमणरूप रहती है ॥ ८ ॥ परमैश्वर्यका दर्शन मुक्तिमें होता है ॥ ९ ॥ परसे मोक्षरूप स्वयंका ऐश्वर्य वहां दिखता है ॥ १० ॥ जब शुद्धात्माकी सहायतासे स्वरूपमें ठहरना होता है ॥ ११ ॥ तब मोक्षका स्वभाव दीख पड़ता है ॥ १२ ॥ तब सर्व शरीर व कर्म क्षय होजाते हैं ॥ १३ ॥ आत्मारूपी कमलमें ठहरनेसे मोक्षका स्वभाव अनुपम सूर्यसम झलक जाता है ॥ १४ ॥ आत्मा सूक्ष्म है, अतीन्द्रिय है, जब कोई स्वयं उसमें ठहर जाता है व अनुभव करता है तब मुक्ति सूर्य प्रगट होता है ॥ १५ ॥ तब शुद्ध स्वभाव प्रकाशमान होजाता है ॥ १६ ॥ परमप्रिय केवलज्ञान प्रमाण प्रगट होजाता है ॥ १७ ॥ वही उद्देश्य अर्थात् प्राप्त योग्य पदार्थ है, यही परिणमन रहने योग्य है, यही प्रमाण है ॥ १८ ॥ मोक्ष स्वरूपमें उद्देश्य झलक जाता है ॥१९॥ शुद्ध परिणमन रह जाता है ॥२०॥ सत्य ज्ञान या सत्य पदार्थ रह जाता है ॥२१॥ शुद्धात्माका प्रमाण ज्ञान स्थूल सूक्ष्म सबको जानता है ॥ २२ ॥ वही अनुभव करने योग्य सूर्य है ॥ २३ ॥ वही प्रिय सूर्य है ॥ २४ ॥ वहीं सूर्यका प्रकाश है ॥ २५ ॥ वहीं प्रमाणीक सत्य सूर्य है ॥ २६ ॥ वही सर्व सूर्योंमें महान् श्रेष्ठ सूर्य है ॥ २७ ॥

हितकार अर्क १, हितमित परिणै कोमल अर्क २, सुभाउ अर्क ३, हितकार अर्क अर्क ४, विंद विन्यान अर्क ५, आगन्तु अर्क ६, अर्घ ऊर्ध अर्क अर्क ७, हितकार अर्क ८, हुंतकार अक ९, रमन्न अर्क १०, अर्क सुभाव हितकार अर्क ११, रंज हितकार रंज १२, जिन रमन १३, अमिय रमन १४, जिननाथ नन्द आनन्द परमानन्द अर्क १५, सुभाव सहकार दिस्टि १६, हितकार उत्पन्न रमन हितकार अर्क १७, हितकार मुक्ति १८, हितकार सिद्धि १९, हितकार सिद्ध बुद्ध २०, हितकार अर्क केवल सुभाव २१, हितकार तव २२. तत्काल उत्पन्न न्यान हितकार २३, धृति उत्पन्न न्यान हितकार २४, परम तत्तु तिअर्क प्रमाण दिस्टि हितकार २५, दर्स अदर्स दस हितकार २६, दिस्टि अदिस्टि दिस्टि हितकार २७, इस्टि अइस्टि इस्टि २८, लब्धि अलब्धि लब्धि २९, अर्क सुभाव केवल लब्धि ३०, लब्धि मुक्ति ३१, लब्धि अर्कस्य हितकार अर्क ३२--३ ।

अर्थ—आत्मारूपी सूर्य हितकारी है ॥ १ ॥ यह ज्ञान सूर्य आत्मा कोमल स्वभावी स्वहितमें व अपनी मर्यादामें लीन है ॥ २ ॥ यह स्वभाव ही से ज्ञान सूर्य है ॥ ३ ॥ यह हितकारी सर्व सूर्योंमें प्रधान ज्ञानमई सूर्य है ॥ ४ ॥ यह स्वानुभव रूप सूर्य है ॥ ५ ॥ सम्यग्दृष्टीके भीतर अकस्मात् प्रकाशमान होने-वाला सूर्य है ॥६॥ आत्माके नीचेसे ऊपर तक सर्व प्रदेशोंमें ज्ञान सूर्यका प्रकाश है ॥७॥ यह आत्माको सुखदाई ज्ञान सूर्य है ॥ ८ ॥ यह कर्मोंको होम करनेवाला सूर्य है ॥ ९ ॥ यह आपसे आपमें रमण करने-वाला ज्ञान सूर्य है ॥ १० ॥ यह ज्ञान स्वभावी आत्मा हितकारी सूर्य है ॥ ११ ॥ इसमें आनन्दवर्द्धक आनन्द है ॥ १२ ॥ यह कर्म विजयी भावमें रमण करता है ॥ १३ ॥ यह आनन्दामृतमें रमण करता है ॥१४॥ यही आत्मा जिनेन्द्र है व आनन्दमग्न परमानन्दमई सूर्य सम प्रकाशित है ॥ १५ ॥ आत्मदृष्टि या समदृष्टि स्वभावके प्रकाशमें सहकारी है ॥१६॥ शुद्ध हितकारी भावको उदय रूप है, उसमें रमण करने-वाला वह हितकारी ज्ञान सूर्य है ॥१७॥ इसीमें हितकारी मुक्ति रहती है ॥ १८ ॥ यहीं हितकारी सिद्धि

वसती है ॥ १९ ॥ यह आत्मा हितकारी है सिद्ध है व ज्ञानी है ॥ २० ॥ यह हितकारी सूर्य केवलज्ञान स्वभावी है ॥२१॥ उसीमें तपना हितकारी तप है ॥२२॥ इसीमें रमण करनेसे उसी समय स्वात्म ज्ञान हितकारी झलकता है ॥ २३ ॥ इसीमें धैर्य या थिरता रखनेसे हितकारी ज्ञान प्रगट होता है ॥ २४ ॥ यही परम तत्व है, रत्नत्रयमई है, यही सम्यग्ज्ञानकी प्रमाण दृष्टि है, यही मोक्षमार्गमें हितकारी है ॥ २५ ॥ इंद्रिय मनसे देखनेयोग्य व न देखनेयोग्य पदार्थोंके दर्शनमें यही हितकारी है ॥ २६ ॥ यही सम्यग्दृष्टि व मिथ्यादृष्टि भावके देखनेमें हितकारी है ॥२७॥ इसीके प्रेमसे उस तत्वमें प्रेम होता है जो अज्ञानियोंको इष्ट नहीं है ॥२८॥ इसीके लाभसे अपूर्व लाभका लाभ होता है ॥२९॥ यह ज्ञान सर्व स्वभाव हीसे केवलज्ञानकी लब्धिको रखनेवाला है ॥३०॥ इसीसे मुक्तिकी प्राप्ति होती है ॥३१॥ इसीकी प्राप्तिसे आत्मारूपी सूर्यको हितकारी ज्ञानका प्रकाश होता है ॥ ३२ ॥

अर्कस्य गहिर अर्क १, गम्य अगम्य गम्य अर्क २, इच्छ अइच्छ इच्छ अर्क ३, ग्रहण अग्रहण ग्रहण अर्क ४, लष्य अलष्य लष्य अर्क ५, ध्रुवस्य उत्पन्न ध्रुव अर्क ६, रहण उत्पन्न रहण अर्क ७, सहन असहन संहन उत्पन्न अर्क ८, साहन असाहन साहन उत्पन्न अर्क ९, रिष्टि अरिष्टि उत्पन्न अर्क १०, रिष्टि अरिष्टि रिष्टि अर्क समय ११, इष्टि असमय इष्टि समय इष्टि अर्क १२, सहइष्टि असह इष्टि सहइष्टि उत्पन्न अर्क १३, उत्पन्न इष्टि उत्पन्न अर्क १४, उत्पन्न इष्टि अर्क पद १५, अपद पद उत्पन्न अर्क १६, अर्थति अर्थ अर्थ उत्पन्न अर्क १७, अर्थ समर्थ अर्थ उत्पन्न अर्क १८, अर्थ समय अर्थ असमय समय उत्पन्न अर्क १९, सहकार अर्थ असहकार सहकार उत्पन्न अर्क २०, अर्थ अवकास अनन्त अवकास उत्पन्न अवकास अर्थ २१, तदर्थ उत्पन्न सदर्थ अर्क २२, अर्थ अर्थ अन्मोद अर्थ २३, अर्थ अन्मोद अन्मोद अर्थ उत्पन्न अर्क २४, अर्थ षिपक अर्क २५, षिपक उत्पन्न षिपक उत्पन्न अर्क २६, मुक्ति हितकार उत्पन्न मुक्ति उत्पन्न अर्क २७; हितस्य उत्पन्न हित अर्क हितकार अर्क २८–४

अर्थ—आत्मारूपी सूर्य गम्भीर ज्ञानका धारी है ॥ १ ॥ यह ऐसा ज्ञान सूर्य है जिसमें स्थूल सूक्ष्म सर्व पदार्थ एक साथ झलकते हैं ॥ २ ॥ यह ऐसा ज्ञान सूर्य है जिसमें जगतको इष्ट व अनिष्ट सर्व ही समभावसे इष्ट रूप वस्तु स्वभावसे झलक रहा है ॥ ३ ॥ यह ऐसा ज्ञान सूर्य है जिसमें जगतको हेय या उपादेय सर्व पदार्थ समरूपसे झलक रहे हैं ॥ ४ ॥ यह ऐसा ज्ञान सूर्य है जिसमें इन्द्रियोंसे देखने योग्य व न देखने योग्य सब प्रकाशमान है ॥५॥ अविनाशी आत्माके भीतर ही अविनाशी ज्ञान सूर्य झलकता है ॥६॥ परसे भिन्न परम शुद्ध आत्माके अनुभवसे ही परसे भिन्न शुद्ध ज्ञान सूर्यका प्रकाश होता है ॥७॥ जो योगी सहने योग्य व न सहने योग्य सर्व उपसर्गोंको सहन करता है, उसीके ज्ञान सूर्यका प्रकाश होता है ॥८॥ जो योगी सुगम साधन व कठिन साधन दोनोंको समभावसे साधन करता है उसीके ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥९॥ जो अनुपम आत्मध्यान रूपी तलवार चलाते हैं वे ही कर्मोंका नाश करके ज्ञान सूर्यको प्रगट करते हैं ॥१०॥ यह आत्मा रूपी सूर्य स्वयं तलवार रूप है। साधन अवस्थामें कर्म काटनेका काम करती है, साध्य अवस्थामें तलवारका काम न करके भी बनी रहती है ॥११॥ यह वह प्यारा ज्ञान सूर्य है जो अपने सर्व ज्ञेयोंको झलकानेमें इष्ट है, चाहे वह आत्मा हो व अनात्मा हो ॥१२॥ जो योगी सहने योग्य व असहने योग्य सबमें एक साथ समभाव रखता है उसीके ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥१३॥ जब हितकारी शुक्लध्यान होता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥१४॥ जब इष्ट शुद्धोपयोग प्रगट होता है तब ही आत्म-सूर्यका पद झलकता है ॥१५॥ सर्व पदोंमें अनुपम पद जो शुद्धात्म पद है उससे ही ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥१६॥ नौ पदार्थ व रत्नत्रय धर्ममें निश्चय करनेसे व उनमें झलकते हुए शुद्धात्माके अनुभवसे ज्ञान सूर्यका प्रकाश होता है ॥१७॥ जो समर्थ कारण रूप शुद्ध कारण समयसारका लाभ है उससे ज्ञान सूर्य झलकता है ॥१८॥ आत्मा पदार्थको अनात्मा पदार्थसे भिन्न करके शुद्धात्मानुभवसे ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥१९॥ यद्यपि नौ पदार्थका विचार सहकारी है परन्तु इसका भी सहकारित्व छोड़कर जो केवल शुद्धात्माका अनुभव है उसीसे ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ २० ॥ आत्मा पदार्थमें केवलज्ञान शक्तिरूप रहता है, उसीका प्रकाश होना ज्ञान सूर्यका उदय है ॥२१॥ सत्य आत्मा पदार्थका अनुभव करनेसे सच्चा ज्ञान सूर्य झलकता है ॥२२॥ आत्मामें वारवार आनन्दका अनुभव होनेसे आत्माका प्रकाश होता है ॥ २३ ॥ आत्मा रूपी पदार्थमें आनन्द लेते लेते परमानन्द भावसे ही ज्ञान सूर्य झलकता है ॥ २४ ॥

आत्माके द्वारा क्षायिक भाव प्रगट होता है तब क्षायिक ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ २५ ॥ क्षायिक सम्यक्ती क्षपक श्रेणीपर चढकर चार घातीय कर्मोको क्षय करके ज्ञान सूर्यको झलकाता है ॥ २६ ॥ यह केवलज्ञान सूर्य ही मुक्ति लाभमें हितकारी है, इसीसे मुक्ति प्रगट होती है ॥ २७। यह ज्ञान सूर्य परम हितकारी है ॥ २८ ॥

सहकार गुपित अर्क १, गुहित गुपित न्यान उत्पन्न अक २, गुपित विन्यान उत्पन्न अर्क ३, गुपित कमल उत्पन्न अक ४, गुपित रमण रंज नन्द चिदानन्द परम परमानन्द उत्पन्न अर्क ५, जिन रमण जिन रंज जिननाथ रमण उत्पन्न अर्क ६, तीर्थंकर प्रभाव तिअर्थ आयरन रमण अन्मोय अवलवली इस्टि परमिस्टि चौवीस चतुष्टे चौवीस अन्मोद रमन अवल विषय अनन्तविली उत्पन्न अर्क ७, सहकार सहजोपनीत सहज सुकीय सूक्ष्म उत्पन्न अर्क ८, आचरण चरण न्यान चरण दर्स अवहि सम्मत उवसम वीज अनन्त उत्पन्न अर्क ९, विन्यान वीय पय पदार्थ वीय उत्पन्न अर्क १०, अंगदि अंग स्थान दिस्टि उत्पन्न अर्क ११, दिप्ति अनन्त विसेप दिस्टि अनन्त विसेष उत्पन्न अर्क १२, लष्य अलष्य लष्य उत्पन्न अर्क १३, तिअर्थ अर्थ उत्पन्न तीर्थंकर सुभाइ अर्क १४, पदवी सुद्ध उत्पन्न अर्क १५, योग आचरण उत्पन्न अर्क १६, श्री अनन्त श्री सम्यक्चरण उत्पन्न अर्क १७, अर्कस्य गुपित गुहित उत्पन्न अर्क १८—५।

अर्थ—ज्ञान सूर्य आत्मा गुप्त अनुभवगम्य मोक्षमार्गमें सहकारी है ॥ १ ॥ जो अपने ज्ञानको आत्माकी गुफामें लीन कर देता है, आत्मामय होजाता है, वहीं ज्ञान सूर्य उत्पन्न होता है ॥ २ ॥ जो भेदविज्ञान द्वारा आत्मामें लीन होता है उसीके ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ३ ॥ जो केवल समान प्रफुल्लित शुद्ध आत्मामें गुप्त होजाता है, वहीं ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥४॥ जो तीन गुप्तिको रोककर आपमें रमण करता है तब आनन्द होता है। यह ज्ञानादि बढ़ते हुए परमानन्द या अनन्त सुख होजाता है तब ज्ञान सूर्य उत्पन्न होता है ॥५॥ जो वीतरागभावमें रमण करता है वहीं आनन्द मानता है। शुद्ध परमा-

त्मामें रमण करता है उसीके ज्ञान सूर्य उत्पन्न होता है ॥ ६ ॥ जो तीर्थंकरके प्रभावसे रत्नत्रय धर्मको समझकर उनमें आचरण करता है, रम जाता है, आनन्द पाता है तथा अनन्तबली प्रिय परमेष्ठी, चौवीस तीर्थंकरोंके अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तवीर्य, अनन्त सुख इन चार चतुष्टय व अन्य चौवीसों तीर्थंकरोंके गुणोंका स्मरण कर आनन्द भोगता है उसमें मगन होता है उसके भीतरसे अत्यन्त बलवती विषयवासनाकी अनन्तशक्ति क्षय होजाती है तब ज्ञान सूर्यका प्रकाश होता है ॥ ७ ॥ सहकारी ऐसा जो सहजमें झलकनेवाले स्वाभाविक अपने ही सूक्ष्म अतीन्द्रिय भावमें जो ठहरता है उसके ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥८॥ जो चारित्रमें आचरण करता है, ज्ञानमें आचरण करता है, उसे अवधिदर्शन होजाता है, वहीं सम्यग्दर्शन होता है, शांतभाव होता है, तब वीर्य अनन्त प्रगट होता है, तब ही केवलज्ञान सूर्य चमकता है ॥ ९ ॥ भेदविज्ञानके बीजसे व श्रुतज्ञानके पद द्वारा आत्मा पदार्थके अनुभवसे ज्ञान सूर्य उत्पन्न होता है ॥ १० ॥ द्वादशांग वाणीके मनन करनेसे ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥११॥ जब अनन्तज्ञान व अनन्तदर्शन प्रगट होता है तब आत्मा सूर्यमय होजाता है ॥ १२ ॥ जब इन्द्रिय व मनसे जानने योग्य स्थूल व न जानने योग्य सूक्ष्मको जान लिया जाता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ १३ ॥ रत्नत्रयमें रमण करनेसे तीर्थंकरके स्वभावके समान ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ १४ ॥ जब शुद्धोपयोगकी पदवीपर पहुँचता है तब ज्ञान सूर्य झलकता है ॥ १५ ॥ जब योगाभ्यास किया जाता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ १६ ॥ जब आत्माके अनन्त ऐश्वर्यमें भलेप्रकार आचरण होता है तब ज्ञान सूर्य उत्पन्न होता है ॥ १७ ॥ सूर्यके समान आत्माकी गुप्त गुफामें जब थिरता होती है तब ज्ञान सूर्य उत्पन्न होता है ॥ १८=९ ॥

अर्कस्य पंच अर्क १, सुभाव उत्पन्न अर्क २, अर्क सुभावेन अनन्त चतुष्टय छयालीस गुण सिद्ध सुद्ध तीर्थंकर उत्पन्न अर्क सुभाव ।

अर्थ—आत्मारूपी ज्ञान सूर्यके पांच तरहके विवेचन ऊपर किये गये। यह ज्ञान सूर्य स्वयं स्वभावसे पैदा होता है। आत्मारूपी सूर्यके स्वभावसे अनन्त चतुष्टय सहित छियालीस गुण सिद्ध स्वभावी शुद्ध वीतराग तीर्थंकर भगवानमें प्रगट होते हैं, वे सूर्य स्वभावको झलका चुके हैं।

अर्क न द्रिस्यते सुभाव सव सुभाव अक न द्रिस्यते नर्क गत पंचम छठम सप्तम नक गति नीची इतर सुभावे नरक प्रथम द्वितीय तृतीय चतुर्थ प्रभावना भवति। नर्क ७।

अर्थ—जहां ज्ञान सूर्य नहीं दिखलाई पड़े वही नर्क है, जहां आत्माका सर्व स्वभाव न दिखलाई पड़े वही नर्क है। पांचमा, छठा, सातमा नर्क बहुत नीच है क्योंकि वहांसे निकलकर कोई मोक्ष नहीं जा सक्ता। पहले, दूसरे, तीसरे व चौथेसे निकलकर मोक्ष जासक्ता है, इसलिये ये चार उच्च हैं। सर्व नर्क ७ हैं।

अर्क सुभाव दिष्टि, इष्टि सुभाव, अनन्त दिस्टि एको उद्देस महूर्त समय भय सल्य संक आसा स्नेह लाज लोभ भय गारव आलस प्रपञ्च विभ्रम जनरञ्जन कलरञ्जन, मनरञ्जन दर्सन मोहंध आवर्ण न्यान दर्सन मोह अन्तर सुभाव सहित जेनं केनापि अर्क सुद्ध औकास संक सल्य एको उद्देस न द्रिस्यते सर्व भाव सहित एको उद्देस सहित प्रथम नरय प्रवेसं भवति। सुद्ध दिस्टि अर्क पंचमओ संपूर्ण महूर्त्त भय विलीय कछु संका जे जीव असुद्ध दिस्टि अर्क सुभाव एको उद्देस न द्रिस्यते। सर्व सहकार महूर्त समय प्रथम नरय।

अर्थ—ज्ञान सूर्य स्वभावका दर्शन अपना प्रिय स्वभाव है, अनन्त दर्शन सहित है, एक देश दो घड़ी भी जिनको नहीं दिखता है, जो भय, शल्य, शङ्का, आशा, स्नेह, लाज, लोभ, घमण्ड, आलस्य, जगप्रपञ्च, भ्रमजाल, मानवोंको रागी करनेका भाव, शरीरके सुखमें मगन रहनेका भाव, मनको राजी रखनेका भाव, दर्शन मोहसे अज्ञान भाव, ज्ञानावरण, दर्शनावरण, चारित्रमोह व अन्तरायके उदयका स्वभाव। इत्यादिके वशीभूत हैं, उनको शुद्ध ज्ञान सूर्य शङ्का व शल्यके कारण कुछ भी नहीं दिखता है, वे जीव प्रथम नरकमें जाते हैं। शुद्ध सम्यग्दर्शन सहित पांच प्रकार ज्ञान सूर्य पूर्ण स्वभाव भयरहित है, उसको जो शङ्काशील होनेसे संयमी भी एक देश नहीं अनुभव कर सक्ते हैं, क्योंकि वे मिथ्यादृष्टि हैं। इसलिये वे ऊपर कथित भावोंके कारण महूर्तके भीतर नरकायु बांधकर प्रथम नर्क जाते हैं।

नोट—यहां नर्कगति सम्बन्धी २४ स्थान कहे हैं जिनको हम पहले नकशेमें देचुके हैं।

सुद्ध द्दष्टि क्षीन सुभाई अर्क सुभाव अनन्त अन्तर रहित दुःष असहनी सुभाइ अर्क न द्दश्यते नर्क ।

अर्थ—नर्क वही है जहां शुद्ध सम्यग्दर्शन सहित क्षायिक स्वभावधारी सूर्य स्वभावके समान, वीतराग, अन्तर रहित अनन्त कालतक दुःखको नहीं प्राप्त करनेका स्वभाव अर्थात् अनन्त सुख स्वभावी सूर्यसम आत्माका अनुभव नहीं होता है ।

जे जीवा अर्क अनन्त सुभाव सुद्ध दिस्टि एकोद्देसन द्रिस्यते ते नर्क ।

अर्थ—जिन जीवोंको अनन्त स्वभावधारी शुद्ध दर्शन सहित ज्ञान सूर्यमई आत्मा नहीं दिखलाई पड़ता है, वे ही नर्कमें रहनेवाले जीव हैं, नारकीके समान हैं ।

नर्क गति आउ गलण तुच्छ रहै आगतस्य दिष्टि आउ क्षीण मनुष्य गति ।

अर्थ—नर्कगतिमें आयुके भीतर जब छः मास शेष रहते हैं, तब वहां यदि मनुष्य आयु बांधलें तो वहांसे निकलकर नर्कायु क्षय होनेपर मनुष्य गतिमें जीव आसक्ता है ।

अर्क सुभाव ग्रहण अनन्त विसेष न्यान प्रकारेण न्यान विसेष सुयं सद्भाव निरूपणं ।

अर्थ—जिसको ज्ञान सूर्य स्वभावी आत्माका ग्रहण या अनुभव होजाता है उसमें अनन्त विशेष होते हैं, ज्ञानके अनेक भेदोंमें ज्ञानके विशेष होते हैं । उसका स्वयं यथार्थ स्वभाव कहा जाता है ।

अर्क सुभाव दर्स १, अदर्स दर्स उत्पन्न अर्क २, दर्स सर्व परिणाम उत्पन्न अर्क ३, दर्स कमल सुभाव उत्पन्न अर्क ४, भय विनस्य परिणाम सुभाव उत्पन्न अर्क ५, दर्स कमल कन्द अग्रु उत्पन्न अर्क ६, दर्स गिरिकन्द अग्र परिणाम उत्पन्न अर्क ७, दर्स अंगदि अंग सर्वन्य परिणाम सुभाव उत्पन्न अर्क ८, दर्स कमल कलन न्यान विन्यान परिणाम उत्पन्न अर्क ९, न्यान योग उत्पन्न दिस्टि उत्पन्न अर्क १०, इस्ट परमेस्टि उत्पन्न अर्क ११, अवधिलै उत्पन्न अक १२, अन्यान अन्मोय उत्पन्न षिपक अर्क १३, अन्यान विरोधक दिस्टि अर्क १४, अन्यान विलयन्ती उत्पन्न

अर्क १५, न्यानेन न्यान अन्मोद रमण कम्म विलयं गत १६, उत्पन्न मिलि उत्पन्न कम्म विली उत्पन्न अर्क सुभाइ १७, उत्पन्न दर्स हितयार सहकार दिस्टि उत्पन्न अर्क १८, मनपर्जय सुभाव उक्त दर्स उत्पन्न अर्क १९, लब्धि केवलन्यान विमल अर्क २०, न्यान अनन्त दर्स अनन्त लब्धि उत्पन्न अर्क २१, दान लाभ लब्धि अनन्त उत्पन्न अर्क २२, भोग उपभोग लब्धि उत्पन्न अर्क २३, वीर्ज विन्यान समकित सुभाव समय सहकार समय बाधा रहित २४ ।

अर्थ—ज्ञान सूर्यमें आत्माके स्वभावका दर्शन होता है ॥ १ ॥ जब इंद्रिय व मनसे न देखने योग्य आत्माका अनुभव होता है व ज्ञान सूर्यका प्रकाश होता है ॥ २ ॥ जब सर्व गुण व पर्यायोंका समूह रूप आत्माका दर्शन होता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ३ ॥ जब प्रफुल्लित कमलके समान स्वभाव धारी आत्माका दर्शन होता है तब ज्ञान सूर्यका उदय होता है ॥ ४ ॥ जब सर्व भय रहित निर्भय स्वभावमें परिणमन होता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ५ ॥ जब आत्मारूपी कमलके मूल स्वभावका अनुभव होता है तब ज्ञान सूर्य झलकता है ॥ ६ ॥ जब आत्माके सम्यग्दर्शन रूपी पर्वतकी गुफामें विश्राम होता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ७ ॥ जब द्वादशांग वाणीके द्वारा सर्वज्ञ स्वभावी आत्माका अनुभव होता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ८ ॥ जब आत्मारूपी कमलमें ठहरकर भेद विज्ञानके द्वारा आत्मानुभव होता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ९ ॥ ज्ञान योगके द्वारा आत्मदर्शन होनेसे ज्ञान सूर्य प्रकाश होता है ॥ १० ॥ पांच परमेष्ठियोंके स्वरूपके ध्यानसे ज्ञान सूर्य झलकता है ॥ ११ ॥ अवधि-ज्ञानको लेकर ज्ञान सर्य एक देश प्रगट होता है ॥ १२ ॥ अज्ञानमें रमण भाव जो पैदा होता है उसके क्षय कर देनेसे ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ १३ ॥ जब मिथ्या ज्ञानको रोकनेवाली सम्यग्ज्ञानकी दृष्टि पैदा होती है तब ज्ञान सूर्यका उदय होता है ॥ १४ ॥ अज्ञानका क्षय होनेपर ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥१५॥ ज्ञानसे ज्ञानके भीतर आनन्दित होकर रमण करनेसे कर्मोंका क्षय होता है ॥ १६ ॥ जैसे जैसे ज्ञानकी शुद्धि बढ़ती है कर्मोंका आस्रव दूर होता है व ज्ञान सूर्यका स्वभाव प्रगट होता है ॥१७॥ सम्यग्दर्शनके प्रकाशसे हितकारी व सहकारी आत्माका दर्शन होता है उससे ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ १८ ॥ मनः-

पर्यंय ज्ञान स्वभावके प्रगट होनेपर जब आत्म दर्शन होता है उससे ज्ञान सूर्य चमकता है ॥ १९ ॥ उस विमल ज्ञान सूर्यमें केवलज्ञानकी लब्धि प्रगट होती है ॥ २० ॥ उस ज्ञान सूर्यमें अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शनकी लब्धि होजाती है ॥ २१ ॥ उस ज्ञान सूर्यमें अनन्त दान व अनन्त लाभकी लब्धि प्रगट होती है ॥ २२ ॥ उस ज्ञान सूर्यमें अनन्त भोग अनन्त उपभोगकी लब्धि प्रगट होती है ॥ २३ ॥ उस ज्ञान सूर्यमें अनन्त वीर्य, क्षायिक सम्यक्त, क्षायिक चारित्रकी लब्धि होजाती है। ऐसी नौ लब्धियोंका धारक ज्ञान सूर्य केवली अरहन्त भगवान बाधा रहित निराकुल रहता है ॥ २४ ॥

सहकार उत्पन्न अर्क २५, राग जन रंजन विली उत्पन्न अर्क २६, कलरंजन दोष विली उत्पन्न अर्क २७, मनरंजन गारव विली उत्पन्न अर्क २८, न्यान आवर्न विली उत्पन्न अर्क २९, दर्सन आवर्न विली उत्पन्न अर्क ३०, मोहन आवन विली उत्पन्न अर्क ३१, न्यान अन्तराय विली उत्पन्न अर्क ३२, आशा स्नेह लाज लोभ गारव आलस प्रपंच विभ्रम विलयं गत उत्पन्न अर्क ३३, मिथ्या कषाय मल दोष विली उत्पन्न अर्क ३४, भय सल्य संक विलयंति उत्पन्न अर्क ३५, दर्स अनन्त दर्स सुभाव उत्पन्न अर्क ३६, अनन्त सुभाव दर्स नृत अन्मोद न्यान उत्पन्न अर्क ३७, अनन्त दर्स विसेष नृत अन्मोद न्यान उत्पन्न अर्क ३८, लष्य अलष्य लष्य अन्मोय न्यान उत्पन्न अर्क ३९, जीवंता अनन्त परिणाम नृत ध्रुव न्यान अन्मोद तदि अनन्त न्यान अन्मोद चरण सुभाव अर्क ४०, दर्सन न्यान चरण भेद उत्पन्न अर्क ४१, सम्यक् दर्स लोय अवलोक सम्यक् उत्पन्न अर्क ४२, लोकालोक नृत ध्रुव न्यान सम्यक् उत्पन्न अर्क ४३, लोक नृत्य आचरण न्यान अन्मोद उत्पन्न अर्क ४४, सम्यक् अवलोक नृत्य चरण अनन्त दर्स अर्क ४५, अनन्तानन्त दर्स नृत अनन्त न्यान उत्पन्न अर्क ४६, अनन्त नृत सुभाव आचरण चरण न्यान अन्मोद अवल बली विषय गलिणं न्यान चरण वीजे विन्यान उत्पन्न अर्क ४७, श्री अनन्तानन्त उत्पन्न श्री हितकार श्री सहकार श्री मुक्ति श्री समदर्स श्री समकित दर्स उत्पन्न अर्क ४८, श्री

समकित ध्रुव रमण न्यान जिननाथ अन्मोद न्यान उत्पन्न न्यान अर्क ४९, श्री सम्यक् चरण चरिय गुपित न्यान अन्मोद अवल चरण श्री सम्यक् चरण नन्तानन्त चतुष्टय सहित उत्पन्न अर्क ५०, विमल केवल न्यान विमल सुभाव अर्क ५१, श्री मुक्ति श्री अन्मोद न्यान श्री सुभाव मुक्ति ५२, श्री अर्थ तिअर्थ श्री अन्मोद न्यान तीर्थंकर भवति तिअर्थ आवरेण तीथकर मुक्ति प्रवेस सिद्ध तीर्थंकर अर्क ५३, सुभावेन न्यान विन्यान सुद्ध अर्क ५४, सुयं षिपक भावेन उत्पन्न नंतानन्त नंत चतुष्टै सहित अर्क ५५, हितकार न द्रिस्यते स नर्क गतिं ५६, अनन्तानन्त दुःख दारुण असहनी संसारिणो सुभाव नरकादि दुःख संतत अनन्त विसेष नरक दुतिय ५७।

अर्थ—ध्यानकी सहायतासे ज्ञान सूर्य प्रकट होता है ॥ २५ ॥ जनसमूहको राजी रखनेका राग जब विला जाता है तब ज्ञान सूर्य उत्पन्न होता है ॥ २६ ॥ शरीरके सुखमें मगनताका दोष जब दूर होजाता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ २७ ॥ मनके भीतर मद् रखके प्रसन्न होनेका भाव जब चला जाता है तब ज्ञान सूर्य झलकता है ॥ २८ ॥ ज्ञानावरण कर्मके क्षय होनेपर ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥२९॥ दर्शनावरण कर्मके क्षय होनेपर ज्ञान सूर्य चमकता है ॥ ३० ॥ मोहनीय कर्मके क्षय होनेपर ज्ञान सूर्य झलकता है ॥ ३१ ॥ जब ज्ञानादिमें अन्तराय कारक कर्म क्षय होता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ३२ ॥ भोगोंकी आशा, स्नेह, लज्जा, लोभ, माया, घमण्ड, प्रमाद, प्रपंच, भ्रमभाव ये सब जब विला जाते हैं तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ३४ ॥ सात भय, तीन शल्य व शंकाएँ जब चली जाती हैं तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ३५ ॥ जब अनन्त दर्शन स्वभाव धारी आत्माका अनुभव होता है तब ज्ञान सूर्य प्रकाश करता है ॥ ३६ ॥ अनन्त दर्शन स्वभावी आत्माका सत्य स्वरूप अनुभव करते हुए आनन्द झलकता है उससे जो ज्ञान होता है उससे ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ३७ ॥ अनन्त दर्शनधारी आत्मामें विशेष लीनतासे जो सच्चा आनन्द व ज्ञान होता है उससे ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥३८॥ इन्द्रिय मनसे गोचर व अगोचर पदार्थोंको जानते हुए आनन्दमई ज्ञानसे ज्ञान सूर्य चमकता है ॥ ३९ ॥ सदा जीनेवाले सत्य अविनाशी अनन्त शक्तिमें परिणमन करनेवाले आत्माका ज्ञानमें जब आनन्दका अनुभव होता है तब

...वास ठाण।

॥ ३३ ॥

अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख, वीतराग चारित्र स्वभावधारी ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ४० ॥ सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्र ऐसे भेदरूप रत्नत्रयके द्वारा ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ४१ ॥ जब सम्यक्-दर्शनके प्रकाशसे लोकालोकको द्रव्य दृष्टिसे यथार्थ देखा जाता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ४२॥ लोकालोकके भीतर सत्य अविनाशी पदार्थोंका जब ज्ञान होता है तब ज्ञान सूर्य झलकता है ॥ ४३ ॥ लोकके द्रव्योंको सत्य देखकर स्वरूपमें आचरण करनेसे जो ज्ञानानन्द होता है उससे ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ४४ ॥ सम्यक्चारित्रके द्वारा लोकको सत्य देखते हुए वीतराग भावसे अनन्त दर्शन गुणधारी ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ४५ ॥ जब यथार्थ अनन्तदर्शन व अनन्तज्ञान प्रगट होते हैं तब ज्ञान सूर्य प्रकाशित होता है ॥४६॥ आत्माके अनन्त सत्य स्वभावमें आचरण करनेसे ज्ञानानन्द झलकता है तब बड़ी बलवती विषयवासना गल जाती है तब ज्ञानका वीर्य सहित अनुभव करनेसे ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥४७॥ अनन्तानन्त शक्तिधारी परम हितकारी परम सहकारी परमैश्वर्यधारी मोक्षरूपी लक्ष्मीको समभावसे देखते हुए जब सम्यक् आत्मानुभव होता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥४८॥ जब अशुद्ध सम्यग्दर्शनमें निश्चित रूपसे रमण करते हुए श्री जिनेन्द्रके स्वभावके भीतर आनन्द सहित ज्ञान रमण करता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ४९ ॥ जब सम्यग्दर्शनका आचरण करते हुए गुप्त आत्मज्ञानमें आनन्द प्रगट होता है, तब अनुपम बल सहित चारित्र होता है, उसीमें भलेप्रकार रमण करनेसे अनन्त ज्ञानादि चार चतुष्टय सहित ज्ञान सूर्य प्रगट होजाता है ॥५०॥ निर्मल केवलज्ञान स्वभावको रखनेवाला ज्ञान सूर्य है ॥५१॥ श्री मोक्ष-लक्ष्मीके आनन्द सहित व ज्ञान सहित आत्माका स्वभाव ही मुक्ति है ॥ ५२ ॥ रत्नत्रय सहित परम पदार्थ आत्मामें जो आनन्द सहित ज्ञानानुभव करते हैं, वे तीर्थंकर होजाते हैं, वे ही तीर्थंकर निश्चय रत्नत्रयका आचरण करते हुए मोक्षमें प्रवेश करके सिद्ध तीर्थंकर होजाते हैं, वे ही ज्ञान सूर्य हैं ॥ ५३ ॥ शुद्ध ज्ञान सूर्यमें स्वाभाविक ज्ञान रहता है ॥ ५४ ॥ स्वयं क्षायिक भाव सहित होनेसे उस सूर्यके अनन्त ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य चतुष्टय प्रकाशमान रहते हैं ॥ ५५ ॥ ऐसा हितकारी सूर्य जहां न दिखलाई पड़े वहीं नर्क है ॥ ५६ ॥ जहां अनन्तानन्त भयानक दुःख है जिनका सहन करना कठिन है ऐसी सांसारिक अवस्था दुःखोंकी परिपाटीके अनन्त भेदोंको रखनेवाली सो ही दूसरा नर्क है ॥ ५७ ॥

भावार्थ—जहां आत्मज्ञान नहीं है वहीं अनन्त क्लेश है, वहीं नर्क है, नर्क समान असहनीय कष्टोंको मिथ्यात्वी जीव पाते हैं।

जे जीव सुद्ध दिष्टिनो उत्पन्न, अर्कस्य सर्व विसेष अनन्तानन्त हितकार। उत्पन्न न्यान १, सुद्ध न्यान २, समय न्यान ३, परिणै न्यान ४, उत्पन्न न्यान ५, न्यान हितकार ६, न्यान सहकार ७, न्यान विन्यान ८, न्यान पद न्यान ९, अर्थ न्यान १०, तिअर्थ न्यान ११, समर्थ न्यान १२, समय अर्थ न्यान १३, सहकार न्यान १४, अवकास न्यान १५ अन्मोद न्यान १६, कम्म षिपक न्यान १७, मुक्ति सुभाव अर्क विसेष दृष्टते १८, सर्व सर्वेपि हितकार अर्क १९, किछु विसेष किछु ससंक, सत्य, असत्य, आसा, स्नेह, लाज, भय, गारव, आलस, प्रपंच, विभ्रम, जनरंजन, राग कलरंजन दोष मनरंजन गारौ दर्सन मोहंध न्यानावर्णि दसनावर्णि मोहन आवर्न अंतर सहकार किछु सुभाव अर्क सुभाव महूर्त दोइ अर्क सुभाव विलीयते सभव्य नकगता, दुतीय नर्क पतनं भवति—जावत नर्क दूजे तावत व अर्क सुभाव सहित दिष्टि, दुष असहनी सहित स्थिति आउ विलीयते तुच्छ आउ प्रवर्तते आउ गति चय मनुष्य गति ॥ २० ॥

अर्थ—जिस जीवको शुद्ध सम्यग्दर्शनका लाभ नहीं है वह ज्ञान सूर्यको ठीक नहीं जानता। ज्ञान सूर्य अनन्तानन्त गुण पर्यायका धारी है, हितकार है, जहां यथार्थ ज्ञान झलकता है ॥ १ ॥ जो शुद्ध ज्ञान स्वरूप है ॥२॥ आत्मज्ञान सहित है ॥३॥ स्वसंवेदन रूप है ॥४॥ ज्ञानके प्रकाश सहित है ।५॥ आत्म हितकारी ज्ञान रूप है ॥६॥ केवलज्ञानको सहकारी ज्ञान सहित है ॥७॥ भेद विज्ञान मय है ॥८॥ जहां ज्ञानमें ज्ञानकी स्थिति है ॥ ९ ॥ जो परम पदार्थके ज्ञान सहित है ॥ १० ॥ रत्नत्रय सहित ज्ञानमय है ॥११॥ समर्थ ज्ञानमय है ॥१२॥ परमात्म ज्ञान सहित है ॥१३॥ आत्माको सहायक ज्ञानमय है ॥१४॥ अनन्त ज्ञान शक्ति धारक है ॥१५॥ आनन्द सहित ज्ञानमय है ॥१६॥ कर्म क्षयकारी ज्ञान सहित है ॥१७॥ जहां मोक्षका स्वभाव विशेष ज्ञान सूर्य अनुभवमें आता है ॥१८॥ सर्व प्राणियोंका हितकारी सूर्य जान

नेमें आता है ॥१९॥ ऐसे ज्ञानै सूर्य आत्माका स्वरूप कुछ विशेष जान ले कि यह तो जगत रूप है, जड़ कुछ है ही नहीं, या कुछ शंकारूप जाने कि आत्मा है या नहीं या कैसा है, सत्य असत्य मिला हुआ जाने। ऐसा मिथ्यादृष्टी जीव आशा, स्नेह, लज्जा, भय, मद, प्रमाद, प्रपञ्च, भ्रम, जन रंजन राग, शरीर रंजन दोष, मन रंजन भेदमें फंसा, दर्शन मोहके उदयसे अन्ध ज्ञानावर्ण, दर्शनावर्ण, चारित्र मोह, अन्तरायके उदय सहित होता हुआ दो घड़ी भी ज्ञान सूर्यके स्वभावको अनुभव नहीं करता है। उसका ज्ञान स्वभाव मलीन होता है। वह भव्य जीव नर्क जाता है, दूसरे नर्कमें पतन पाता है। जबतक दूसरे नर्कमें है तबतक मिथ्यात्व भावमें ज्ञान सूर्यके स्वभावको अनुभव नहीं कर सक्ता है, असह्य कष्ट भोगता है। स्थिति पूरी करके जब छः मासकी आयु शेष रहती है तब मनुष्य आयु बांधकर आयुके क्षयके पीछे मनुष्यगतिमें आकर जन्म धारण करता है ॥ २० ॥

अवधिलै उत्पन्न अर्क सुभाव १, सर्व हितकार न्यान अन्मोद २, सुयं उत्पन्न न्यान अन्मोद ३, षिपक अन्यान विरोध दिस्टि ४, न्यान अन्मोद अवलवली विषय गली ५, अन्मोद अन्मोद न्यान ६, अवलवली न्यान ७, अन्मोद न्यान समय न्यान ८, अवगाहन न्यान वाधा रहित ९, अवगाहन अगुरुलघु सुकीय सुभाव समय सहकार १०, तारणतरण हित मित परिनै ११, कोमल विसेष अर्क सुभाव १२, उक्त अन्मोद अनन्तानन्त १३, सत्य संक विवर्जित राग विगत पुष्य विली गारौ षिपक १४, दर्स अदर्स दर्स १५, माया मिथ्या निदान सल्य रहित १६, कषाय मल विली १७, कषाय जिन १८, कषाय राग जनरंजन रमण आनन्द सहित विषय मन विली १९, दर्स अनन्त दर्स न्यान अनंत नृत चरण अनंत चरण चारित्र २०, श्री समय दर्स २१, श्री समय हितकार २२, नृत श्री सम चरण चरित्र हितकार २३, यस्य स्थान कर्मादि सहित तस्य स्थान न्यान अन्मोद कम्म विलयंति २४, हितकार न्यान २५, अन्मोद न्यान २६, दिस्टि न्यान २७, इस्टि न्यान २८, रस्टि न्यान २९, रिस्टि न्यान ३०, सम इस्टि न्यान ३१, सह

इस्टि न्यान ३२, उत्पन्न दिस्टि न्यान ३३, सहकार दिस्टि न्यान ३४, अवकास इस्टि न्यान ३५, अनन्त इस्टि न्यान ३६, अन्मोद इस्टि न्यान ३७, कम्म विलीतं मुक्ति इस्टि न्यान ३८, सब्दपर न्यान ३९, असब्दसर न्यान ४०, गुपित सर न्यान ४१, प्रगट सर कमल हितकार ४२, स्थान हितकार ४३, अर्थ हितकार ४४, परिणाम हितकार ४५, उद्देस उत्पन्न हितकार ४६, परिणै उत्पन्न हितकार ४७, प्रमाण उत्पन्न हितकार ४८, उत्पन्न उत्पन्न हितकार ४९, उत्पन्न हितकार हितकार ५०, उत्पन्न सहकार हितकार ५१, उत्पन्न विन्यान हितकार ५२, उत्पन्न सहकार हित-कार ५३, उत्पन्न जिन हितकार ५४, उत्पन्न परम जिन हितकार ५५, हितकार कोडाकोडी हितकार ५६, न्यान सुन्य सुन्य प्रवेस ५७, कोडाकोडी सहकार हितकार ५८, कोडि अन्मोद न्यान ५९, संक सल्य भय विली उत्पन्न केवल सुभाइ ६०, मनपर्जय दिप्ति ६१, केवल अन्मोद न्यान ६२, तिअर्थ आयरन तीर्थङ्कर भवति ६३, तिअर्थ हितकार आयरन तीर्थंकर ६४, सुयं कलित सुक्कलेस्या तीथकर भवति ६५, अर्कस्य अनन्त विसेष दिस्यते न्यान विन्यान अर्कं सुभाव ६६, किछू संक सल्य राग दोष वंधान सहकार न्यान उत्पन्न अर्क सुभाव किछु विसेष महूर्त त्रितियं अन्तर न्यान उत्पन्न अर्कं न दिस्यते विस्मरण भवति तदि त्रितिय नरय पतनं भवति ६७।

अर्थ—मनुष्य जन्ममें कुछ कालकी मर्यादा पीछे सम्यग्दर्शन होता है तब ज्ञान सूर्यका प्रकाश होजाता है ॥ १ ॥ सर्व हितकारी ज्ञानमें आनन्द झलक जाता है ॥ २ ॥ वह ज्ञानानन्द स्वयं आत्मासे परकी सहायता विना होता है ॥ ३ ॥ अज्ञानकी व विपरीत ज्ञानकी श्रद्धा मिट जाती है ॥ ४ ॥ ज्ञानमें आनन्द अनुभव करनेसे बड़ी बलवती विषयसुखकी वासना गल जाती है ॥ ५ ॥ तब ज्ञानमें वारवार आनन्द आता है ॥ ६ ॥ ज्ञान अनुपम बलधारी होजाता है ॥ ७ ॥ ज्ञानानन्दमें आत्माका ज्ञान होता है ॥ ८ ॥ यह अनुभव होता है कि ज्ञान अनन्त शक्तिधारी बाधा रहित है ॥ ९ ॥ आत्माके स्वभावमें अव-

गाहन गुण है, अगुरु लघु गुण है, यह अगुरु लघु गुण आत्माके स्वभाव परिणमनमें सहकारी है ॥ १० ॥ इस आत्मामें अरहन्त पदके होनेकी शक्ति है जो तारणतरण है व हितमित वाणी कहते हैं ॥ ११ ॥ इस ज्ञान सूर्यका स्वभाव परम कोमल मार्दव गुण सहित है ॥ १२ ॥ आत्मामें अनन्त आनन्द भरा है ॥ १३ ॥

आत्माके स्वभावमें शल्य, शंका, भय नहीं है, न कोई राग है, न दुःख है, न कोई मद है ॥ १४ ॥ आत्मा अतीन्द्रिय भावको देखनेवाला है ॥ १५ ॥ इसमें माया, मिथ्या, निदान शल्यें नहीं हैं ॥ १६ ॥ कषायका मैल भी नहीं है ॥ १७ ॥ यह कषायोंको जीतनेवाला है ॥ १८ ॥ इसके अनुभवसे कषायका राग व लोगोंको राजी करनेका आनन्द व विषयोंकी इच्छा व मनकी चञ्चलता विला जाती है ॥ १९ ॥ अनुभवमें ऐसा आता है कि यह आत्मा अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान व यथाख्यात चारित्र व अनन्त काल तक स्वरूपा-चरण चारित्रका धारी है ॥ २० ॥ यह आत्माके ऐश्वर्यको आपसे देखनेवाला है ॥ २१ ॥ आत्माके विम्बके प्रकाशके लिये यही आत्मज्ञान हितकारी है ॥ २२ ॥ यथार्थ परम सम भाव रूप चारित्रमें हितकारी है ॥ २३ ॥ जिसके प्रदेशोंमें कर्मोंकी सत्ता होती है उसके प्रदेशोंसे कर्म ज्ञानानन्दके अनुभवसे क्षय होजाते हैं ॥ २४ ॥ आत्मज्ञान बड़ा हितकारी है ॥ २५ ॥ आनन्दमय ज्ञान है ॥ २६ ॥ यही सम्यग्ज्ञान है ॥ २७ ॥ यही प्रिय ज्ञान है ॥ २८ ॥ यही रसीला स्वादिष्ट ज्ञान है ॥ २९ ॥ यही ज्ञान कर्म क्षयको खड्गके समान है ॥ ३० ॥ यही समभाव सहित प्रिय ज्ञान है ॥ ३१ ॥ यह सदा साथ रहनेवाला प्रिय ज्ञान है ॥ ३२ ॥ इसीसे दर्शनज्ञान बढते हैं ॥ ३३ ॥ दर्शनज्ञानके प्रकाशको यही सहकारी है ॥ ३४ ॥ अनन्त ज्ञानके लाभके लिये यही प्रिय ज्ञान है ॥ ३५ ॥ इसके प्रिय ज्ञानमें अनन्त शक्ति है ॥ ३६ ॥ यह प्रिय ज्ञान आनन्द सहित है ॥ ३७ ॥

यह वह प्रिय आत्मज्ञान है जिससे कर्मका क्षय करके मोक्षका लाभ होता है ॥ ३८ ॥ शब्दोंके द्वारा शब्दोंके सरोवरमें मगन होनेसे यह आत्मज्ञान प्रगट होता है ॥ ३९ ॥ शब्द रहित मनन रूपी सरोवरमें डूबनेसे भी यह आत्मज्ञान प्रगट होता है ॥ ४० ॥ मनन रहित गुप्त आत्मामें लय होनेसे यह आत्मज्ञान प्रगट होता है ॥ ४१ ॥ इसीके द्वारा प्रकाशित आत्मा रूपी सरोवरमें आप ही कमलके समान हितकारी प्रगट होता है ॥ ४२ ॥ जिस पदमें हो वहीं यह आत्मज्ञान हितकारी है ॥ ४३ ॥ आत्मा पदार्थका यह ज्ञान परम हितकारी है । ४४ ॥ शुद्ध परिणामोंके रखनेमें यह आत्मज्ञान हितकारी

है ॥ ४५ ॥ इसीसे अपना मोक्षका हितकारी प्रयोजन सिद्ध होता है ॥ ४६ ॥ इसीसे हितकारी आपसे आपमें परिणमन रहता है ॥ ४७ ॥ यही आत्मज्ञान केवलज्ञान आदि प्रमाण ज्ञानोंके उत्पन्न करनेमें हितकारी है ॥ ४८ ॥ इस आत्मज्ञानसे सदा ही हितकारी परिणति होती है ॥ ४९ ॥ इससे बारबार हित होता है ॥ ५० ॥

यह आत्मज्ञान सर्व हितमें सहायक है ॥ ५१ ॥ विशेष ज्ञानके होनेमें यह आत्मज्ञान हितकारी है ॥ ५२ ॥ आत्मीक शुद्ध पदके उत्पन्न होनेमें यह ज्ञान हितकारी है ॥ ५३ ॥ इसीसे वीतरागी साधुभाव पैदा होता है ॥ ५४ ॥ इसी आत्मज्ञानके अनुभवसे जिनेन्द्र अरहन्त होता है ॥ ५५ ॥ करोड़ों हितकारी ऋद्धियोंके उत्पन्न होनेमें यह ज्ञान हितकारी है ॥ ५६ ॥ वीतराग शून्य ज्ञानके द्वारा रागादिसे शून्य शुद्ध आत्मामें लीनता होती है ॥५७॥ करोड़ों प्रकारके हितोंमें यह आत्मज्ञान सहायक है ॥ ५८ ॥ इसी आत्मज्ञानसे करोड़ शक्तिधारी आनन्द होता है ॥ ५९ ॥ इसी आत्मज्ञानके अनुभवसे जब सर्व शंकाएँ शल्यें व भय विला जाते हैं, तब केवलज्ञानका स्वभाव प्रगट होजाता है ॥ ६० ॥ इसी आत्मज्ञानसे मनःपर्यय तक झलक जाता है ॥६१॥ इसीसे शुद्ध केवल आनन्दमय ज्ञान होजाता है ॥६२॥

इसीके द्वारा रत्नत्रयमें आचरण करनेसे तीर्थंकर कर्मका बन्ध होता है तब ही तीर्थंकर होता है ॥६३॥ इसी आत्मज्ञानसे रत्नत्रयमें यथार्थ आचरण करनेसे तीर्थंकर होजाता है ॥६४॥ जहां स्वयं आपसे आपका अनुभव हो व शुक्लेश्या हो, ऐसा तेरहवां गुणस्थान हो वहीं तीर्थंकर आत्मज्ञानसे ही होता है ॥६५॥ तब अरहन्त तीर्थंकरमें ज्ञान सूर्यके अनन्त विशेष दिखलाई पड़ते हैं। ज्ञानमयी सूर्यका स्वभाव झलक जाता है ॥६६॥ जब कोई तीर्थंकर नामकर्म बांधनेवाले भव्यको जो क्षयोपशम सम्यक्ती हो, क्षायिक न हो, कोई शंका या शल्य पैदा होजाती है। रागद्वेष सहित ज्ञान होजाता है, सूर्य स्वभाव मलीन होजाता है। मिथ्यात्वका उदय आजाता है। तीन मुहूर्त कुछ अधिक तक अंतरंगमें ज्ञान सूर्यका अनुभव नहीं रहता है। वह आत्माके शुद्ध स्वभावको भूल जाता है तब नर्क आयु बांधनेवाला तीर्थंकर नाम कर्मकी सत्तावाला जीव तीसरे नर्क चला जाता है।

भावार्थ—तीसरे नर्कसे निकल कर तीर्थंकर होसक्ता है। ऐसा क्षयोपशम सम्यक्ती मनुष्य मरनेके मुहूर्त पहले मिथ्यादृष्टी होजाता है, फिर नर्क जाकर एक अंतर्मुहूर्त अपर्याप्त अवस्थामें रहता है। पर्याप्त

होनेपर सम्यक्ती होजाता है। इसी अपेक्षासे यहां कहा गया है कि तीन मुहूर्त कुछ अधिक तक वह ज्ञानी अज्ञानी होजाता है, आत्माका अनुभव नहीं कर पाता है।

जदि त्रितिय अर्क तदि अर्क सुभाव सहित दुःख दिस्टि उत्पन्न सहित अनन्तानन्त सहित अर्कस्य न्यान सहकार स्थिति आउ बंधान षिपक तुच्छ उत्पन्न मुक्त अर्क सुभावेन चै मनुष्य गति उत्पन्न।

अर्थ—तीसरे नर्क जाकर वहां ज्ञान सूर्यका अनुभव सम्यक्त होनेपर होजाता है। तीसरे नर्कका अनन्त दुःख तो वह जीव सहता है परन्तु आत्मज्ञान साथमें रहता है। नर्ककी स्थिति पूरी करके छः मास शेष रहनेपर मनुष्य आयु बांधकर सम्यग्दर्शनके साथ आत्मज्ञानको लिये हुये नर्कसे चयकर मनुष्य गतिमें उत्पन्न होता है।

ते अर्क रमण १, न्यान सहकार अर्क २, न्यान कमल अर्क ३, न्यान उक्त अर्क ४, न्यान परिणै अर्क ५, न्यान प्रमाण अर्क ६, न्यान वयण अर्क ७, न्यान दर्स अर्क ८, न्यान सुभाव अर्क ९, न्यान रंज अर्क १०, न्यान रमण अर्क ११, न्यान आनंद अर्क १२, न्यान अन्मोद अर्क १३, न्यान हितकार अर्क १४, न्यान सहकार अर्क १५, न्यान पयोग अर्क १६, न्यान दिस्टि अर्क १७, न्यान कमल अर्क १८, न्यान कलन अर्क १९, न्यान मिलन अर्क २०, न्यान इस्टि अर्क २१, न्यान रस्टि अर्क २२, न्यान रिस्टि अर्क २३, न्यान सम इस्टि अर्क २४, न्यान सह इस्टि अर्क २५, न्यान उत्पन्न इस्टि अर्क २६, न्यान सहकार अर्क २७, न्यान अवकास अर्क २८, न्यान अनंत अर्क २९, न्यान अन्मोद अर्क ३०, न्यान षिपक अर्क ३१, न्यान लंकृत अर्क ३२, न्यान विन्यान अर्क ३३, न्यान मई अर्क ३४, न्यान अर्क ३५, अर्क नंत प्रकार ३६, अर्क सुयं रमण अर्क ३७, अर्क सुयं मिलन अर्क ३८, अर्क अन्मोद मुक्ति अर्क ३९, आचरण न्यान

अन्तर रहित अर्क ४०, सहकार रहित अर्क ४१, सल्य रहित अर्क ४२, भय रहित अर्क ४३, मल रहित अर्क ४४, कषाय रहित अर्क ४५, मिथ्या रहित अर्क ४६, विषय रहित अर्क ४७, विली मन विषय अर्क ४८, अन्यान विली अर्क ४९, न्यान अन्मोद तीर्थंकर ५०, तिअर्थ आयरण तीर्थंकर ५१, सहकार अर्क तीर्थंकर ५२, त्रिलोकनाथ तीर्थंकर ५३, अन्मोद न्यान ५४।

अथ—मनुष्य गतिमें तीर्थंकर नाम कर्म बन्ध प्राप्त सम्यग्दृष्टी जीव ज्ञान सूर्यमें रमण करते हैं ॥१॥ उनका आत्म सूर्य ज्ञानी होता है ॥ २ ॥ ज्ञानमय प्रफुल्लित कमल समान ज्ञान सूर्य होता है ॥ ३ ॥ जैसा कहा गया है वैसे ज्ञान सहित आत्म सूर्य उनको झलकता है ॥ ४ ॥ उनका ज्ञान सूर्य ज्ञानमें परिणमन करता है ॥ ५ ॥ ज्ञान प्रमाण ज्ञान सूर्य प्रकाशता है ॥ ६ ॥ ज्ञानमें एकमेक सटा हुआ ज्ञान सूर्य झलकता है ॥ ७ ॥ ज्ञान दर्शन सहित ज्ञान सूर्य प्रकाशता है ॥ ८ ॥ ज्ञान स्वभावी सूर्य प्रगट भासता है ॥ ९ ॥ ज्ञानमें रंगा हुआ सूर्य चमकता है ॥ १० ॥ ज्ञानमें रमण करता हुआ सूर्य दिखता है ॥ ११ ॥ ज्ञानानन्दमई सूर्य झलकता है ॥ १२ ॥ ज्ञानमें मगन सूर्य प्रकाशता है ॥ १३ ॥ ज्ञानमय हितकारी सूर्य चमकता है ॥ १४ ॥ आत्मज्ञानकी सहायता सहित आत्म सूर्य अनुभवमें आता है ॥ १५ ॥ ज्ञानोपयोगमय आत्म-सूर्य रहता है ॥ १६ ॥

ज्ञानकी दृष्टि सहित सूर्य चमकता है ॥ १७ ॥ ज्ञानमय कमल सहित सूर्य झलकता है ॥ १८ ॥ ज्ञानके अनुभव सहित सूर्य होता है ॥ १९ ॥ ज्ञानके साथ मिला हुआ सूर्य दिखता है ॥ २० ॥ ज्ञानका इष्ट रखनेवाला सूर्य होता है ॥ २१ ॥ ज्ञानके आस्वादमें मगन सूर्य होता है ॥ २२ ॥ ज्ञानरूपी खड्ग सहित सूर्य दिखता है ॥ २३ ॥ ज्ञान व समभावको इष्ट रखनेवाला सूर्य चमकता है ॥ २४ ॥ ज्ञानका प्रेमी सूर्य होता है ॥ २५ ॥ ज्ञानकी वृद्धि करता हुआ ज्ञान प्रेमी सूर्य होता है ॥ २६ ॥ ज्ञानका सहकारी सूर्य दिखता है ॥ २७ ॥ ज्ञानमें गर्भित सूर्य चमकता है ॥ २८ ॥ अनन्त ज्ञान सहित सूर्य झलकता है ॥ २९ ॥ ज्ञानमें मगन सूर्य चमकता है ॥ ३० ॥ ज्ञानसे कर्मोंको क्षय करनेवाला आत्म सूर्य चमकता है ॥ ३१ ॥ ज्ञानसे भूषित सूर्य दिखता है ॥ ३२ ॥ भेदविज्ञान सहित सूर्य होता है ॥ ३३ ॥ ज्ञानमई सूर्य चमकता है ॥ ३४ ॥ ज्ञानी सूर्य दिखता है ॥ ३५ ॥

विचार करते हुये आत्मा सूर्यके अनेक प्रकार होसकते हैं ॥ ३६ ॥ आत्म सूर्य आपमें ही रमण करनेवाला है ॥ ३७ ॥ आत्मा सूर्य आपसे आपमें मिलनेवाला है ॥ ३८ ॥ आत्म सूर्य आनन्द सहित परसे भिन्न दिखता है ॥ ३९ ॥ ज्ञान स्वभावमें निरन्तर आचरण करनेवाला सूर्य झलकता है ॥ ४० ॥ परकी सहायता रहित केवल आत्म सूर्य चमकता है ॥४१॥ यह ज्ञानमई आत्म सूर्य शल्य रहित है ॥४२॥ यह सूर्य भय रहित है ॥ ४३ ॥ यह सूर्य रागादि मल व कर्ममल रहित है ॥ ४४ ॥ यह सूर्य कषाय रहित है ॥ ४५ ॥ यह सूर्य मिथ्यात्व रहित है ॥ ४६ ॥ यह सूर्य विषयवासना रहित है ॥४७॥ इस सूर्यके पास विषयोंकी चिन्तासे रहित मन है ॥ ४८ ॥ इस सूर्यमें अज्ञान नहीं है ॥४९॥ यह तीर्थंकर पदधारी ज्ञानमें मगन है ॥ ५० ॥ यह तीर्थंकर रत्नत्रयमें आचरण करते हैं ॥ ५१ ॥ सहकारी ज्ञान सूर्य सहित तीर्थंकर हैं ॥ ५२ ॥ यह तीन लोकके नाथ तीर्थंकर है ॥ ५३ ॥ आनन्द व ज्ञानमई हैं ॥ ५४ ॥

भावार्थ—मनुष्य तीर्थंकर सम्यग्दृष्टीका स्वरूप झलकाया है। सम्यग्दृष्टी तीर्थंकर जन्मसे ही स्वात्मानुभवके अतिशय प्रेमी होते हैं, उनको आत्मीक आनन्द निरन्तर रहता है, वे गृहस्थमें निर्लेप रहते हैं। दृष्टि स्वरूपपर रहती है।

अर्कस्य अर्क सुभाव संस्थान विन्यान विंद अर्क १, षिपक अर्क २, सुयं स्कंध अर्क ३, ध्रुव रमण अर्क ४, कुन्यान विली अर्क ५, स्थान हितकार अक ६, पद उत्पन्न अर्क ७, उत्पन्न उत्पन्न अर्क ८, चेत उत्पन्न अर्क ९, स्थान आवरण अर्क १०, इच्छ गम्य अगम्य गुपित रमण अर्क ११, पद ईजजाता उत्पन्न तिअर्थ अर्क १२, मध्यमपद षट् रमण अर्क १३, उत्पन्न उत्पन्न न्यान विन्यान अर्क १४, अर्कस्य इष्ट दर्स अर्क १५, विंद सुभाव इस्ट अर्क १६, तदि उत्पन्न अर्क १७, तदि षिपक अर्क १८, न्यान विन्यान अर्क १९, अर्क सुभाव भय विलय विषय विलय अर्क २०, अर्कस्य मुक्ति अर्क २१, तदि अर्क सुभाव न दिस्टते तदि नर्कस्य वीय पततं। जदि अर्क सुभाव सम्पूर्ण न दिस्टते तदि नर्क अन्तर रहित दुष्य अनन्त सहित संसा- व २२, जदि अर्क अर्क सुभावेन अनन्त विसेष प्रति पूर्ण दिस्टयन्ति जदि कौन एक

सुभाव सम्यक्ती जीव सल्यसंक भय कषाय रागदोष गारौ दर्सन मोहंध विसेषं पर्जाय अर्क महूर्त ४ चौऊन दिस्टते विस्मर भवति तदि नर्क चौथे पतनं करोति २३ ।

अर्थ—ज्ञान सूर्यका ज्ञान सूर्यरूप ही स्वभाव होता है, आकार चिदाकार होता है। वह स्वानुभव रूपी सूर्य है ॥ १ ॥ वह कर्म क्षयकारक सूर्य है ॥ २ ॥ स्वयं गुण समूह अभेद आत्म सूर्य है ॥ ३ ॥ वह शाश्वत स्वभावमें रमण करनेवाला सूर्य है ॥ ४ ॥ सर्व मिथ्याज्ञानका नाश करनेवाला सूर्य है ॥ ५ ॥ हर जगह या पदमें वह हितकारी आत्म सूर्य है ॥ ६ ॥ परमात्मपदका प्रकाशक ज्ञान सूर्य है ॥ ७ ॥ ज्ञानके अनुभवसे ज्ञान सूर्य उदय होता है ॥ ८ ॥ स्वसंवेदन ज्ञानसे ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ९ ॥ वह अपने ही प्रदेशोंमें आचरण करनेवाला सूर्य है ॥ १० ॥ जिसमें स्थूल व सूक्ष्म पदार्थ सब झलकते हैं, ऐसे गुप्त स्वभावमें रमण करनेवाला आत्मसूर्य है ॥ ११ ॥ सरल समभावके द्वारा प्रगट जो रत्नत्रय स्वभाव उससे प्रगट होनेवाला आत्म सूर्य है ॥ १२ ॥

द्वादशांग वाणीके मध्यम पदोंके सार जो छः पद ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः हैं। इस मंत्रके द्वारा आत्मामें रमण करनेवाला सूर्य है ॥ १३ ॥ भेद विज्ञानसे ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ १४ ॥ जब ज्ञान सूर्यको प्रेमसे देखा जाता है तब वह झलकता है ॥ १५ ॥ स्वसंवेदन स्वभावमें मगन सूर्य है ॥ १६ ॥ जब ज्ञान सूर्य झलकता है ॥ १७ ॥ तब कर्मोंको क्षय करता हुआ झलकता है ॥ १८ ॥ वह ज्ञानमई सूर्य है ॥ १९ ॥

आत्माके स्वभावमें रहनेसे सर्व भय व सर्व पंचेन्द्रियोंके विषयके भाव विला जाते हैं तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ २० ॥ ज्ञान सूर्यके अनुभवसे ही कर्मोंसे मुक्त सूर्य प्रगट होता है ॥ २१ ॥ जिसको ऐसा शुद्ध ज्ञान सूर्य नहीं दिखलाई पडता है वह मिथ्यात्वभावसे नर्ककी आयु बांधकर नर्कमें गिरता है। जिस किसीको पूर्ण व यथार्थ आत्मारूपी सूर्यका अनुभव नहीं होता है ऐसा नारकी संसारी मिथ्यात्वी जीव नर्कके निरन्तर अनन्त कष्टोंको सहता है ॥ २२ ॥

जिस किसी सम्यक्ती जीवको अनन्त गुण पर्यायधारी आत्मसूर्यका दर्शन या अनुभव होता है, वही जीव मिथ्यात्वके उदयसे, शल्यमें, भयमें, शङ्कामें, व अनन्तानुबन्धी कषायमें, रागद्वेषमें, मदमें, दर्शन मोहकी अन्धतामें, अपने परिणामोंको चार महूर्त तक रखता है, आत्माको भूल जाता है, पहले

वह नर्कायु बांध चुका है, इसलिये मिथ्यात्व अवस्थामें मरकर वह चौथे नर्कमें जाता है ॥ २६ ॥

भावार्थ—यहां किसी क्षयोपशम या उपशम सम्यक्तीका वर्णन है। जो मिथ्यात्व गुणस्थानमें नर्कायु बांध चुका है वह नर्क जानेके पहले दो व तीन मुहूर्त मिथ्यात्वी होजाता है और तब मरकर चौथे नर्क चला जाता है।

अर्क सुभाव दिस्टि सम्पूर्ण लै उत्पन्न नक स्थिति क्षीण आउ तुच्छ आऊ मुक्त मानवियः दिस्टि सुभाव द्रव्य सहित चै उत्पन्न मनुष्यगति गमनु १, अर्क सुभाव उत्पन्न उत्पन्न अर्क २, हितकार उत्पन्न उत्पन्न हितकार अर्क ३, कमल ठहकार अर्क ४, विमल इस्टि अर्क ५, विमल उत्पन्न अर्क ६, जान इस्टि अर्क ७, जान उत्पन्न अर्क ८, पद परम तत्तु परम तत्त ९, परम तत्त विसेप उत्पन्न १०, अवधि न्यान सुरमण ११, मुक्ति सुभाव संसार सरणि १२, न्यान विन्यान सरयंति सरणि १३, मुक्त सभाव न्यानस्य अन्तरं विमुक्त विलयति १४, मुक्ति सुभाव भय सल्य सकराग दोप गारो दर्स मोहन्ध आवरण घात कम्म मल कषाय विषया विलयंति १५, सुद्ध बुद्ध ममल केवल न्यान विसेप सुभावेन न्यान अन्मोद, वंदन मुक्त न्यान अन्मोद अवलवली विपय विलय न्यानेन न्यान अन्मोद मुक्ति गत मुक्त सुभाव मुक्ति सिद्ध धवलि १६।

अर्थ—नर्कमें जाकर पर्याप्त अवस्थामें कभी सम्यग्दर्शन होजावे तब ज्ञान सूर्यका स्वभाव अनुभवमें आजावे। उस सम्यक्तको लिये हुए रहे। आयु क्षय होते हुए जब छः मास बाकी रहें तब मनुष्यायु बांधकर सम्यग्दर्शन सहित व नर्क दुःख सहित मरकर मनुष्य गतिमें उत्पन्न होजाता है ॥ १ ॥ ऐसा सम्यग्दृष्टी जीव मनुष्य गतिमें अपने ज्ञान सूर्यके अनुभवसे ज्ञानका प्रकाश बढ़ाता है ॥ २ ॥ हितकारी आत्मानुभवसे हितकारी ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ३ ॥ आत्मादर्शी कमलमें ज्ञान सूर्यको देखता है ॥४॥ कर्मको क्षय करनेवाला क्षायिक सम्यक्तरूपी ज्ञान सूर्य होजाता है ॥५॥ इस क्षायिक भावसे ज्ञान सूर्यका प्रकाश चमकता है ॥ ६ ॥ मोक्षका मार्गरूप हितकारी ज्ञान सूर्य अनुभवमें आता है ॥ ७ ॥ उस स्वानुभवके मार्गसे आत्म सूर्यका प्रकाश बढ़ता है ॥ ८ ॥ परम तत्त्वका अनुभव करते हुए

उत्तम भाव झलकता है ॥ ९ ॥ परम तत्वके अनुभवसे विशेष शुद्ध भाव होता है ॥ १० ॥ अवधिज्ञान प्रगट होजाता है। सुअवधिकी निर्मलतामें रमण करता है ॥ ११ ॥ मोक्षका स्वभाव संसार नाशक अनुभवमें आता है ॥ १२ ॥ ज्ञान स्वभाव बढ़ता जाता है ॥ १३ ॥ मुक्त स्वभाव प्रगट होता जाता है ज्ञानका विघ्नकारक भाव व सांसारिक भाव क्षय होजाता है ॥ १४ ॥ मोक्ष स्वभावमें रमणसे भय, शल्य, शङ्का, राग, द्वेष, मद, मोह, कर्म, ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अन्तराय, चारों घातीय कर्म, सब कषाय, मिथ्याभाव सर्व क्षय होजाता है ॥ १५ ॥ तब आत्मा शुद्ध निर्मल केवलज्ञान स्वभावसे प्रगट होता है। ज्ञानमें मगन रहता है, सर्व बन्धनसे छूटकर ज्ञानकी मगनतासे अनन्तबली होता है। सर्व विषय विला जाते हैं। ज्ञानके द्वारा ज्ञानमें आनन्द भोगता हुआ मोक्षमें जाकर मोक्ष स्वभावमें रहकर मुक्त व सिद्ध होजाता है।

भावार्थ—चौथे नर्कसे निकलकर सम्यक्ती जीव तीर्थंकर नहीं होता है, परन्तु सामान्य केवली होकर सिद्ध गति पालेता है।

तथाहि अर्क न दिस्यते नर्क जीव अनन्तानन्त संसार भ्रमणं करोति अनन्त दुःख जदि अर्क सुभाव भ्रमत भ्रमत अर्क सुभाव उत्पन्न तदि मनुष्य भवतु। मनुष्य मन षिपत अर्क सुभाव न्यान विन्यान कालंतर विली अर्क सुभाव मुक्ति गमनो भवतु। नरकस्य सुभाव भेद गति–१।

अर्थ—जैसा ऊपर कहा है–इस तरह जिस आत्माको ज्ञान सूर्य आत्माका दर्शन नहीं होता है, वही जीव नर्कमें है। वास्तवमें मिथ्यादृष्टी नारकी समान है वह संसारमें अनन्तानन्त कालतक भ्रमण करता है, अनन्त दुःख सहन करता है। स्वभाव तो आत्माका सूर्यसम बना रहता है। यदि भ्रमण करते करते कभी मिथ्यात्वके अन्धकारके हटनेपर आत्म सूर्यका स्वभाव प्रगट होजाता है, सम्यक्ती होजाता है और मनुष्य जन्ममें होता है तब वह मनुष्य संकल्प विकल्परूपी मनका क्षय करके ज्ञान सूर्यका स्वभाव प्रगट कर देता है। केवलज्ञानी होजाता है। कालको पूर्ण करके सूर्य स्वभावमें झलकता हुआ मोक्षमें पधार जाता है। इस तरह नर्क अवस्थाका स्वभाव मिट जाता है।

द्वितीय अध्याय।

एकेन्द्रिय स्थावर चौवीस स्थान।

(१) गति–तिर्यंच।
(२) इंद्रिय–एकेन्द्रिय।
(३) काय–पांच- पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति।
(४) योग ३-औदारिक, औ० मिश्र, कार्मण।
(५) वेद १–नपुंसक।
(६) कषाय २३–(२५–स्त्री० पुंवेद)
(७) ज्ञान २–कुमति, कुश्रुत।
(८) संयम १–असंयम।
(९) दर्शन १–अचक्षु।
(१०) लेश्या ३–कृष्ण, नील, कापोत।
(११) भय २–भव्य, अभव्य।
(१२) सम्यक्त–मिथ्यात्व।
(१३) सैनी १–असैनी।
(१४) आहारक २–आहारक, अनाहारक।
(१५) गुणस्थान १–मिथ्यात्व।
(१६) जीव समास–एकेन्द्रिय, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त।
(१७) पर्याप्ति ४–आहार, शरीर, इंद्रिय, श्वास।
(१८) प्राण ४–स्पर्शनइं., कायबल, आयु, श्वास।
(१९) संज्ञा ४–आहार, भय, मैथुन, परिग्रह।
(२०) उपयोग ३–२ कुज्ञान + १ दर्शन।
(२१) ध्यान ८–आर्त ४, रौद्र ४।
(२२) आस्रव ३८–मिथ्यात्व ५ + अविरति ७ (स्पर्श १ + प्राण वध ६) + कषाय २३ + योग ३=३८।
(२३) योनि–५२ लाख।
(२४) कुल कोडि–६७ लाख।

स्थावर स्वभाव विशेष निरूपण—स्थान परिणाम १, अनन्त न्यान मई न्यान २, सुभाव न्यान रमण ३, न्यान नन्द ४, न्यान रंज ५, न्यान लब्धि ६, दर्स अनन्त ७, दर्स न्यान ८, दर्स विन्यान ९, दर्स सुभाव १०, दर्स उत्पन्न ११, दर्स हितकार दर्स सहकार १२, दर्स षिपक १३, दर्स इष्ट १४, दर्स उत्पन्न १५, इष्ट दर्स १६-१, जान दर्स १६-२, पद परम तत्तु दर्स १७, लष्य दर्स १८, अलस्य दर्स १९, गुपित दर्स २०।

चष्य अचष्य अवधि केवल दस २१, लब्धि दर्स २२, सूर्य लब्धि २३, नृत न्यान २४, कमल सुभाव २५, कमल रमण २६, कमल उक्त २७, कमल परिणै २८, कमल प्रमाण २९, कमल अर्थ ३०, कमल तिअर्थ ३१, कमल सम अर्थ ३२, कमल समय अर्थ ३३, कमल सहकार अर्थ ३४, कमल औकास अर्थ ३५, कमल अन्मोद अर्थ ३६, कमल षिपक अर्थ ३७, कमल मुक्ति अर्थ ३८, कमल रमण ३९, कमल लंकृत ४०, कमल विन्यान ४१, कमलमई कमल ४२, न्यान कमल ४३ ।

नानाप्रकार कमल ४४, अनन्त कमल ४५, परिणाम कन्द अर्क ४६, गिरा कन्द अग्र परिणाम ४७, भय विलय परिणाम ४८, स्थान अंगदि अंग ४९, स्थान स्थान न्यान ५०, विन्यान उत्पन्न कमल ५१, कण्ठमति कमल ५२, हितकार श्रुत कमल ५३, गुपित अवहि कमल ५४, न्यान मनपर्जय कमल ५५, पय केवल परिणाम ५६, ममल अनन्त ५७ तिअर्थ आवरण ५८, तीर्थंकर तिअर्थ आवरण ५९, स्थावर स्थान अर्थ ६०, लोकालोक अनन्त परिणाम ६१, न्यान विन्यान अनन्तानन्त केवल सुभाव ६२, अनन्त चतुष्टै शरीर स्थान परिणाम ६३, दिसि अनन्त ६४, जं दिसि तं दिस्टि ६५, जं अनन्त दिसि तं अनन्त दिस्टि ६६, तस्य आवरण थावर पञ्च भेद उत्पन्न ६७ ।

अर्थ—आत्मामें स्थिर परिणामको स्थावर कहते हैं ॥ १ ॥ वह अनन्त ज्ञानमई है ॥ २ ॥ स्वाभाविक ज्ञानमें रमणरूप है ॥ ३ ॥ ज्ञानमें आनन्दरूप है ॥ ४ ॥ ज्ञानमें मगनरूप है ॥ ५ ॥ अनन्त ज्ञानकी लब्धिरूप है ॥ ६ ॥ अनन्त दर्शनमय है ॥ ७ ॥ ज्ञानका वहां दर्शन या अनुभव है ॥ ८ ॥ भेद विज्ञानका जहां श्रद्धान है ॥ ९ ॥ स्वभावका जहां प्रकाश है ॥ १० ॥ सम्यग्दर्शन झलक रहा है ॥ ११ ॥ हितकारी व सहकारी सम्यग्दर्शन है ॥ १२ ॥ क्षायिक सम्यग्दर्शन रूप है ॥ १३ ॥ निज इष्ट तत्वका जहां दर्शन

है ॥ १४ ॥ ऐसा सम्यक्त प्रगट है ॥ १५ ॥ प्रिय सम्यग्दर्शन है ॥ १६-१ ॥ मोक्षमार्गको जिसने देख लिया है ॥ १६-२ ॥ परमात्म रूप परम तत्वका जिसने अनुभव किया है ॥ १७ ॥ देखने योग्यको देख लिया है ॥ १८ ॥ सक्ष्म अतीन्द्रिय तत्वको देख लिया है ॥ १९ ॥ गुप्त आत्म स्वभावका अनुभव किया है ॥२०॥

जिसमें चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल, चारों दर्शनीय योगकी शक्ति है ॥ २१ ॥ आत्मदर्शनकी लब्धि प्रगट है ॥ २२ ॥ स्वयं ही निज स्वरूपकी प्राप्ति है ॥ २३ ॥ वहीं सचा ज्ञान है ॥ २४ ॥ वही प्रफुल्लित कमलके समान स्वभावधारी है ॥ २५ ॥ वही आत्मारूपी कमलमें रमण कर रहा है ॥ २६ ॥ वही जैसा कहा गया वैसा कमल है ॥ २७ ॥ वह कमल स्वभावमें परिणमन कर रहा है ॥ २८ ॥ वही कमल प्रमाणीक यथार्थ है ॥ २९ ॥ वही आत्मा कमलरूप पदार्थ है ॥ ३० ॥ वही आत्मा कमल रत्नत्रय स्वरूप है ॥ ३१ ॥ यह कमल समभाव सहित पदार्थ है ॥ ३२ ॥ यह कमल यथार्थ समय पदार्थ या समयसार आत्मा है ॥ ३३ ॥ इस प्रफुल्लित कमल स्वभावसे ही आत्मा पदार्थका सहकार है ॥ ३४ ॥ इस कमलको अनन्त पदार्थोंके जाननेका अवकास है ॥ ३५ ॥

यह कमल आनन्दमय पदार्थ है ॥ ३६ ॥ यह कमल क्षायिक भाव सहित पदार्थ है ॥ ३७ ॥ यही कमल मोक्षरूप पदार्थ है ॥३८॥ यह कमल आपमें रमण रूप है ॥ ३९ ॥ यह शोभनीक कमल है ॥४०॥ यह कमल ज्ञानमय है ॥ ४१ ॥ यह कमल आपमें आपरूप ही विराजित है ॥ ४२ ॥ यह ज्ञान स्वरूपी कमल है ॥ ४३ ॥ इस आत्मा कमलके नाना भेद होसक्ते हैं ॥ ४४ ॥ यह अनन्त गुण पदार्थ धारी आत्मा कमल है ॥ ४५ ॥ यह शुद्ध भावोंका धारी सूर्य ही है ॥ ४६ ॥ भगवानकी वाणीका मूल या मुख्य सार यह आत्म कमल है ॥ ४७ ॥ इसके भावोंसे सर्व भय विला गए हैं ॥ ४८ ॥ यह कमल अपने मूल स्थान या पदमें विराजमान है ॥ ४९ ॥ इसके हरएक प्रदेशमें अनन्तज्ञान है ॥ ५० ॥

भेदविज्ञानके द्वारा इस कमलका प्रकाश होता है ॥ ५१ ॥ कंठमें ज्ञान स्वभावी आत्माको धारण करनेसे यह कमल प्रगट होता है ॥५२॥ हितकारी श्रुतज्ञानके द्वारा इस कमलका विकास होता है ॥५३॥ इस कमलमें अवधिज्ञान गर्भित है ॥ ५४ ॥ इस कमलमें मनःपर्यय ज्ञान गर्भित है ॥ ५५ ॥ यह कमल केवलज्ञान पदमें परिणमनशील है ॥ ५६ ॥ यह अनन्त कालतक शुद्ध रहनेवाला है ॥ ५७ ॥ यह आत्मारूपी कमल रत्नत्रयमें आचरण कर रहा है ॥ ५८ ॥ यही कमल तीर्थंकर रूप हो तौ भी रत्नत्रयमें आचरण

करता है ॥ ५९ ॥ यह सचा स्थावर पदार्थ है जो अपने पदमें स्थिर है ॥ ६० ॥ यह लोकालोकके पदार्थोंके अनन्त परिणामोंको जाननेवाला है ॥ ६१ ॥ यह केवल स्वभावी है, जहां अनन्तज्ञान है ॥ ६२ ॥ यह अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य चार चतुष्टय धारी अपने अनन्त प्रदेशोंमें निश्चल स्थित है ॥ ६३ ॥ इसमें अनन्त ज्योति है ॥ ६४ ॥ जैसे ज्ञान है वैसे दर्शन भी है ॥ ६५ ॥ इसमें अनन्त ज्ञान व अनन्त दर्शन है ॥ ६६ ॥ जिस आत्माके ऊपर कर्मोंका ऐसा आवरण है कि शुद्धात्माका स्थावर स्वभाव प्रगट नहीं है वह मिथ्यादृष्टी जीव पांच प्रकार स्थावरोंमें जन्म धारण करता है ॥ ६७ ॥

अथ अपकाय निरूपण—अप्प सुभाव उत्पन्न लब्धि १, गम्य अगम्य परिणाम २, अनन्त न्यान दर्स विन्यान षिपक सूष्म रमण ३, न्यान सुयं सुरमण परिणाम ४, उत्पन्न न्यान रमण सुभाव ५, कमल ठहकार रमण परिणाम ६, ठहकार मुक्ति परिणाम ७, रह रमण इष्ट परिणाम ८, रह रमण उत्पन्न परिणाम ९, अनन्त रह रमण न्यान परिणाम १०, नृत वीर्य रमण परिणाम ११, तत्काल रमण परिणाम १२, इष्ट उष्ट परिणाम १३, उत्पन्न इष्ट उष्ट परिणाम १४, इष्ट दर्स सुयं रमण १५, उत्पन्न दर्स परिणाम १६, इष्ट लष्य परिणाम १७, उत्पन्न लष्य परिणाम १८, दर्स लष्य न्यान परिणाम १९, जीव उत्पन्न आह्वान परिणाम २०, जिन उक्त रमण उत्पन्न रमण परिणाम २१, अनन्त रमण कमल कन्द परिणाम २२, कमल अग्र परिणाम २३, गिरा कन्द परिणाम २४, गिरा अग्र परिणाम २५, मूल इच्छ परिणाम २६, गुपित इच्छ परिणाम २७, जातीय उत्पन्न धुव अर्क परिणाम २८, गम्य अगम्य लंकृत इष्ट परिणाम २९, गम्य अगम्य लंकृत उत्पन्न परिणाम ३०, रमण न्यान सहकार सिद्ध रमण परिणाम ३१, सुयं स्कंध रमण परिणाम ३२, दुर स्कन्ध विली सुयं स्कन्ध परिणाम ३३, न्यान थुति इस्ट उत्पन्न परिणाम ३४, न्यान थुति उत्पन्न इष्ट परिणाम ३५, रमण परश्रेष्ट सहकार उत्पन्न परिणाम ३६, दिस्टि इस्टि दिस्टि—३७।

अथ—अप कायका अध्यात्म दृष्टिसे कथन है (अप्प नाम आत्माका है) आत्माके स्वभावकी प्राप्ति होना परम लब्धि है ॥ १ ॥ वह परिणाम अनुभवगम्य है, मन व इंद्रियोंसे अगम्य है ॥ २ ॥ अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, क्षायिकभाव स्वरूप सूक्ष्म तत्वमें रमणरूप है ॥ ३ ॥ ज्ञान अपने ज्ञान स्वभावमें स्वयं रमण करता है तब आत्मीक भाव झलकता है ॥ ४ ॥ वहां ज्ञानमें रमण करनेका स्वभाव झलक जाता है ॥ ५ ॥ आत्मीक कमलमें स्थिरतासे रमण स्वरूप भाव है ॥ ६ ॥ वही स्थिर मुक्तिका भाव है ॥७॥ परसे भिन्न स्वरूपमें रमण करनेसे इष्ट शुद्धोपयोग होता है ॥ ८ ॥ परसे भिन्न स्वरूपमें रमण करनेसे भावोंकी शुद्धि होती है ॥ ९ ॥ अनन्त काल तक परसे भिन्न स्वरूपमें रमण करनेसे ज्ञान परिणाम रहता है ॥ १० ॥

सत्य आत्मवीर्यमें रमण करनेरूप यह परिणाम है ॥ ११ ॥ जब आत्मामें रमण होता है तब आत्मारूप रहता है ॥ १२ ॥ यही प्रिय व कर्म दग्ध करनेवाला भाव है ॥ १३ ॥ आत्मरमणसे प्रिय व कर्मको भस्मकारी परिणाम पैदा होता है ॥ १४ ॥ जब अपने इष्ट स्वभावका श्रद्धान होता है तब आप ही अपनेमें रमण करने लगता है ॥ १५ ॥ वहां सम्यग्दर्शनका परिणाम प्रकाशित है ॥ १६ ॥ अनुभवने योग्य इष्ट परिणाम यही है ॥ १७ ॥ अनुभवने योग्य भाव प्रगट होगया है ॥ १८ ॥ अनुभवने योग्य ज्ञान भावको देख लिया है ॥ १९ ॥ जीवमें जीवत्व भाव पैदा होगया है ॥ २० ॥

जिनेन्द्र कथित तत्वमें रमण करनेसे आत्मानुभव उत्पन्न होता है ॥२१॥ अनन्त गुणधारी आत्मामें रमण करनेसे आत्मा कमलका मूल भाव झलकता है ॥२२॥ शुद्धोपयोग आत्मा कमलका मुख्य परिणाम है ॥ २३ ॥ जिनवाणीका मूल भाव यही है ॥ २४ ॥ जिनवाणीका सार भाव यही है ॥ २५ ॥ यह मूल स्वाभाविक इष्ट भाव है ॥ २६ ॥ यही गुप्त अनुभव गोचर इष्ट परिणाम है ॥ २७ ॥ यही जीवका जातीय अविनाशी उत्कृष्ट परिणामका झलकाव है ॥२८॥ यही सूक्ष्म स्थूल सर्व ज्ञानसे शोभित इष्ट उपादेय भाव है ॥ २९ ॥ यही सूक्ष्म स्थूल ज्ञानसे शोभित प्रकाशमान भाव है ॥ ३० ॥ आत्मज्ञानमें रमण करनेकी सहायतासे सिद्ध स्वभावमें रमणका भाव उत्पन्न होता है ॥३१॥ स्वयं आत्मा द्रव्यमें रमणरूप भाव है, आत्मा गुणोंका समूह है ॥ ३२ ॥ पर पुद्गल स्कन्धको क्षय करके स्वयं द्रव्यका गुण समूहमें परिणमन है ॥ ३३ ॥ सम्यग्ज्ञानकी भाव स्तुति करनेसे यह प्रिय भाव उत्पन्न होता है ॥ ३४ ॥ आत्मज्ञानकी स्तुतिसे

इष्ट शुद्ध भाव झलकता है ॥ ३५॥ श्रेष्ठ शुद्ध भावमें रमण करनेसे यह आत्मीक भाव झलकता है ॥३६॥ उष्ट आत्माका दर्शन देख लिया गया है ॥ ३७ ॥

परिणाम दिस्टि उत्पन्न इस्टि १, परिणाम झडप इष्ट उत्पन्न २, न्यान परिणाम भय विलय इस्ट उत्पन्न झडप इष्ट न्यान परिणाम ३, भय विलय भय इष्टि विलय भय उत्पन्न विलय परिणाम ४, रमण न्यान सुय रमण अर्क परिणाम ५, रमण सवन्य सर्व दिस्टि सर्व अर्थ नन्त विसेप अर्थ तिअर्थ समर्थ अष्यर सुर पद सव्द अर्थ सव्दर्थ सहकार अर्थ औकास अन्मोद पिाक मुक्ति सौख्य अनन्त सर्व अर्थ परिणाम ६, रमण इस्ट उत्पन्न विद विन्यान सुद्ध परिणाम ७, सून्य सुभाव रमण ८, मूष्यम सरि इस्ट रमण ९, सर उत्पन्न रमण १०, मय मूर्ति गम्य अगम्य मुक्ति रमण ११, सर्वन्य सुरमण १२, मूल उत्पन्न कमल रओ त्कीर्ण रमण १३, कमल न्यान परम तत्तु टंकोति ईर्ज रमण १४, इस्ट कमल न्यान परम तत्तु टंकोत् ईर्ज रमण १५, सुर सर्वन्य उत्पन्न रमण १६, मय मूर्ति श्री सास्वत कमल रमण १७, विन्यान न्यान नृत ईर्ज सुभाव रमण १८, केवल सहकार रमण १९, इष्ट उत्पन्न ऊंकार रमण २०, विंद विन्यान नय उत्पन्न न्यान नय जिन सुभाव २१. मय मूर्ति उत्पन्न न्यान उत्पन्न न्यान परिणाम २२, अनन्त श्री सहकार श्री न्यान श्री मुक्ति सुभाव २३, मुक्ति श्री ध्रुव रमण न्यान अन्तर रहित ध्रुव सिद्ध २४, अप्प परमप्प हितकार पिपक जान इस्ट उत्पन्न इष्ट मुक्ति रमण २५, न्यान आयरण तीर्थंकर मुक्ति सिद्ध २६, अप्प सहकार न्यान रमण २७।

जदि केन विसेपपणि. जनरंजन, कलरंजन, मनरंजन, दर्स अन्ध आवरण न्यान भय सल्य मंक कपाय मल मिथ्या सहकार न्यान रमण आवर्ण अन्तर दिप्ति रमण स्थान न्यान परमिष्टि चतुष्टय रमण त्रय अन्मोद सहकार एन विसेप आवर्ण अन्तर समय महूर्त आवर्ण अन्तर सुभाई

अन्तर हितकार आवर्ण सहकार आवर्ण हितकार आवर्ण ज्ञान आवर्ण रमण न्यान आवर्ण तदि अप्प काय जीव उत्पन्न पयोग चतुष्टै ही ण तदि सुभाव अन्तर्मुहूर्त बारह सहस्र चौवीस भ्रमण अनन्त-काल कलण विसेषन दिस्टंति। भ्रमत भ्रमत जदि कदि परिणाम रमण न्यान स्थान उत्पन्न देइ काल तदि महूर्त तदि समय अप्प सुभाव न्यान रमण उत्पन्न देइ, तदि आप काय महूर्त षिपनिक लै जस्स परिणाम आयरण स्थान जदि काल आयरण उत्पन्न रमण भवंति तदि न्यान रमण विसेष कम्म षिपनिक मुत्ति जन्ति इति अपकाय जीव निरूपणं बारा सहस्र चौवीस वास मृत्यु जन्म १२०२४ ॥ २८ ॥

अर्थ—जब अपने शुद्ध भावोंपर श्रद्धा होती है तब इष्ट स्वानुभव पैदा होता है ॥ १ ॥ परिणामोंको आत्माके तत्वमें जोड़ते ही इष्ट भाव झलकता है ॥ २ ॥ आत्मज्ञानमें परिणमन करनेसे सर्व भय दूर होजाता है, इष्ट स्वानुभव झलकता है व जैसे ही इष्ट स्वानुभव होता है ज्ञानमें परिणमन रहता है ॥ ३ ॥ भयोंके दूर होनेपर, इष्ट पदार्थोंके सम्बन्धमें भय मिटनेपर, भयके उदयके हटनेपर निर्भय भाव होता है ॥ ४ ॥ ज्ञानमें रमण करनेसे स्वयं आत्मामें रमण होता है तब ज्ञान सूर्य प्रगट होता है ॥ ५ ॥ जब कोई सर्वज्ञ, सर्वदर्शी व सर्व पदार्थोंके अनन्त विशेषोंको रखनेवाले आत्म पदार्थमें, रत्नत्रयमई अनन्त वीर्यमई पदार्थमें जो आत्मा पदार्थ अक्षर स्वर पद शब्द व शब्दोंके अर्थसे झलकता है जिसमें अनन्त ज्ञानका अवकास है, जो आनन्दमय है, क्षायिक है, मोक्षके अनन्त सुखसे भरपूर है तब शुद्ध परिणाम होता है ॥ ६ ॥

इष्ट आत्मतत्वमें रमण करनेसे ज्ञानके अनुभवसे शुद्ध भाव होता है ॥ ७ ॥ यह भाव रागादिसे शून्य स्वभावमें रमण रूप है ॥ ८ ॥ सूक्ष्म अतीन्द्रिय आत्मारूपी सरोवरमें प्रेमसे रमण होरहा है ॥ ९ ॥ आत्म सरोवरमें मगन होनेसे ही स्वात्मरमण होता है ॥ १० ॥ ज्ञान मूर्ति आत्मा सूक्ष्म स्थूलके विकल्पसे रहित तत्वमें रमण कर रहा है ॥ ११ ॥ वह सर्वज्ञ भावमें रमण कर रहा है ॥ १२ ॥ कमलके मूलसे उत्पन्न कमलमें दृढ़तासे रमण होरहा है ॥ १३ ॥

तत्वका ज्ञान है उसमें दृढ़तासे व सरलतासे व शांतिसे रमण होरहा है ॥ १४ ॥ हितकारी आत्म-कमलके परम ज्ञानमें दृढ़तासे रमण होरहा है ॥ १५ ॥ सर्वज्ञ सूर्यसे प्रगट भावमें रमण होरहा है ॥१७॥ भेद विज्ञानके द्वारा प्रगट सत्य सरल समभावमें रमण होरहा है ॥ १८ ॥ केवलज्ञानके सहकारी भावमें रमण होरहा है ॥ १९ ॥ इष्ट भावको झलकाने वाले ॐ मंत्रके द्वारा रमण होरहा है ॥ २० ॥ भेद विज्ञा-नसे शुद्ध नयके द्वारा प्रगट ज्ञानमय वीतराग स्वभाव झलकता है ॥ २१ ॥ ज्ञान मूर्ति आत्मामें प्रगट ज्ञानके अनुभवसे ज्ञानका भाव बढ़ता है ॥ २२ ॥ अनन्त आत्मीक लक्ष्मीको सहकारी ऐश्वर्यशाली ज्ञान है वही श्री मोक्षके स्वभाव रूप है ॥ २३ ॥ मोक्ष-लक्ष्मीमें ध्रुव भावसे रमण करता हुआ ज्ञान निरन्तर अविनाशी सिद्धपदमें तिष्ठता है ॥ २४ ॥ परमात्म स्वरूप आत्माको हितकारी क्षायिक भाव रूपी इष्ट मोक्षमार्गसे इष्ट मुक्तिमें रमण प्रगट होता है ॥ २५ ॥

ज्ञानमें आचरण करनेसे ही तीर्थंकर सिद्ध व मुक्त होता है ॥ २६ ॥ आत्माको सहकारी आत्म-ज्ञानमें रमण यथार्थ है ॥ २७ ॥ जिस किसीको ऊपर प्रमाण आत्माका अनुभव नहीं प्राप्त है, जो जनरंजन भावमें, शरीररंजन भावमें, मनरंजन भावमें, दर्शनमोहके मिथ्यात्व भावमें, ज्ञानावरणके उदयमें, भय, शल्य, शङ्कामें, कषायके मलमें फंसा है, मिथ्या ज्ञानमें रमण करता है, जिसके अन्तरायका उदय है, व जिसके ऐसा कर्मोंका आवरण है जिससे उसको ज्ञानमें रमण नहीं है, स्व स्वरूपका ज्ञान नहीं है, अनन्त चतुष्टयमें रमण नहीं है, रत्नत्रयका आनन्द नहीं है, पापोंका विशेष उदय है, अन्तर्मुहूर्तके लिये भी आवरण हटता नहीं है, अन्तरंग स्वभावका हितकारी भाव छिप रहा है, उस ज्ञानके सहकारी कार्योंका भी निमित्त नहीं है, मोक्षमार्ग विरोधीभावमें रमण होरहा है, ज्ञानावरणका विशेष उदय है तब वह जीव जलकायमें उत्पन्न होता है। वहांपर मात्र स्पर्शनेन्द्रिय द्वारा उपयोग है, अन्य चार इंद्रियोंके द्वारा उपयोग नहीं है। ऐसे जलकायमें क्षुद्र भव्य अन्तर्मुहूर्तमें लगातार सूक्ष्मके ६०१२, स्थूलके ६०१२ कुल १२०२४ होते हैं इनका एक श्वासमें अठारह दफे जन्म मरण होता है। ऐसे अपर्याप्त जीव साधारण वनस्पति निगोदमें भी जाते हैं। अनन्त काल तक संसारमें भ्रमण रहता है, स्वानुभवका दर्शन नहीं होता है। भ्रमण करते करते यदि कभी पंचेन्द्रिय सैनी होजाता है मानव होता है और वहां सम्यग्दर्शन सहित ज्ञान पैदा होकर अन्तर्मुहूर्तके लिये आत्माके स्वाभाविक ज्ञानमें रमण होता है उपशम सम्यक्त जब पैदा होता है

तव अन्तर्मुहूर्त आत्मानुभव बना रहता है। फिर वेदक सम्यक्त होकर आत्मा क्षायिक सम्यक्ती होजाता है तब वह क्षायिक भावमें आचरण करता है। चारित्र बढ़ते बढ़ते यथाख्यात चारित्र होजाता है। फिर केवलज्ञान उत्पन्न होकर शुद्ध ज्ञानमें रमण होता है। फिर शेष सर्व कर्म क्षय करके वह मोक्ष जाता है। इसतरह अपकायका निरूपण किया। जलकायके क्षुद्र भव एक अन्तर्मुहूर्तमें १२०२४ होते हैं, १२०२४ दफे जन्म मरण होता है ॥ २८ ॥

तेज काय निरूपणं—थावर गति स्थान न्यान आवरण थावर तेज काय निरूपणं १, गति तियच स्थान न्यान आवरण थावर भवति २, स्थान आवरण सुद्ध मुक्ति गामिणं ३, कस्य आयरण उत्पन्न ४, उत्पन्न आयरण उत्पन्न विंद ५, उत्पन्न विन्यान ६, उत्पन्न पद ७, उत्पन्न अर्थ ८, उत्पन्न औकास ९, उत्पन्न अन्मोद १०, उत्पन्न षि क ११, उत्पन्न मुक्ति रमण १२, उत्पन्न न्यान रमण आनन्दनन्द १३, उत्पन्न दिस्टि इस्टि १४, उत्पन्न सूपम सुयं षिपन सुभाव १५, उत्पन्न श्री रमण आयरण श्री मुक्ति सुभाव १६, जदि विसेष–उत्पन्न सर्वेपि अप्प सहकार १७, उत्पन्न उत्पन्न हितकार आयरण हितकार १८, उत्पन्न स्थान हितकार १९, इष्ट भय विनस्य हितकार २०, उत्पन्न भय विनस्य अचष्य २१, भय इष्ट विनस्य अचष्य उत्पन्न २२, भय इष्ट विनस्य सुयं न्यान आवरण २३, रमण काए रमण २४।

अर्थ—अप तेज कायका निरूपण करते हैं। इस तेज कायमें स्थावर गति होती है। ज्ञानावरणका उदय विशेष है ॥ १ ॥ तिर्यंच गति होनेसे यथार्थ ज्ञानका आवरण होता है, तेज काय स्थावर है ॥ २ ॥ जो कोई अपने स्वभावमें स्थिर होके आचरण करता है वह शुद्ध होकर मुक्त होजाता है ॥ ३ ॥ किसके आचरणसे क्या होता है ॥ ४ ॥ स्वरूपाचरण होनेसे स्वानुभव होता है ॥ ५ ॥ विशेष आत्मज्ञान होता है ॥ ६ ॥ महान् पद उत्पन्न होता है ॥७॥ परमार्थ तत्व झलकता है ॥८॥ अनन्त ज्ञान प्रगट होता है ॥९॥ अनन्त सुखका प्रकाश होता है ॥ १० ॥ नौ क्षायिक लब्धियां प्रगट होती हैं ॥ ११ ॥ मोक्षभावमें रमण होता है ॥ १२ ॥ ज्ञानानन्दमें मगनता रहती है ॥ १३ ॥ परम इष्ट आत्माकी दृष्टि होजाती है ॥ १४ ॥

अतीन्द्रिय सूक्ष्म निज क्षायिक स्वभाव प्रगट होजाता है ॥ १५ ॥ परमैश्वर्यमें रमण होते हुए मोक्षका स्वभाव होजाता है ॥ १६ ॥ यदि विशेष कहें तो आत्माके सहकारी सर्व गुण प्रगट होजाते हैं ॥ १७ ॥ हितकारी स्वरूपमें आचरण सदा बना रहता है ॥ १८ ॥ अपना निज स्थान हितकारी प्रगट रहता है ॥ १९ ॥ सर्व भयोंका विनाश होजाता है, निर्भयता हितकारी प्रगट होती है ॥ २० ॥ भयोंके क्षयसे अतीन्द्रिय भाव प्रगट होता है ॥ २१ ॥ इष्ट भावके सम्बन्धसे सर्व भय दूर होजाता है। अतीन्द्रिय तत्व प्रगट होता है ॥ २२ ॥ निर्भयताके साथ इष्ट अपने ही ज्ञानमें रमण रहता है ॥ २३ ॥ रमण स्वरूप आत्मामें रमण रहता है ॥ २४ ॥

क्रांति–इष्ट न्यान विन्यान श्री आयरण क्रांति १, उत्पन्न इष्ट अपूर्व सहकार पुरिस क्रांति २, रमण आयरण कासु स्फटिक ३, कासू स्फटिक अन्यान विली न्यान अन्मोद स्वरूवी सुभाव ४, न्यान प्रियो ५, न्यान इष्ट ६, न्यान कमल ७, न्यान रमण ८, श्री अनन्त न्यान फटिक सुभाव रमण ९, आवरण उत्पन्न स्फटिक सिद्ध सुभाव फासु सरूव सूक्ष्म अवगाहण हितमित परिणे १०, कोमल क्रांते सिद्ध स्वरूप ११, न्यान मुक्ति श्री सुद्ध सुभाव १२, फासु आवरण रूव अरूवी रूवी विलय १३, अरूव रूव रूवी विविक्त १४, अनरूइ प्रियो १५, न्यान रूवी न्यान विन्यान रमण १६, आयरण न्यान सुद्ध सुकीय सुभाव १७, दिष्टि रूव उत्पन्न औकास अन्मोद पिपक रूवेन तदि मुक्ति सुख्य १८ ।

अर्थ—शुद्ध स्वरूपको शोभा कहते हैं। इष्ट भेद विज्ञानके द्वारा स्वरूपाचरण होना ही एक क्रांति है ॥ १ ॥ इष्ट भाव उत्पन्न होनेसे अपूर्व परम हितकारी आत्माकी कीर्ति होती है ॥ २ ॥ स्वरूपमें आचरण करनेसे आत्मा स्फटिकरत्नके समान पवित्र होजाता है ॥ ३ ॥ स्फटिकके समान निज स्वभाव झलकनेसे अज्ञान दूर होजाता है, ज्ञानानन्द स्वभाव झलक जाता है ॥ ४ ॥ तब ज्ञान ही प्रिय है ॥ ५ ॥ ज्ञान ही इष्ट है ॥ ६ ॥ ज्ञान कमलके समान प्रफुल्लित रहता है ॥७॥ ज्ञानका ज्ञानमें रमण होता है ॥८॥ परमैश्वर्यशाली अनन्त ज्ञानमयी निर्मल स्फटिक समान भावमें रमण होता है ॥ ९ ॥ स्वरूपाचरणसे

स्फटिकके समान सिद्धका स्वभाव प्रगट होजाता है जो निर्मल है, सूक्ष्म अतींद्रिय है, अवगाहन गुण सहित है, मर्यादारूप अपने ही स्वभावमें परिणमन करता है ॥ १० ॥ बड़ी ही शांत शोभा सिद्धके स्वरूपकी है ॥ ११ ॥ ज्ञानमई परसे मुक्त परमैश्वर्यशाली सिद्धका शुद्ध स्वभाव है ॥ १२ ॥ शुद्ध स्वभावमें आचरण करनेसे अमूर्तीक स्वभाव प्रगट होता है, रूपी पुद्गलका संग छूटता है ॥ १३ ॥ सिद्धका स्वरूप अरूपी है, मूर्ति रहित है ॥ १४ ॥ अमूर्तीक स्वभाव सुहावना है ॥ १५ ॥ सिद्ध ज्ञान स्वरूपी है व ज्ञानमें ही रमण करते हैं ॥ १६ ॥ ज्ञानमें आचरण करनेसे अपना शुद्ध स्वभाव प्रगट रहता है ॥ १७ ॥ अपने स्वरूपको देख लेनेसे अनन्तज्ञान व अनन्त सुख उत्पन्न होता है, सर्व कर्मका क्षय किये हुए वे सिद्ध भगवान सदा मुक्तिका सुख भोगते हैं ॥ १८ ॥

अन्मोद न्यान हितकार आयरण १, सव्दस्य विसेष सव्दस्य जिन सव्द असव्द न्यान २, असव्द गुपित सव्द न्यान उत्पन्न ३, सव्द न्यान सरूव न्यान विन्यान आवरण ४, लब्धि अलब्धि लब्धि ५, सुय लब्धि ६, विसेष न्यान विन्यान श्री मुक्ति श्री सुभाव ७, पुरिस सिद्ध सुभाव अव्वावाह अवगाह हितकार रमण आयरण सुद्ध बुद्ध सुभाव ८, मन विसेष–इष्ट मन ९, न्यान मन १०, उत्पन्न मन न्यान रंज ११, मन न्यान रमण १२, मन न्यान विन्यान रमण १३, श्री न्यान सुभाव मुक्ति श्री सहकार १४, सिद्ध अर्क उत्पन्न १५, हितकार विंद विन्यान उत्पन्न १६, हितकार आगन्तु न्यान १७, हितकार हित न्यान १८, उत्पन्न हित हुंतकार न्यान १९, उत्पन्न हितकार रंज २०, जिन रंज रमण २१, जिननाथ रमण २२, अचष्य दर्सन न्यान परिणाम २३, अनन्त अलष्य २४, सरस्य सर उत्पन्न २५, न्यान रमण विसेष २६, षिपक विसेष २७, जानपद विन्यान रमण २८, ग्रहण अनन्त बाधा रहित तीर्थंकर सुभाव २९।

जदि अतीन्द्रिय सुभाव केन विसेष--मनरंजन गारौ सुभाव जनरंजन सुभाव मनरंजन सुभाव कलरंजन सुभाव, कषाय मल सुभाव पर्जाव दिष्टि सुभाव, पर्जाव इष्टि सुभाव, दर्स अदर्स अन्ध

सूष्यम सुभात्र मिथ्या सुभाव प्रकृति राग प्रकृति दोष प्रकृति न द्रिसयते ३०, अतीन्द्रिय उत्पन्न अतीन्द्रिय सुभाव ३१, अतीन्द्रिय मिलण ३२, अतीन्द्रिय रमण ३३, अतीन्द्रिय रंज ३४, अतींद्रिय आनन्द ३५, अतींद्रिय विसेष ३६. अतींद्रिय उक्त ३७, अतींद्रिय वयण ३८, अतींद्रिय दिस्टते, ३९, अतींद्रिय गम्यते ४०, अतींद्रिय अगम्यते ४१, अतींद्रिय सुवते ४२, अतींद्रिय आहार ४३, अतींद्रिय ठिदि ४४, अतींद्रिय चलण ४५, अतींद्रिय वलण ४६, अतींद्रिय निद्रा ४७, अतींद्रिय आमनु ४८, अतींद्रिय सुर सब्द ४९, अतींद्रिय अदिस्ट सर ५०, अतींद्रिय गुपित सर ५१, अतींद्रिय उत्पन्न सर ५२, अतींद्रिय कमल सर ५३, अतींद्रिय आयरण ५४, अतींद्रिय अचष्य ५५, अतींद्रिय चष्य ५६, अतींद्रिय गुपित ५७, अतींद्रिय मन ५८, अतींद्रिय वचन ५९, अतींद्रिय क्रांति ६०, अतींद्रिय सयनासन ६१, अतींद्रिय ग्रह ६२, अतींद्रिय हितकार ६३, अतींद्रिय औगास ६४।

अतीन्द्रिय अवाधा सुभाव ६५, अतीन्द्रिय भय ६६, अतीन्द्रिय उत्पन्न मय ६७, अतीन्द्रिय इष्टि मय ६८, अतीन्द्रिय झड़प मय ६९, अतीन्द्रिय रमण ७०, अतीन्द्रिय विन्यान रमण ७१, अतीन्द्रिय प्रियो ७२, अतीन्द्रिय रूव ७३, अतीन्द्रिय अष्या अतीन्द्रिय सुर, अतीन्द्रिय विंजन, अतीन्द्रिय माया, अतीन्द्रिय कानो, अतीन्द्रिय पद ७४, अतीन्द्रिय अर्थ ७५, अतीन्द्रिय तिअर्थ ७६, अतीन्द्रिय सहकार ७७, अतीन्द्रिय समय ७८, अतीन्द्रिय औकास ७९, अतीन्द्रिय रमण ८०, अतीन्द्रिय लंकृत ८१, अतीन्द्रिय मई ८२, अतीन्द्रिय न्यान प्रकार ८३, अतीन्द्रिय सुभाव स्थान आवरण भवतु ८४, अनन्त अतीन्द्रिय सुन्य अतीन्द्रिय अनन्तानुवन्ध, अतींद्रिय सुभाव तेज काय जीव उत्पन्न उपयोग हीन संजोग चतुष्टै हीन भ्रमण अन्तर्मुहूर्त १२०२४ अन्तर्मुहूर्त तेज काय मरइ जन्मइ ८५।

अर्थ—आनन्द और ज्ञान जो हितकारी है उनमें ज्ञानीका रमण होता है ॥ १ ॥ शब्दका विशेष कहते हैं। शब्दोंमें जिन शब्द है इससे शब्द रहित परमात्माका ज्ञान होता है ॥२॥ शब्द रहित आत्मामें लवलीन होनेसे शब्द ज्ञान या श्रुतज्ञानका प्रकाश होता है ॥ ३ ॥ शब्दके द्वारा ज्ञान स्वरूपी आत्माके ज्ञानमें आचरण होता है ॥ ४ ॥ तब अपूर्व लब्धियोंकी या शक्तियोंकी प्राप्ति होती है ॥५॥ स्वयं आत्माकी शक्तियें प्रगट होती जाती हैं ॥ ६ ॥ विशेष ज्ञानके द्वारा परमैश्वर्ययुक्त मोक्षके स्वभावका अनुभव होता है ॥ ७ ॥ पुरुषाकार सिद्ध भगवानका स्वभाव जाना जाता है, जो अव्याबाध है, अवगाहन गुण रहित है, हितकारी स्वभावमें रमणशील है, व शुद्ध व बुद्ध स्वभाव है ॥ ८ ॥ मनका चिंतवन विशेष आत्मा सम्बन्धी होता है वही मन प्रिय है ॥ ९ ॥ वही मन ज्ञानी है ॥ १० ॥

इस मनके द्वारा आत्माके ज्ञानमें मगनता होती है ॥ ११ ॥ तब मन स्वयं ज्ञानमें रमण कर जाता है ॥ १२ ॥ मन तब भेदविज्ञानके द्वारा आत्मामें रमण कर जाता है ॥ १३ ॥ परमैश्वर्ययुक्त ज्ञान स्वभावमें मोक्ष-लक्ष्मीका स्वभाव चमकता है ॥ १४ ॥ वहां सिद्धरूपी ज्ञान सूर्य झलकता है ॥ १५ ॥ तब हितकारी ज्ञानका अनुभव प्रगट होता है ॥ १६ ॥ तब हितकारी ज्ञान आपसे ही अकस्मात् पढ़ता जाता है ॥ १७ ॥ यही हितकारी उपादेय ज्ञान है ॥ १८ ॥ यह ज्ञान कर्मोंको होम करनेवाला है ॥ १९ ॥ यह ज्ञान आत्माके हितमें मगन रहता है ॥ २० ॥ यही वीतराग स्वभावमें मगनरूप है ॥ २१ ॥ यही जिनेन्द्रके गुणोंमें रमणरूप है ॥ २२ ॥ यही अतींद्रिय ज्ञान व दर्शनका भाव है ॥ २३ ॥ यही अनन्त अविनाशी अतींद्रिय भाव है ॥ २४ ॥ आत्माके सरोवरमें मगन होनेसे आत्माका सरोवर बढ़ता जाता है। आत्माके गुण प्रगट होते जाते हैं ॥ २५ ॥ तब विशेष आत्मज्ञानमें रमण होता है ॥ २६ ॥ यह भाव क्षायिक है जो कर्मोंका क्षय करता है ॥ २७ ॥

यही मोक्षमार्ग है जिस विज्ञानमें रमण होता है ॥ २८ ॥ तब वह शुद्ध भाव बाधा रहित व अनंत तीर्थंकर अरहन्तके स्वभावको अनुभव करता है ॥ २९ ॥ अतीन्द्रिय स्वभावका प्रकाश यह है कि मनरंजनमय भाव, जनको रंजायमान करनेवाला स्वभाव, मनको रंजायमान करनेका भाव, क्रोधादि कषायोंका बल, पर्याय बुद्धिका मिथ्यात्व भाव, पर्यायमें रमण भाव, दर्शन मोहका अन्धपना, सूक्ष्म मिथ्यात्व भाव, मिथ्यात्व प्रकृति, राग भाव, द्वेष भाव ये सब कोई जहां अनुभवमें नहीं आते हैं ॥ ३० ॥

अतीन्द्रिय भावमें रमण करनेसे अतीन्द्रिय स्वभाव प्रगट होता जाता है ॥ ३१ ॥ अतीन्द्रिय स्वभावसे मिलान बढ़ता जाता है ॥ ३२ ॥ अतीन्द्रिय स्वभावमें रमण होता जाता है ॥ ३३ ॥ अतीन्द्रिय स्वभावमें मगनता होती जाती है ॥ ३४ ॥ अतीन्द्रिय स्वभावमें ही सच्चा सुख है ॥ ३५ ॥ अतीन्द्रिय स्वभाव आत्माका विशेष गुण है ॥ ३६ ॥ अतींद्रिय समय उसे कहते हैं, जैसा जिनवाणीमें कहा गया है ॥ ३७ ॥ अतींद्रिय स्वभावमें ही ज्ञानी उलझा रहता है ॥ ३८ ॥ अतीन्द्रिय स्वभावको ही देखता है ॥ ३९ ॥ अतीन्द्रिय स्वभावको ही जानता है ॥ ४० ॥ अतीन्द्रिय स्वभाव मनसे अगोचर है ॥ ४१ ॥ अतीन्द्रिय भावमें ज्ञानी परिणमन करता है ॥ ४२ ॥

अतीन्द्रिय सुखका ही ज्ञानी भोजन करता है ॥ ४३ ॥ अतींद्रिय भावमें ही ठहरता है ॥ ४४ ॥ अतींद्रिय स्वभावमें ही चलता है ॥ ४५ ॥ अतींद्रिय भावमें प्रकाशता है। ध्यानमय अग्नि यही है, जो कर्मोंको जलाती है ॥ ४६ ॥ अतींद्रिय स्वभावमें ज्ञानी मगन होकर जगतके व्यवहारसे शून्य हो निद्रा लेता है ॥ ४७ ॥ अतीन्द्रिय स्वभावमें ही ज्ञानी आसन जमाता है ॥ ४८ ॥ अतींद्रिय स्वभावको प्रकाशक स्वर व शब्दोंका ज्ञानी सहारा लेता है ॥ ४९ ॥ अतीन्द्रिय स्वभाव एक ऐसा सरोवर है, जो इंद्रियोंसे देखनेमें नहीं आता है ॥ ५० ॥ अतीन्द्रिय भावमें रमना गुप्त सरोवरमें स्नान करना है ॥ ५१ ॥ अतींद्रिय भावसे आत्मारूपी सरोवर बढ़ता जाता है ॥ ५२ ॥ अतींद्रिय सरोवरमें अतींद्रिय भावरूपी कमल खिलता है ॥ ५३ ॥ अतींद्रिय भावमें रहना ही आचरण है ॥ ५४ ॥ अतींद्रिय भाव इंद्रियगोचर नहीं है ॥ ५५ ॥ अतीन्द्रिय ज्ञान ही सच्ची आंख है, देखनेयोग्य दृश्य है ॥ ५६ ॥ अतीन्द्रिय भाव गुप्त गुफा है, अनुभवगम्य है ॥ ५७ ॥ अतीन्द्रिय भावका विचार करे, वही मन है ॥ ५८ ॥ अतींद्रिय भावका शब्द है वही वचन है ॥ ५९ ॥ अतीन्द्रिय भावमें रमण करनेसे शरीरकी शोभा है ॥ ६० ॥ अतीन्द्रिय भाव ही शय्याका आसन है ॥ ६१ ॥ अतीन्द्रिय भाव ही घर है जहां रहना चाहिये ॥ ६२ ॥ अतींद्रिय भाव ही हितकारी मोक्ष साधक है ॥ ६३ ॥ अतींद्रिय ज्ञानमें अनन्त अवकाश है ॥ ६४ ॥ अतींद्रिय भावमें कोई बाधा नहीं है ॥ ६५ ॥ आत्मा अतींद्रिय स्वभावमय है ॥ ६६ ॥ अतीन्द्रिय भावसे अतीन्द्रियभाव बढ़ता है ॥ ६७ ॥

अतीन्द्रिय भाव ही परम प्यारा है ॥ ६८ ॥ अतीन्द्रिय भावमें रमण करनेसे तुर्त स्वानुभव होता

है ॥ ६९ ॥ अतीन्द्रिय स्वभावमें ही ज्ञानमें रमण है ॥ ७० ॥ अतीन्द्रिय स्वभावमें ही भेद विज्ञान द्वारा रमण होता है ॥ ७१ ॥ अतीन्द्रिय भाव ही प्रिय है ॥ ७२ ॥ अतीन्द्रिय आत्माका रूप है ॥ ७३ ॥ अक्षर, स्वर, व्यंजन, मात्रा, अनुस्वरादिसे व पदसे अतीन्द्रिय आत्माका ही मनन कर अनुभव करना चाहिये ॥ ७४ ॥ आत्मा पदार्थ अतीन्द्रिय है ॥ ७५ ॥ रत्नत्रय भी अतीन्द्रिय है ॥ ७६ ॥ अतीन्द्रिय अनुभव ही मोक्षका सहायक है ॥ ७७ ॥ अतीन्द्रिय स्वरूप ही समय या आत्मा है ॥ ७८ ॥ अतीन्द्रिय भावमें अनंत आकाश है ॥ ७९ ॥ अतीन्द्रिय भावमें ही रमण मोक्षमार्ग है ॥ ८० ॥ अतीन्द्रिय भाव ही आभूषण है ॥ ८१ ॥ अतीन्द्रिय स्वभावमें बुद्धिको प्रवेश करना चाहिये ॥ ८२ ॥ अतीन्द्रिय ज्ञानके ही अनेक भेद होजाते हैं ॥ ८३ ॥ जब अतीन्द्रिय निज शुद्ध स्वभावका आवरण या आच्छादन होता है ॥ ८४ ॥ तब अनन्त अतीन्द्रिय ज्ञानादिसे शून्य जीव होता है। इंद्रिय द्वारा ही ज्ञान रहता है, अतीन्द्रिय स्वभाव अनन्तानुबन्धी कषायके उदयसे ढक जाता है, स्वरूपाचरण चारित्र नहीं होता है तब तेज या अग्निकायमें जीव पैदा होता है जहां शुद्ध आत्माकी तरफ उपयोग नहीं जाता है। एक स्पर्शन इंद्रिय द्वारा स्पर्श करने योग्य पदार्थ पर उपयोग किया जाता है, चार इंद्रियोंके उपयोग नहीं होते हैं, तेजकायमें लब्ध्य पर्याप्तक जीव क्षुद्र भवके धारी श्वासके अठारहवें भागमें जन्म मरण करनेवाले बादर व सूक्ष्मके लगातार भव एक अंतर्मुहूर्तमें १२०२४ होते हैं ॥ ८५ ॥

भावार्थ—मिथ्यादृष्टी जीव अग्निकायमें जन्मता है। वहां १२०२४ भव लगातार क्षुद्र भवके पाता है। जन्म मरणके घोर कष्ट सहता है।

अनन्त काल कालंतर जामन मरनं भवतु। अनन्त काल अतिंद्री सुभाव जदि कालंतर अतिंद्री विरत्र १, कोमल सहकार न्यान औगाह २, दर्सन न्यान अदर्स ३, अचष्य न्यान गुपित रमण ४, न्यान नन्तानन्त ५, मल विली ६, विषय विली ७, विनन्द विली ८, अतींद्री उत्पन्न विली ९, अतिंद्री मुक्त विली १०, अतिंद्री अन्मोद विली ११, न्यान रमण उत्पन्न अन्मोद मिली १२, विषय विलयं गता १३, तदि मुक्त सुभाव रमण न्यान मुक्ति गमनं भवतु १४।

अर्थ—तेजकाय आदि स्थावरोंमें अनन्त कालतक यह जीव जन्म मरण करता रहता है। तौभी आत्मामें अनन्त काल अतींद्रिय स्वभाव बना रहता है, उसका अभाव नहीं होता है। यदि पंचेन्द्रिय सैनी मानव होकर काललब्धि आनेपर अतींद्रिय स्वभावमें विशेष प्रेमालु होजावे, सम्यग्दृष्टी होजावे ॥१। कोमल या नम्र भावसे आत्माके इस स्वभावमें अवगाहन करे ॥ २ ॥ दर्शन ज्ञानमई देखे ॥ ३ ॥ अतीं-द्रिय ज्ञानमें गुप्त होकर रमण करे ॥ ४ ॥ तब अनन्त ज्ञानका प्रकाश होजावे ॥ ५ ॥ सर्व कर्ममल क्षय होजावे ॥ ६ ॥ विषयवासना मिट जावे ॥७॥ विषयसुख विलय होजावे ॥८॥ अतींद्रिय सुख पैदा होजावे व उसमें लय होजावे ॥९॥ अतींद्रिय सुखके भोगमें तन्मय होजावे ॥१०॥ अतीन्द्रिय आनन्दमें मगनता होजावे ॥ ११ ॥ आत्मज्ञानमें रमण करके आनन्दका लाभ होजावे ॥ १२ ॥ सर्व पर सम्बन्धी विषयसुख छूट जावे ॥ १३ ॥ तब मोक्षके स्वभावमें रमण करके ज्ञानमय होकर मोक्षको चला जावे ॥ १४ ॥

भावार्थ—वही तेज काय जीव भ्रमण करते करते काल पाकर मानव होकर व क्षायिक सम्यक्ती होकर उसी भवसे आत्मध्यान द्वारा कर्मोंसे मुक्त हो सिद्धगति पासक्ता है। उस तेजकाय जीवमें आत्मा अतीन्द्रिय स्वभावका धारी ही है।

वात काय निरूपणं—उत्पन्न उत्पन्न इष्ट १, उत्पन्न उत्पन्न इष्ट इष्ट २, दर्स दर्स इष्ट ३, उत्पन्न दर्स दर्स इष्ट ४, इस्ट उत्पन्न इस्ट इस्ट रमण ५, उत्पन्न इस्ट रमण ६, इस्ट रज लष्य ७, उत्पन्न लष्य इस्ट चेय ८, उत्पन्न चेय इस्ट चेय ९, उत्पन्न चेय इस्ट इच्छ १०, उत्पन्न इस्ट वियो उत्पन्न पियो ११, इस्ट रहनि उत्पन्न रहनि १२, इस्ट गहणि उत्पन्न गहणि १३, इस्ट विलखि उत्पन्न मिलणि १४, इस्ट सहनि उत्पन्न सहनि १५, इस्ट वेषु उत्पन्न वेषु १६, इस्ट हित उत्पन्न हित १७, इस्ट अवगाह उत्पन्न अवगाह १८, इस्ट अगुरुलघु उत्पन्न अगुरुलघु १९, इस्ट अबाधा उत्पन्न अबाधा २०, इस्ट षिपक उत्पन्न षिपक २१, इस्ट जान उत्पन्न जान २२, इस्ट गुपित उत्पन्न गुपित २३, इस्ट गुहिज उत्पन्न गुहिज २४, इस्ट पद उत्पन्न पद २५, इस्ट विंद

आयरन उत्पन्न आयरन २८, इस्ट लब्धि
उत्पन्न विंद २६, इस्ट स्थान उत्पन्न स्थान २७, इस्ट आयरन उत्पन्न आयरन २८, इस्ट लब्धि
उत्पन्न लब्धि २९, सुयं षिाक उत्पन्न षिपक ३०, इस्ट स्कंध उत्पन्न स्कंध ३१, इस्ट ध्रुव उत्पन्न
ध्रुव ३२, इस्ट मै रमण उत्पन्न मै रमण ३३, इस्ट औकास रमण उत्पन्न औकास रमण ३४,
गम्य अगम्य रमण गम्य अगम्य उत्पन्न रमण ३५, कुन्यान विली उत्पन्न कुन्यान विली ३६,
इस्ट उस्ट कुमति विली उत्पन्न कुमति विली इस्ट ३७, कुश्रुत विली उत्पन्न कुश्रुत विली इस्ट·
३८, कुअवधि विली उत्पन्न कुअवधि विली हितकार ३९ ।

अर्थ—जब सम्यग्दर्शनका प्रकाश होजाता ह ॥ १ ॥ तब शुद्ध इष्ट ध्येयका प्रकाश होने लगता
है ॥ २ ॥ इष्ट शुद्धात्माका वारवार दर्शन होता है ॥ ३ ॥ आत्मदर्शनके पैदा होनेसे इष्टपदका साधन
होता है ॥ ४ ॥ आत्मानुभवके उद्योतसे इष्ट शुद्धभावमें भलेप्रकार रमण होता है ॥ ५ ॥ इसीसे इष्ट
आत्मीक रमण होता है ॥ ६ ॥ देखने योग्य आत्मामें परमानन्द होता है ॥ ७ ॥ शुद्ध लक्ष्य जो आत्मा
है इसका अनुभव होनेपर चेतने योग्य प्रभुका प्रकाश प्रगट होता है ॥ ८ । जैसे जैसे चेतने योग्य परमा-
त्माका जानपना होता है वैसे वैसे इष्टपद प्रगट होता है ॥ ९ । इष्टपदके प्रकाशसे जो साध्य था उसको
प्राप्त कर लेता है ॥ १० ॥ साधने योग्य शुद्ध भावका प्रकाश होनेपर इष्टपद प्रिय भासता है व प्रिय पद
प्रगट होजाता है ॥ ११ ॥ इष्ट वैराग्यमें रहनेसे वैराग्य बढ़ता जाता है ॥ १२ ॥ इष्ट पदको ग्रहण करनेसे
ग्रहण योग्य पद प्रगट होता है ॥ १३ ॥ इष्ट स्वात्मामें मिलनेसे स्वात्माका लाभ होता है ॥ १४ ॥ इष्ट
आत्माको आत्मबलसे धारण करनेसे इष्टभाव झलकता जाता है ॥ १५ ॥ इष्टको देखनेसे इष्टका दर्शन
बढ़ता जाता है ॥ १६ ॥ इष्ट ध्येयमें हित करनेसे हित झलकता जाता है ॥ १७ ॥ इष्टमें मगन होनेसे
मगनता बढ़ती जाती है व सिद्धके ध्यानसे अवगाहन गुणधारी सिद्धभाव प्रगट होता है ॥ १८ ॥ अगुरु
लघु गुणधारी सिद्धका इष्ट करनेसे अगुरु लघु गुण सहित सिद्धभाव प्रगट होता है ॥ १९ ॥ बाधा रहित
सिद्धका प्रेम करनेसे बाधारहितपना पैदा होता है ॥ २० ॥ क्षायिक भावसे प्रेम करनेसे क्षायिक भाव
झलकता जाता है ॥ २१ ॥ मोक्षमार्गमें इष्ट करनेसे मोक्षमार्ग तप होता जाता है ॥ २२ ॥ गुप्त आत्मामें

इष्ट भाव करनेसे गुप्त आत्मा प्रगट होता जाता है ॥ २३ ॥ आत्म गुफामें प्रेम करनेसे आत्मीक गुफामें प्रवेश होता जाता है ॥२४॥ सिद्धपदमें प्रेम करनेसे सिद्धपद प्रगट होता है ॥२५॥ स्वानुभवसे प्रेम करनेसे स्वानुभव वढ़ता जाता है ॥२६॥ शुद्ध मोक्ष स्थानका प्रेम करनेसे शुद्ध स्थानका ध्येय सफल होता जाता है ॥ २७ ॥ स्वरूपाचरण चारित्रसे प्रेम करनेसे चारित्र वढ़ता जाता है ॥ २८ ॥ आत्माकी शक्तियों पर प्रेम करनेसे आत्माकी शक्तियां प्रगट होती हैं ॥ २९ ॥ स्वयं क्षायिक सम्यग्दृष्टी होनेसे क्षायिक भाव प्रगट होता है ॥ ३० ॥ गुण–समूह आत्मामें द्वेष करनेसे आत्माका विकास होता है ॥ ३१ ॥

ध्रुव अविनाशी तत्वमें प्रेम करनेसे ध्रुव तत्व झलकता जाता है ॥ ३२ ॥ ज्ञानमें रमणताका प्रेम करनेसे ज्ञानमें रमण वढ़ता जाता है ॥ ३३ ॥ अनन्त ज्ञानमें रमणका प्रेम करनेसे अनन्त ज्ञानमें रमण वढ़ता जाता है ॥३४॥ स्थूल सूक्ष्म ज्ञाता आत्मामें रमण करनेसे आत्माका रमण वढ़ता जाता है ॥३५॥ कुज्ञानके दूर होनेसे इष्ट सुज्ञान प्रगट होता है ॥ ३६ ॥ कुमति ज्ञानके जानेसे इष्ट सुमति ज्ञान प्रगट होता है ॥ ३७ ॥ कुश्रुत ज्ञानके जानेसे इष्ट सुश्रुत ज्ञान प्रगट होता है ॥३८॥ कुअवधिज्ञानके जानेसे इष्ट सुअवधिज्ञान प्रगट होता है ॥ ३९ ॥

स्थान श्रुति पद उत्पन्न हितकार स्थान श्रुति पद ४०, इस्ट उत्पन्न पद ४१, उत्पन्न उत्पन्न रमण ४२, उत्पन्न उत्पन्न इस्ट रमण ४३, उत्पन्न उत्पन्न इस्ट इस्ट रमण ४४, चेत औकास इस्ट रमण ४५, चेत औकास उपत्न रमण ४६, स्थान इस्ट आयरन स्थान उत्पन्न आयरण ४७, रमण रंज नन्द आनन्द इस्ट गुपित न्यान रमण ४८, इस्ट इच्छ गुपित उत्पन्न इच्छ न्यान रमण ४९, पद ईजैति अर्थ इस्ट रमण पद ईजैति अर्थ उत्पन्न रमण ५०, मध्य गुपित अनन्त इस्ट रमण मध्य गुपित अनन्त इस्ट उत्पन्न रमण ५१, उत्पन्न ममल इस्ट रमण उत्पन्न सुद्ध ममल ५२, उत्पन्न रमण आत्म गुण गुपित ठहकार इस्ट रमण ५३, आत्म गुण गुपित ठहकार मुक्ति उत्पन्न रमण ५४, स्थान स्थान इस्ट उत्पन्न आयरण मुक्ति तीर्थकर उत्पन्न सुभाव ५५, तस्य स्थान स्थान आवरन न्यान इस्ट उत्पन्न आवरण करोति ५६, किंविसेप–जया अनिष्ट वय तत्र क्रिया

क्लिस्ट ५७, अनिष्ट तव दान पूजा क्लिष्ट ५८, अर्थ विद्या व्याकरण सिष्या तर्क निरीष्यण ज्योतिष वेदांग छन्द वेद अनिष्ट ५९, मीमांसा न्याय अनिष्ट ६०, धर्म अधर्म अनिष्ट ६१, पुरान विकथा कला अनिष्ट ६२, काव्य अनिष्ट ६३, उच्चाटन मोहण स्थंभन विषय विसेष प्रपंच विभ्रम अनंत ६४, अमर मरह पिंगल अंक अर्थ सूरचंद संक्रम अग्नि पंचाग्नि जट नारक श्रुत अनन्त ६५, जिन अजिन पद लेपन कषाय मल मिथ्या सल्य भय जनरंजन कलरंजन मनरंजन दर्सन मोहध आर्त रौद्र अनन्त ६६, विषय इष्ट उत्पन्न सहित वात वाय विसेप स्थान उत्पन्न हितकार सहकार जान पद वेद अनन्त आवरण, न्यान आवरण, दर्सन आवरण, मोहन आवरण, अन्तराय आवरण जं स्थान न्यान उत्पन्न तं स्थान आवरण न्यान वातवाइ सुभाव वातकाइ जीव उत्पन्न प्रवेस भवतु वातकाइ विसेष ६७, जदि कदि कालंतर भ्रमण सहकार भ्रमण उपयोग रहित दुःख अन्तर्मुहूर्त बाइस सहस्र चौवीस वार जामण मरण भवति—६८ ।

अर्थ—पांच परमेष्टीके पदोंकी स्तुति करनेसे हितकारी पांचों पद स्तुति योग्य उत्पन्न होते हैं ॥४०॥ इष्ट परमात्मपद झलक जाता है ॥ ४१ ॥ आत्मामें रमण बढ़ता जाता है ॥ ४२ ॥ इष्ट पदका रमण बढ़ता जाता है ॥ ४३ ॥ परमेष्टीपदका रमण बढ़ता जाता है ॥ ४४ ॥ अनुभवने योग्य अनन्त ज्ञानके इस्ट पदमें रमण होती है ॥ ४५ ॥ अनुभवने योग्य अनन्त ज्ञानका रमण बढता जाता है ॥ ४६ ॥ गुणस्थान गुणस्थानमें जैसे २ आत्मीक तत्वमें रमण होता है वैसे ही चारित्र बढ़ता जाता है ॥४७॥ आत्मानंदकी मगनता जैसे जैसे होती है गुप्त आत्मज्ञानमें रमण बढ़ता जाता है ॥ ४८ । साधने योग्य शुद्ध पदका जैसा जैसा प्रेम होता है वैसे वैसे शुद्ध ज्ञानमें रमण बढ़ता जाता है ॥ ४९ ॥ रत्नत्रयमें परिणमन होने-वाले आत्मीक इष्ट पदमें रमण होनेसे रत्नत्रयमई पदमें रमण बढ़ता जाता है ॥ ५० ॥ अनन्त गुण सहित आत्माके भीतर जैसे प्रेमसे रमण होना है अनन्त गुण सहित आत्मामें रमण बढ़ता जाता है ॥ ५१ ॥ इष्ट शुद्धोपयोगमें रमण करनेसे शुद्ध निरंजन भाव झलकता जाता है ॥ ५२ ॥ आत्माके गुणोंमें रमण होनेसे गुप्त स्थिर आत्मतत्वमें रमण होता है ॥ ५३ ॥

आत्माके गुणोंमें स्थिति होती है तब मोक्ष सुभावमें रमण झलकता है ॥ ५४ ॥ हरएक पद या अवस्थामें इष्ट आत्मामें आचरण करनेसे मोक्षका व तीर्थंकरका स्वभाव प्रगट होता है ॥ ५५ ॥ जिस जीवके भीतर हरएक पदमें इष्ट आत्माके ज्ञानपर परदा होता है, वह मिथ्यादृष्टी, मिथ्याज्ञानी होता है ॥ ५६ ॥ विशेष यहां वह व्रत, तपका आचरण मिथ्यात्व सहित करके इष्ट भावको न पाता हुआ क्लेश उठाता है ॥ ५७ ॥ मिथ्यात्व सहित अनिष्ट तप करता है, दान करता है, पूजा करता है, क्लेश उठाता है ॥ ५८ ॥ उसका अर्थ शास्त्रका ज्ञान व्याकरण, शिक्षा, तर्क, न्याय, ज्योतिष, वेदांत, छन्दका ज्ञान लाभकारी नहीं होता है ॥ ५९ ॥ मीमांसा व नैय्यायिक शास्त्रज्ञान हानिकारक होता है ॥ ६० ॥ मिथ्यादृष्टीका धर्म व अधर्म साधन दोनों अनिष्ट हैं, हानिकारक हैं ॥ ६१ ॥ पुराण कथा आदि सब अहितकारी होते हैं ॥ ६२ ॥ काव्यज्ञान व कवितापना अनिष्ट होता है ॥ ६३ ॥ वह उच्चाटन मंत्र, मोहनमंत्र, स्तम्भन मंत्र करता है, विषयोंकी विशेष प्रीति होती है। उनके लिये प्रपंच व चिंताएँ अनन्त प्रकारकी होती हैं ॥ ६४ ॥ वह मिथ्यात्वी अमरकोष, महाभारत, पिंगलशास्त्र, अङ्कगणित, अर्थ विद्या, सूर्य व चन्द्रमाके भ्रमणसे ज्योतिषका ज्ञान, पञ्चाग्नि तप तपना, नट करना, नाटक खेलना, आदि अनन्त प्रकारके कार्य करता है ॥ ६५ ॥ वह अजित वीतराग पदका लोप करता है, कषायोंके मलसे मैला रहता है, मिथ्यात्वमें भरा होता है, माया, मिथ्या, निदान, शल्य सहित होता है, भयवान होता है, मनरंजन, शरीर रंजन, मन-रंजन भावोंमें फँसा रहता है, दर्शन मोहमें अन्धा होता है, आर्त व रौद्र ध्यानके अनन्त जालोंमें फँसा रहता है ॥ ६६ ॥

वह इंद्रियोंके इष्ट विषयोंको पैदा करता रहता है उसीसे कर्म बांधकर वायुकायमें पैदा होता है, वहां हितकारी सहकारी मोक्षमार्गके ऊपर अनन्त आवरण रहता है। उसको ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अन्तराय चारोंका प्रबल आवरण होता है, आत्मज्ञान जहां पैदा होता है। उस सम्यक्त भावपर आवरण होता है, उसका स्वभाव वातकायवाला होजाता है, वह वायुकायमें उत्पन्न होता है ॥ ६७ ॥ कालांतरमें भ्रमण करते करते उपयोगकी शुद्धता विना महान् दुःख भोगता है। कभी लब्ध्य पर्याप्त वायु-कायमें पैदा होता है तब एक अन्तर्मुहूर्तमें लगातार स्थूलमें ६०१२ सूक्ष्ममें ६०१२ सब १२०२४ दफे क्षुद्र भव धार जन्म मरण करता है ॥ ६८ ॥

जदि कदि कालंतर स्थान आवरण विसेष सुभाव उत्पन्न लब्धि भवति तदि कालत्रय विकल स्थान आवरण, सुभाव ग्रहण ग्रहतै अनन्त चतुष्टै सुभाव दर्सन न्यान चरण, सम्यक्‌दर्शन सम्यक् न्यान सम्यक् चरण, अनन्त दर्सन, अनन्त न्यान, अनन्त वीय, अनन्त सौख्य, श्री सम्यक्‌दर्शन श्री सम्यक् न्यान श्री सम्यक चरण, बल वीर्ज विन्यान, सक सल्य भय राग दोष रहित, घाति कर्म आवरण विली उत्पन्न मिली मुक्त विली विनद विली सुपन विली अन्मोद न्यान अवल वली विषय गली जेन केन स्थान आवरण सुभाव उत्पन्न सुभाव न्यान अन्मोद जेन केनापि आवरण सुभाव मुक्ति गत ।

अथ—उसी वायु काय जीवको भ्रमण करते करते जब सैनी पंचेन्द्रिय मनुष्य गति प्राप्त हो और वह सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति करे, विशेष स्वभावको प्रकाश करे। आत्मीक स्वभावमें आचरण करे तब तीन कालमें सदा ही शुद्ध आत्माके भीतर रमण करते ही स्वभावका ग्रहण हो, शुद्धोपयोग होजावे । अनन्त चतुष्टय स्वभावको स्मरण करे, निश्चय रत्नत्रयमें अनुभवशील हो तथा सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्रकी पूर्ण प्रगटता हो । अनन्त दर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तवीर्य, अनन्त सुखका प्रकाश हो, रत्नत्रय स्वभावमें आचरण हो, आत्मबलका व आत्मज्ञानका झलकाव हो। सर्व शङ्काएँ, शल्य, भय, रागद्वेष दूर होजावे । चार घातीय कर्मोंका क्षय हो, जन्मका नाश हो, इंद्रियभोगोंका क्षय हो, दुःखका नाश हो, स्वप्न अवस्थाका नाश हो, स्वरूपमें जागृत रहे, आनन्द व ज्ञान व अनुपम वीर्य प्रगट हो, विषयोंकी कांक्षा नहीं रहे । अपने शुद्ध प्रदेशोंमें ही आचरण करे, तब ज्ञानानन्द स्वभावके भीतर आचरण करता हुआ मुक्तिको प्राप्त होजावे ।

पृथ्वी काय निरूपणं—स्थान आवरण थावर जेन केनापि स्थान आवरण जिनवर आवरण विसेष १, स्थान उत्पन्न उत्पन्न न्यान अन्मोद दिस्टि २, इस्ट प्रियो दिष्टि ३, उत्पन्न प्रियो इष्टि ४, इष्ट प्रियो ५, इष्टि उत्पन्न प्रियो ६, दर्स इष्ट प्रियो ७, दर्स उत्पन्न प्रियो ८, लष्य

इष्ट प्रियो ९, लष्य उत्पन्न प्रियो १०, अर्थ इष्ट प्रियो ११, अर्थ उत्पन्न प्रियो १२, सुयं अर्क १३, इस्ट सुर रमण प्रियो १४, सुयं अर्क इस्ट सुयं रमण उत्पन्न प्रियो १५, कमल इस्ट प्रियो १६, कमल उत्पन्न इस्ट प्रियो १७, तत्काल इस्ट रमण प्रियो १८, तत्काल इस्ट उत्पन्न उत्पन्न प्रियो १९, कमल ठहकार इस्ट प्रियो २०, कमल ठहकार इस्ट उत्पन्न प्रियो २१, प्रियो उत्पन्न प्रियो २२, प्रियो ठहकार मुक्ति प्रियो २३, दिस्टि ईर्जे चेत इस्ट प्रियो २४, दिस्टि ईर्जे चेत उत्पन्न प्रियो २५, न्यान सहकार इस्ट कलन प्रियो २६, न्यान सहकार इस्ट कलन उत्पन्न प्रियो २७, विन्यान षिपक दंड उत्पन्न इस्ट प्रियो २८, विन्यान षिपक दंड उत्पन्न उत्पन्न प्रियो २९, रिति ईर्जे इस्ट रमण प्रियो ३०, रिति ईर्जे इस्ट उत्पन्न रमण प्रियो ३१. कषाय मल कम्म विषय पय इस्ट प्रियो ३२, कषाय मल कम्म षिपक उत्पन्न न्यान अन्मोद प्रियो ३३, निसंक न्यान इस्ट प्रियो ३४, निसक न्यान इस्ट उत्पन्न प्रियो ३५, संक सल्य संक भय विली इस्ट प्रियो ३६, संक सल्य संक भय विली इस्ट उत्पन्न प्रियो ३७, व्रति सरणि विली निव्रति सरणि व्रिति न्यान अन्मोय प्रियो ३८, गम्य अगम्य इच्छ इस्ट प्रियो ३९, गम्य अगम्य इच्छ इस्ट उत्पन्न प्रियो ४० ।

अर्थ—जिसके आत्मापर आवरण विशेष होता है वह स्थावर कायमें जन्मता है । परन्तु जो कोई आत्मामें आचरण करता है, जिनेन्द्रके स्वभावमें विशेष आचरण करता है ॥१॥ उसके आत्माके रमणसे ज्ञानानन्दकी दृष्टि पैदा होजाती है ॥ २ ॥ हितकारी प्यारी दृष्टि झलक जाती है ॥ ३ ॥ प्यारा इष्ट प्रयोजन पैदा होजाता है ॥ ४ ॥ जहां सिद्धपद ही इष्ट व प्रिय हो ॥ ५ ॥ अपने इष्टके द्वारा ही प्रियपद पैदा होता है ॥ ६ ॥ जहां इष्ट व प्रिय आत्मीक पदका दर्शन हो ॥७॥ उस आत्मदर्शनसे प्यारा पद झलकता हो ॥८॥ जहां इष्ट प्यारे पदपर लक्ष्य हो ॥ ९ ॥ तब इस लक्ष्यसे प्रियभाव पैदा होता है ॥ १० ॥ आत्मा पदार्थ ही इष्ट व प्यारा माने ॥ ११ ॥ उसी आत्म पदार्थके सेवनसे अपना आत्मपद प्रगट होता है ॥ १२ ॥

यह आत्मा स्वयं ही सूर्य समान तेजस्वी है ॥ १३ ॥ उसी आत्माके सूर्य समान स्वभावमें रमण प्रिय भासता है ॥ १४ ॥ स्वयं ही आत्मा सूर्य है। इस इष्ट भावमें स्वयं रमण करनेसे अपना प्रियपद प्रकाशित होता है ॥ १५ ॥ आत्मारूपी कमल ही इष्ट व प्रिय है ॥ १६ ॥ इसी कमलके द्वारा इष्ट प्रियपद प्रगट होता है ॥ १७ ॥ जिस समय इष्ट भावमें रमण होता है तब ही प्रियपद प्रगट होता है ॥ १८ ॥ जिस समय इष्टपदमें रमण होता है, तब प्रिय भाव बढ़ता जाता है ॥ १९ ॥

आत्मारूपी कमलमें स्थिति करनेसे इष्ट प्रिय भाव प्रगट होता है ॥ २० ॥ आत्मा कमलमें स्थित होनेसे इष्ट प्रिय भाव बढ़ता जाता है ॥ २१ ॥ जैसा जैसा उपादेय शुद्ध भाव हो जाता है वैसे वैसे वह भाव बढ़ता जाता है ॥ २२ ॥ उपादेय प्रिय शुद्धोपयोगमें ठहरनेसे मुक्ति प्यारी भासती है ॥ २३ ॥ जब दृष्टि चेतने योग्य आत्मामें परिणमन करती है तब अपना प्रिय पद इष्ट प्रगट होता है ॥ २४ ॥ जब चेतने योग्य आत्मामें दृष्टि रमण करती है तब प्रिय पद प्रगट होता जाता है ॥ २५ ॥ आत्मीक ज्ञानकी मददसे इष्ट भावमें अभ्यास होता है तब प्रिय भाव होता है ॥ २६ ॥ ज्ञानकी मददसे उपादेय शुद्ध भावके अभ्याससे प्रिय भाव बढ़ता जाता है ॥ २७ ॥ जब आत्मज्ञानके द्वारा क्षायिक भाव होजाता है तब इष्ट प्रिय पद प्रगट होता है ॥ २८ ॥ ज्ञानमई क्षायिक भावके द्वारा प्रिय शुद्ध भाव प्रगट होता है ॥ २९ ॥ इष्ट भावमें परिणमन करनेसे प्रिय शुद्ध भावमें रमण होता है ॥ ३० ॥ इष्ट भावमें परिणमन करनेसे प्रिय शुद्ध भावमें रमण बढता जाता है ॥ ३१ ॥ कषाय मल पैदा करनेवाले कर्मोंके क्षय करनेसे इष्ट प्यारा पद प्रगट होता है ॥ ३२ ॥ कषाय मलके कारण कर्मोंके क्षयसे ज्ञानानन्दमय प्रिय भाव पैदा होता है ॥ ३३ ॥ शङ्का रहित ज्ञानसे इष्ट प्रिय पद झलकता है ॥ ३४ ॥ शङ्का रहित ज्ञानसे इष्ट प्रिय पद चमकता है ॥ ३५ ॥ सर्व शङ्का, शल्य, भयसे रहित वह इष्ट प्रिय पद है ॥ ३६ ॥ शंका शल्य भयके चले जानेसे इष्ट प्रिय पदका प्रकाश बढता जाता है ॥ ३७ ॥ संसार व्यवहारके छोड़नेसे व मोक्षमार्गमें वर्तन करनेसे ज्ञानानन्द प्रिय भाव झलकता है ॥ ३८ ॥ वह स्थूल सूक्ष्म सबको जाननेवाला इष्ट प्रिय पद है ॥ ३९ ॥ स्थूल सूक्ष्मको जाननेवाले ज्ञानमें रमण करनेसे इष्ट प्रिय पद चमकता है ॥ ४० ॥

मूढ सुभाव विलयंति प्रियो ४१, अमूढ दिस्टि इस्ट इस्ट प्रियो ४२, अमूढ दिस्टि इस्टि उत्पन्न

न्यान अन्मोद प्रियो ४३, न्यानी दोस अनन्त विलीय प्रियो ४४, इस्ट न्यानी दोष उत्पन्न विली इस्ट प्रियो ४५, न्यानी ममल सुभाव इस्ट प्रियो ४६, न्यानी ममल अन्मोद उत्पन्न प्रियो ४७, न्यान विन्यान स्तुति इस्ट प्रियो ४८, न्यान विन्यान स्तुति उत्पन्न न्यान अन्मोद प्रियो ४९, न्यान विन्यान इस्ट इच्छ प्रियो ५०, न्यान विन्यान इस्ट उत्पन्न प्रियो ५१, परम तत्तु इस्ट सुभाव प्रियो ५२, परम तत्तु उत्पन्न इस्ट सूक्ष्म सुभाव अन्मोद न्यान प्रियो ५३, दिस्टि कमल सव्द अचष्य हितकार गुप्ति गुहिज न्यान विन्यान पद विंद इस्ट अन्मोद प्रियो ५४, दिस्टि कमल सव्द अचष्य हितकार गुपित गुहिज न्यान विन्यान पद विंद इस्ट उत्पन्न अनन्त न्यान अन्मोद परमेस्टि चतुस्टय रयनत्तय रमण अनन्त अन्मोद रमण विषय गलन अन्मोद न्यान प्रियो ५५।

जिन इस्ट उत्पन्न लब्धि प्रियो ५६, रमण प्रियो रमण सुभाव प्रियो ५७, रमण रंज प्रियो ५८, रमण कमल प्रियो ५९, रमण दिस्टि प्रियो ६०, रमण इस्टि प्रियो ६१, रमण रिस्टि इष्टि प्रियो ६२, रमण दिस्टि इस्टि रस्टि उत्पन्न प्रियो ६३, रमण समय रमण सह इस्टि प्रियो ६४, रमण समय रमण सह इस्ट उत्पन्न प्रियो ६५, रमण उत्पन्न सहकार औकास दिस्टि इस्टि प्रियो ६६, रमण उत्पन्न सहकार औकाम उत्पन्न न्यान प्रियो ६७, रमण अनन्त अन्मोद षिपक दिस्टि इस्टि प्रियो ६८, रमण अनन्त अन्मोद षिपक दिस्टि उत्पन्न रमण न्यान अन्मोय प्रियो ६९, रमण मुक्ति रमण जिननाथ रंज जिन नंद परन नंद नंत विसेष इस्ट प्रियो ७०, रमण मुक्ति रमण जिननाथ रंज जिन नंद परम नद उत्पन्न उत्पन्न हितकार सहकार गुपित गुहज इस्ट वज्र वृषभ नाराज संहनन सुभाव चतुस्टे चेत उपत्न तत्काल उत्पन्न रमण चतुस्टय सुयं रयन कमल दिस्टि

सुख्य अनन्त सुयं कम्म विलय सुयं बुद्ध न्यान रमण सुयं चेत ऊर्ध तिअथ मिलन परिणाम न्यान अन्मोद उत्पन्न प्रियो उत्पन्न हितकार रमण उत्पन्न सहकार रमण जिननाथ प्रियो ७१।

अमर प्रियो प्रमाण प्रियो ७२, जिन प्रमाण प्रियो ७३, इच्छ प्रमाण प्रियो ७४, पय परम पय प्रियो ७५, मुक्ति सौष्य विंद विन्यान प्रियो ७६, अनन्त चतुस्टय सुभाव प्रियो ७७, संस्थान प्रियो ७८, प्रीति प्रियो उत्पन्न अन्मोद अमल वली प्रियो ७९, विनंद विली उत्पन्न वेद अभेद प्रियो ८०, स्थान आयरण जिन परम जिन जिननाथ मुक्ति सुभाव सिद्धं ध्रुवं ८१, तस्य स्थान आयरण न्यान प्रियो अप्रियो भवति ८२, किंतु विसेष राग दोष गारौ दर्स अन्ध न्यान आवरण मिथ्या सल्य संक भय इस्ट उत्पन्न विसेष कषाय मल अनन्त विभ्रम प्रपंच संक सुभाव स्थान विप्रियो भवतु ८३, अर्पण सुनाई जदि आवरण स्थान उत्पन्न हितकार सहकार विन्यान पद दिगंत अनन्त स्थान न्यान उत्पन्न विषय संक प्रपंच विभ्रम सहकार स्थान आवरण अप्रियो भवतु तस्य सुभावेन स्थावर पृथ्वीकाय सन्मूर्छन उत्पन्न भवति पयोग उत्पन्न न भवति तस्य सुभाव भ्रमण बारहसहस्र चौवीस वार १२०२४। अंतर्मुहूर्त मध्यम जनम मरण सुभाव भ्रमण करोति।

अर्थ—मिथ्यात्वभावके दूर होनेसे प्रिय सम्यक्त भाव प्रगट होता है ॥ ४१ ॥ अमूढ़ दृष्टि अङ्ग होनेसे अर्थात् मूढतासे देखादेखी किसी भी धर्म क्रियाको न माननेसे विवेक पूर्वक धर्ममें प्रेम करनेसे इष्ट प्रिय भाव झलकता है ॥ ४२ ॥ अमूढ़दृष्टि भावमें प्रेम करनेसे व शुद्धात्माको यथार्थ मनन करनेसे ज्ञानानन्दसे पूर्ण प्यारा शुद्ध भाव पैदा होता है ॥ ४३ ॥ आत्मज्ञानीके अनन्त दोष दूर होजाते हैं, प्यारा शुद्ध भाव झलकता है ॥ ४४ ॥ आत्मज्ञानी ही यथार्थ है, उसके सर्व दोष जो रागादि भाव पैदा होते हैं वे सब दूर होजाते हैं व इष्ट प्यारा वीतराग भाव चमकता है ॥ ४५ ॥ आत्मज्ञानीका निर्मल स्वभाव इष्ट व प्यारा होता है ॥ ४६ ॥ जब ज्ञानी शुद्ध भावमें मगन होता है तब प्यारा उपादेय मोक्ष-

मार्ग प्रगट होता है॥ ४७ ॥ भेदविज्ञान पूर्वक आत्माकी स्तुति करनेसे इष्ट प्यारा शुद्ध भाव प्रगट होता है ॥ ४८ ॥ भेद विज्ञान पूर्वक परमात्माकी स्तुति करनेसे ज्ञानानन्दमय शुद्ध भाव प्रगट होता है ॥ ४९ ॥ भेद विज्ञानसे इष्ट उपादेय प्रिय शुद्ध भाव झलकता है ॥ ५० ॥ भेद विज्ञानका प्रेम करनेसे प्रिय पर्याय आत्मज्ञान पैदा होता है ॥ ५१ ॥

परमात्मके तत्वमें प्रेम करनेसे प्यारा स्वभाव प्रगट होता है ॥ ५२ ॥ परमात्मतत्वके द्वारा इष्ट व उपादेय सूक्ष्म स्वभावधारी आनन्दमय व ज्ञानमय प्रिय आत्मतत्व झलकना है ॥ ५३ ॥ सम्यग्दर्शन रूपी कमल इस शब्दसे अतीन्द्रिय आत्माका बोध होता है । इस हितकारी ज्ञानसे आत्माकी गुफामें गुप्त होनेसे ज्ञान व आनन्दमय पदका अनुभव होता है व इष्ट आनन्दमय प्रिय भाव झलकना है ॥ ५४ ॥ सम्यग्दर्शन रूपी कमल इस शब्दसे अतीन्द्रिय आत्माका बोध होता है, इस ज्ञानके द्वारा आत्मारूपी गुफामें गुप्त होनेसे शुद्ध ज्ञानका अनुभव करनेसे अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख, परमेष्टीपद, अनन्त चतुष्टय रमण व आत्मीक तत्वमें रमण, अनन्त सुखमें रमण, विषय सुखसे भिन्न आनन्द व ज्ञानमय प्यारा शुद्धोपयोग होता है ॥ ५५ ॥ वीतराग भावमें प्रेम करनेसे शुद्ध लब्धियां प्यारी झलकती हैं ॥ ५६ ॥ जैसे २ शुद्ध भावमें रमण होता है वैसे २ स्वभावका झलकाव होता है ॥ ५७ ॥ आनन्दमें रमण होता है ॥ ५८ ॥ कमल स्वभावी आत्मामें रमण होता है ॥ ५९ ॥ सम्यग्दर्शनमें रमण होता है ॥ ६० ॥ इष्ट तत्वमें रमण होता है ॥ ६१ ॥ खड्ग समान कर्मनाशक शुद्ध भावमें रमण होता है ॥ ६२ ॥ शुद्धोपयोग रूपी खड्गमें रमण करनेसे सम्यग्ज्ञानका प्रकाश होता है ॥ ६३ ॥ स्वरमण स्वरूप आत्माके भीतर रमण करनेसे उपादेय शुद्ध भाव चमकता है ॥ ६४ ॥ स्वरमण स्वरूप आत्माके भीतर रमण करनेसे शुद्ध भावका झलकाव बढ़ता जाता है ॥ ६५ ॥ आत्मामें रमणकी मददसे अनन्त ज्ञानकी ओर दृष्टि होनेसे प्रिय शुद्ध भाव होता है ॥ ६६ ॥

आत्मामें रमणसे अनन्त ज्ञानकी ओर दृष्टि होनेसे प्यारा अनन्तज्ञान प्रगट हो जाता है ॥ ६७ ॥ अनन्त आनन्द व क्षायिक सम्यग्दर्शनमें रमण करनेसे उपादेय शुद्ध भाव रहता है ॥ ६८ ॥ अनन्त आनन्द व क्षायिक सम्यग्दर्शनमें रमण करनेसे ज्ञानानन्दमें रमण रूप शुद्ध भाव झलकता है ॥ ६९ ॥ आत्मामें रमणसे मुक्तिमें रमण होता है, तब जिनेन्द्रका परमानन्द रूप स्वरूप अनन्त गुणपर्याय मय प्रगट होता

है ॥७०॥ आत्माके भीतर रमण करनेसे मुक्तिमें रमण होता है तब जिनेन्द्रका परमानन्द मय स्वभाव प्रगट होता है। वहां आत्मा आत्माकी गुफामें गुप्त रहता है। वज्र वृषभ नाराच संहननके समान न मिटनेवाला स्वभाव प्रगट होता है। अनन्त ज्ञानादि चतुष्टयके साथ सदा ही उन हीमें रमण रहता है अर्थात् स्वयं आत्मीक कमलमें रमण रहता है। स्वयं अनन्त सुखका वेदन होता है, कर्मोंका क्षय होता है, स्वयं बुद्ध केवलज्ञानमें रमण होता है। उत्कृष्ट स्वानुभव होता है। रत्नत्रयकी एकता रूप भाव ज्ञानानन्दमय रहता है। आत्माके रमणसे ही सिद्धपद प्रगट होता है ॥७१॥ उत्कृष्ट भाव ही उत्तम प्रमाण है या सम्यग्ज्ञान स्वरूप है ॥ ७२ ॥ यही वीतराग यथार्थ भाव है ॥७३॥ यही उपादेय सम्यग्ज्ञान है ॥७४॥ यही उपादेय परमात्मा पद है ॥ ७५ ॥ यही मोक्षके सुखका अनुभव है व ज्ञानका यथार्थ प्रेम है ॥ ७६ ॥ यही अनन्तज्ञानादि चतुष्टय स्वभाव है ॥ ७७ ॥ यही उपादेयभूत रूपातीत आत्माका ध्यान है ॥ ७८ ॥ यही प्रीति करने योग्य प्यारा तत्व है, जिससे अनुपम बलमय आनन्द झलकता है ॥७९॥ सर्व दुःखोंका विलय होकर परमानन्दका प्रकाश होता है ॥ ८० ॥

अपने ही शुद्ध प्रदेशोंमें आचरण करनेसे परम जिनेन्द्र मुक्त स्वभावी अविनाशी सिद्ध पद होता है ॥ ८१ ॥ जब आत्माके प्रदेशोंपर कर्मोंका आवरण होता है तब प्रिय आत्मज्ञान प्यारा नहीं भासता है ॥ ८२ ॥ विशेष यह है कि जब कि राग द्वेष मद व दर्शन मोहका उदय, ज्ञानावरणका उदय, मिथ्या शल्य, शंका, भय रहता है, तथा अपने इष्ट स्वभावमें कषायका मल प्रगट रहता है अनन्त प्रकारके भ्रामक प्रपञ्च भाव शंकाशील भाव होते हैं तब अपना निज स्थान प्यारा नहीं भासता है ॥ ८३ ॥ स्वभाव पर आवरण होता है, जबतक आवरण रहता है तबतक आत्माका हितकारी सहकारी भेदविज्ञान जिससे अनन्त ज्ञान उत्पन्न होता है वह विषयवासनासे शंकासे अनेक भ्रमरूप प्रपञ्चसे छिपा रहता है तब भेद विज्ञान प्रिय नहीं भासता है। इस मिथ्यात्व भावके कारण स्थावर पृथ्वीकायमें आकर जन्म धारता है, सन्मूर्छन उत्पन्न होता है। सम्यग्दर्शनका उपयोग पैदा नहीं होसक्ता है। मिथ्यात्व स्वभावसे भ्रमण करते हुए क्षुद्र भव सूक्ष्मके ६०१२ स्थूलके ६०१२ ऐसे कुल बारह हजार चौवीस एक अन्तर्मुहूर्तमें धारण करता है। श्वासके अठारह भागमें जन्म व मरण करता है। इसतरह यह जीव भ्रमण करता है।

जदि कदि कालंतर भ्रमण किंविसेप—स्थान आवरण सुभाव उत्पन्न १, आवरण न्यान अन्मोद प्रियो २, स्थान रमण रंज आनन्द रमण स्थान प्रियो ३, उत्पन्न उत्पन्न हितकार ४, उत्पन्न उत्पन्न सहकार ५, उत्पन्न न्यान विन्यान ६, उत्पन्न पद परम पद ७, दिगंत दिस्टि ८, सव्द असव्द गुपित गुहिज न्यान स्थान प्रियो ९, आवर्ण विली १०, जन रंजन कल रंजन मन मंगल दर्स अंध विली ११, आसा स्नेह लाज, लोभ भय गारव आलस्य प्रपंच विभ्रम विली १२, मिथ्या संक सल्य भय इस्ट उत्पन्न विली १३, मुक्ति विनन्द विली १४, न्यान अन्मोद अवल वली १५, विषय विली १६, अनृत अनिष्ट आचरण तव क्रिया अनिस्ट स्रुत अन्यान विली १७, स्थान न्यान अन्मोद १८, स्थान आयरण न्यान प्रियो १९, आनन्द जिन रंज जिननाथ रमण नन्द परमानन्द २०, स्थान आवरण सुभाव जेन केनापि जीव विकल अनन्त चतुष्टय सुस्य सत्ता वोध चेतन स्थान आवरण २१, नन्त विसेप जिन उत्त जिन वयण जिन दस जिन अलष्य जिन इच्छ जिन रंज जिन रमण जिन सुभाव २२, जिन सूष्म सुभाव कम्म सुयं विलय २३, स्थान न्यान आवरण सुभाइ जेन तेन निर्वाण पद सिद्धं धुवं ॥ २४ ॥

अर्थ—यही पृथ्वीकायिक जीव कालांतर भ्रमण करते करते मानव गति पावे, वहां विशेषता यह है कि अपने आत्माके भीतर आचरण करनेका स्वभाव अर्थात् सम्यग्दर्शन प्रगट हो १, तव ज्ञानानन्द मय उपादेय स्वभावमें आचरण करे ॥ २ ॥ स्वरूपमें रमण करते हुए आनन्दमें रमण हो व आत्मा ही उपादेय प्रगट हो ॥ ३ ॥ वारवार हितकारी आत्मानुभव हो ॥ ४ ॥ वारवार इसीकी सहायता हो ॥ ५ ॥ जिससे ज्ञानका प्रकाश वढ़ता जावे ॥ ६ ॥ जिससे परमात्म पद झलक सके ॥ ७ ॥ अनन्त दर्शन इष्ट भासे ॥ ८ ॥ ॐ आदि शब्दोंके द्वारा शब्द रहित गुप्त आत्माकी गुफामें ज्ञान रमण करे, आत्मा ही उपादेय भासे ॥ ९ ॥ ज्ञानावरण दर्शनावरणकी शक्ति क्षय होती जावे ॥ १० ॥ जन रंजन भाव, शरीर रंजन भाव, मन रंजन भाव आदि मिथ्या दर्शनका अन्धकार क्षय होजावे ॥ ११ ॥ आशा, स्नेह, लाज, लोभ, भय, मद,

आलस्य, प्रपञ्च व विभ्रम सब चला जावे ॥ १२ ॥ मिथ्या शङ्का, शल्य, भय आत्माके सम्बन्धमें विला जावे ॥ १३ ॥ भोगोंका झूठा सुख जो दुःखरूप है उसकी इच्छा मिट जावे ॥ १४ ॥ ज्ञान आनन्दके भीतर अनुपम बल प्रगट होजावे ॥ १५ ॥ सर्व इंद्रियोंके विषयोंकी कामना विला जावे ॥ १६ ॥ झूठा पापकारी चारित्र, तप व क्रियाकांड, अहितकारी शास्त्रका मिथ्या ज्ञान ये सब विला जावे ॥ १७ ॥ आत्माके भीतर ही ज्ञान आनन्द सहित रमण करे ॥ १८ ॥ स्वरूपाचरण चारित्रसे आत्मा ही प्यारा भासे ॥ १९ ॥ वीतरागभावमें परमानन्द सहित मग्नता हो ॥ २० ॥ स्वभावके भीतर आचरण करनेसे जब कभी यह जीव शरीर रहित होजावे, अनन्तज्ञानादि चतुष्टय प्रगट करे, सुख, सत्ता, चैतन्य, बोध, निश्चय चार प्राणोंमें रमण करे ॥ २१ ॥ अनन्त गुण प्रगट हो, जैसा जिनेन्द्रने कहा है, जैसा जिनवाणीमें है, जैसा जिनेन्द्रने देखा है, जैसा जिनेन्द्रका अनुभव है, जैसा जिनेन्द्रको उपादेय है, जिसमें जिनराज रमण करते हैं जो जिन भगवानका स्वभाव है ॥ २२ ॥ ऐसे अतीन्द्रिय सूक्ष्म स्वभावके प्रगट होते ही सब कर्म स्वयं क्षय होजाते हैं ॥ २३ ॥ अपने ही भीतर ज्ञानका आचरण होता है, स्वभावका प्रकाश होता है, इसीको निर्वाणपद, सिद्धपद, ध्रुव अविनाशी पद कहते हैं ॥ २४ ॥

भावार्थ—पृथ्वीकायिक जीव भी कभी उन्नति करते करते मनुष्य होकर सम्यग्दर्शनको पा गुणस्थानोंमें चढकर साधुके चारित्र द्वारा कर्मोंका क्षय करता हुआ पहले शरीर सहित अरहन्त फिर शरीर रहित सिद्ध होजाता है, निर्वाण नाथ होजाता है।

वनस्पति काय विवरण—अथ वनस्पति काय उत्पत्ति स्थान विन्यान सहकार पतनं करोति १, तिअर्थ विन्यान आवरण करोति वनस्पति काय जीव भवति विन्यान न्यान सुद्ध निरूपनं २, उत्पन्न न्यान विन्यान विंद ३, परिणइ प्रमाण इस्ट उत्पन्न उत्पन्न न्यान विन्यान विंद ४, उत्पन्न इस्ट उत्पन्न दिस्टि इस्टि इस्ट विन्यान विंद ५, इस्ट इस्ट ज्योति उत्पन्न उत्पन्न दिस्टि इस्ट विन्यान विंद ६, उत्पन्न उत्पन्न सब्द असब्द गुपित सब्द कमल विन्यान इस्ट उत्पन्न सर ७, सात विन्यान सब्द उत्पन्न दिस्टि इस्टि ८, चौदह इस्ट उत्पन्न विन्यान सुयं कमल इस्ट उत्पन्न

विन्यान विंद १, उत्पन्न सुयं कमल उत्पन्न दर्स इस्ट दर्स उत्पन्न विन्यान विंद १०, कमल इस्ट उस्ट इस्ट उत्पन्न विन्यान विंद ११, सुयं उत्पन्न सुय लब्धि इस्ट उत्पन्न विन्यान १२, सुयं हितकार रमण इस्ट उत्पन्न विन्यान विंद १३, हितकार सुयं लब्धि इस्ट उत्पन्न विन्यान विंद १४, सुयं हितकार काए २ कासे २ रूवे ४ सब्दे ४ मनपर्जय ४ सोलही सुयं लब्धि इस्ट उत्पन्न विन्यान विंद १५, सुयं सुय लब्धि षिपक इस्ट उत्पन्न विन्यान विंद १६, सुयं षिपक स्कन्ध ध्रुव गुण कुन्यान तीन विली १७।

स्थान हितकार पद उत्पन्न चेत १८, स्थान आवरण इच्छ गम्य अगम्य पद १९, ईर्जंति अर्थ मध्य रमण आरूह २०, उत्पन्न उत्पन्न अर्थ गुप्ति ठहकार मुक्ति २१, इस्ट उत्पन्न विसेष विन्यान २२, सुयं उत्पन्न गुहिज गुपित गुहिज रमण २३, जिननाथ कमल रमण २४, वज्र वृषभ नाराच संहनन रंज जिन रंज नंद २५, परम विन्यान न्यान् इस्ट उत्पन्न २६, विसेष विन्यान सुयं सद्भाव प्रियो २७, अनन्त भय अवकास रमण २८, ठहकार मुक्ति विन्यान २९, कांष्या कम्म विली न्यान ३०, निःकषाय इस्ट उत्पन्न विन्यान ३१, कमल डंड हितकार तत्काल रेठ टंकोत्कीर्ण इस्ट उत्पन्न विन्यान प्रियो ३२, रमण कमल डंड रमण इस्ट उत्पन्न दिस्टि इस्टि विन्यान ३३, सुयं सुभाव चरण वीर्ज अनन्त सम्मत्त उत्पन्न सम पद्वी ३४, साधु आचरण वीर्ज दस अवहि न्यान अवहि लेश्या पीत इत्यादि।

अर्थ—अब वनस्पतिकायमें जीवकी उत्पत्तिको कहते हैं, जो जीव आत्मज्ञानसे गिर जाता है। जिसके रत्नत्रय धर्म पर आवरण होता है वह जीव मिथ्यात्वी वनस्पतिकायमें आकर जन्म धारण करता है ॥ १ ॥ शुद्ध आत्मज्ञानका कथन करते हैं ॥ २ । जब भेदविज्ञानके द्वारा आत्माका अनुभव पैदा होता है ॥ ३ ॥ तब सम्यग्ज्ञानमें परिणमन करता हुआ उसके आत्माका अनुभव बढ़ता जाता है ॥ ४ ॥ शुद्ध

स्वरूप ही उपादेय है, इस इष्ट भावसे आत्माका दर्शन इष्ट भासता है व प्रिय आत्मानुभव जागृत रहता है ॥ ५ ॥ जैसे जैसे आत्मज्योतिका प्रेम बढ़ता जाता है वैसे २ आत्मदर्शन व आत्मानुभव बढ़ता जाता है ॥ ६ ॥ ॐ आदि शब्दोंके द्वारा शब्द रहित आत्मा आत्माके भीतर झलकता है। शब्दोंकी सहायतासे कमल समान विकसित ज्ञान भावको उत्पन्न करनेके लिये शुद्धात्मीक रमण रूपी सरोवर प्रगट होता है ॥ ७ ॥ सात भङ्ग रूप स्याद्वाद वाणीके ज्ञानसे जो पदार्थोंका यथार्थ ज्ञान हुआ है उसमें आत्मज्ञान उपादेय है या सात तत्वोंके ज्ञानमें आत्मज्ञान इष्ट है ॥ ८ ॥ चौदह गुणस्थान, चौदह मार्गणा स्थान, चौदह जीव समासके ज्ञानसे जो बोध होता है उसमें कमल समान शुद्धात्माका ज्ञान सार है, उसीके द्वारा आत्माका अनुभव होता है ॥ ९ ॥ आत्मारूपी कमलमें स्वयं सम्यग्दर्शन पैदा होनेसे आत्माका अनुभव होता है ॥१०॥ आत्मारूपी कमलके प्रकाशसे अत्मानुभव होता है ॥११॥ जब आत्मामें स्वयं सम्यग्दर्शनकी लब्धि होती है तब आत्माका यथार्थ ज्ञान होता है ॥ १२ ॥ तब हितकारी छः अक्षरी मन्त्र (ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः) में या छः द्रव्योंमें विचार करनेसे आत्माका अनुभव होता है ॥ १३ ॥ हितकारी आत्माकी शक्तिसे ही आत्माका अनुभव होता है ॥ १४ ॥ सोलह तरह मन वचन कायके निरोधसे स्वयं स्वात्मानुभवका लाभ होता है। काय दो अर्थात् कायका आसन पद्मासन है या कायोत्सर्ग है, कासे २ अर्थात् भूमिका स्पर्श कठोर या कोमल है, रूवे ४ अर्थात् आंखसे सुन्दर, असुन्दर, दीर्घ, लघु देखना। शब्दे ४ अर्थात् वचन सत्य, असत्य, उभय या अनुभय कहना। मनपर्जय ४ अर्थात् सत्य आदि ४ प्रकार मनका विचार, इन १६ प्रकार मन वचन कायकी ये क्रिया छोड़कर मन वचन काय रुकते हैं ॥ १५ ॥

जब यह जीव स्वयं क्षपकश्रेणीपर चढ़ता है तब विशेष आत्माका अनुभव होता है, ज्ञानज्ञानमें रमण करता है ॥ १६ ॥ जब यह जीव प्रक्षादिक भावरूप आत्मामें या द्रव्यके अविनाशी गुणोंमें रमण करता है तब तीन मिथ्या ज्ञान, कुमति, कुश्रुति कुअवधि नहीं रहते हैं ॥ १७ ॥ आत्मानुभवके द्वारा चेतनशक्तिका प्रकाश होता है ॥ १८ ॥ आत्मामें ही आचरण करनेसे स्थूल व सूक्ष्म पदार्थोंका ज्ञान होजाता है ॥ १९ ॥ निश्चय रत्नत्रयके भीतर रमण करता हुआ गुणस्थानोंपर चढ़ता है ॥ २० ॥ जैसे जैसे आत्मामें ध्यान निश्चल होता है, मुक्ति निकट आती जाती है ॥ २१ । तब ज्ञानका विशेष प्रकाश होता जाता है ॥ २२ ॥

स्वयं आत्मीक गुफामें गुप्त रूप निर्मल आत्मीक रमण होता है ॥ २३ ॥ तब यह परमात्मा जिनेन्द्ररूपी कमलके भीतर रमण करता है ॥ २४ ॥ वज्रवृषभ नाराच संहननके समान दृढ़तासे वीतराग भावमें आनन्द अनुभव करता है ॥ २५ ॥ परम ज्ञान इसीसे उत्पन्न होता है ॥ २६ ॥ जितना २ विशेष ज्ञान होता है अपने स्वभावमें दृढ़ता—रमणता बढ़ती जाती है ॥ २७ ॥ तब अनन्त ज्ञानके भीतर रमण होता है ॥ २८ अनन्त ज्ञानके प्रकाशसे निश्चल मुक्तिका ज्ञान होता है ॥ २९ ॥ इस शुद्ध केवलज्ञानके भीतर कोई इच्छा नहीं रहती हैं, इच्छाको पैदा करनेवाला मोह कर्म क्षय होगया है ॥ ३० ॥ कषाय रहित वीतराग विज्ञान झलकता है ॥ ३१ ॥ आत्मारूपी हितकारी कमलमें व उसके निश्चल टंकोत्कीर्ण स्वभावमें रमण करनेसे उपादेय केवलज्ञान पैदा होता है ॥ ३२ ॥ आत्मारूपी कमलके भीतर रमण करनेसे अनन्त दर्शन व अनन्त ज्ञान पैदा होता है ॥ ३३ ॥ स्वयं आत्माके स्वभावमें आचरण करनेसे व उसके अनन्त वीर्य स्वभाव, सम्यक्त स्वभावमें रमण करनेसे समभावका मद प्रगट होता है, सामायिक चारित्र होता है ॥ ३४ ॥ साधुओंको चारित्रके बलसे अवधि दर्शन व अवधि ज्ञान प्रगट होता है तब छठे व सातवें गुणस्थानमें पीत, पद्म, शुक्ल तीन लेश्याएँ प्रगट होती हैं ॥ ३५ ॥

इस्ट उत्पन्न न्यान विन्यान ३६, सुयं सूषम सुभाव ३७, चेत उत्पन्न दंड कपाट ३८, इस्ट उत्पन्न सूष्म ३९, सुयं न्यान विन्यान जग्त ४०, उत्पन्न नो उत्पन्न न्यान टंकोत्कीर्ण कमल कलण ४१, इच्छ न्यान उत्पन्न न्यान विन्यान ४२, सुयं सूषमघण आखहु उत्पन्न टंकोति पद परम पद ४३, तत्काल रमण पद इच्छ गुपित रमण पद परम ४४, उत्पन्न तिअर्थ ईर्ज मध्य रमण पद ४५, उत्पन्न उत्पन्न उत्पन्न पद कमल रमण ४६, आतम गुण गुपित उत्पन्न ठहकार मुक्ति इस्ट ४७, इस्ट उत्पन्न इस्ट उत्पन्न न्यान विन्यान ४८, सुयं सूषम सुभाव विन्यान विंद ४९, सुय पद विंद परम तत्तु परम सुकीय सुभाव ५०, सूषम क्रांति सुय लब्धि अलब्धि लब्धि विन्यान विंद ५१, अंग उत्पन्न दिस्टि सुक षिपक ५२, हृदय गहिर गुहिज जान पद विन्यान विंद ५३, परिणाम कलित विन्यान ५४, दिशा पूव सिर अग्र सुर्क दिस्टि दर्स षिपन न्यान नूत कमल प्रियो ५५।

इच्छ हृदय पच्छिम विक्त रूव गुप्ति ५६, वाइय गुहिज रमण उत्पन्न रमण ५७, उत्तर ईर्जे सहकार गुहिज सहकार न्यान ५८, ईसान उत्पन्न ऊर्ध रमण धुव उत्पन्न ५९, अर्थ अर्थ रमण दिस्टि दिप्ति ६०, इस्ट उत्पन्न दिस्टि ६१, उत्पन्न दिप्ति रमण ६२, इस्ट उत्पन्न विन्यान ६३, सिद्धं धुवं तीर्थंकर रमण मुक्ति ६४, सिद्धं धुव रोम रोम प्रियो रमण ६५, न्यान विन्यान मुक्ति रमण सिद्धं धुवं ६६, तस्य विन्यान किं न ६७, सुभावेन जनरंज राग कलरंज दोष मनरंज गारौ दस मोहध न्यान आवरण, दर्स आवरण, मोहण आवरण, अन्तराय न्यान संक सल्य संक भय सहकार कषाय भय मन वचन दिस्टि झडप सहकार क५।५ मल मिथ्या त्रितय समल उत्पन्न सहकार मिथ्या देव गुरु धर्म, कुदेव कुगुरु कुधर्म कुमति कुसंजम कुन्यान परिणय, मिथ्या देव मिथ्या गुरु मिथ्या धर्म मिथ्या संजम मिथ्या परिणय, मिथ्या प्रमाण, मिथ्या उद्देस मिथ्या परिणय मिथ्या प्रमाण मिथ्या संजम मिथ्या तप मिथ्या परिणय विसेष विन्यान पतनं करोति विन्यान लब्धि न भवति विन्यान न्यान पतनं प्राण मुख्य तस्य सहकार वनस्पति काय उत्पन्न भवति पयोग मलिन भवतु पतनं करोतु तस्य सहकार अठारह हजार छत्तीस १८०३६ अंतर्मुहूर्त जामण मरणं भवतु ॥ ६८ ॥

अर्थ—जब उपादेय आत्म तत्वपर लक्ष्य होता है तब आत्मज्ञान उत्पन्न होता है ॥३६॥ स्वयं सूक्ष्म अतीन्द्रिय स्वभाव अनुभवमें आता है ॥ ३७ ॥ आत्मानुभवके ही अभ्याससे दण्ड कपाट समुद्घात करनेवाले केवलज्ञानीका स्वभाव प्रगट होता है ॥३८॥ इष्ट आत्मीक भावसे ही सूक्ष्म अतीन्द्रिय स्वभाव झलकता है ॥ ३९ ॥ तब ज्ञानका प्रकाश स्वयं बढ़ता जाता है ॥ ४० ॥ बढ़ते बढ़ते टंकोत्कीर्ण निश्चल कमल समान आत्मामें रमण होता है ॥ ४१ ॥ यथार्थ ज्ञानसे ही केवलज्ञान प्रगट होता है ॥ ४२ ॥ स्वयं सूक्ष्म अतीन्द्रिय आत्माके स्वरूपमें आरूढ़ होनेसे परमात्माका निश्चल पद प्रगट होता है ॥ ४३ ॥ जिस समय शुद्ध पदके ध्यानमें तल्लीनता होती है तब ही गुप्त परमात्मपद प्रगट होता है ॥ ४४ ॥ तब ही

रत्नत्रयमें परिणमन होता हुआ आत्म रमण पद प्रगट होता है ॥ ४५ ॥ आत्म रमणसे बढ़ते बढ़ते शुद्धात्मारूपी कमलमें रमण प्रकट होजाता है ॥ ४६ ॥

आत्मामें एक भावसे रमण होनेसे निश्चल मोक्षपद प्रकाश होता है ॥ ४७ ॥ उपादेय तत्वके अनुभवसे ही ज्ञानका प्रकाश होता है ॥ ४८ ॥ स्वयं ही अतीन्द्रिय स्वभावका अनुभव होता है ॥ ४९ ॥ स्वयं ही आत्माके अनुभवसे परमतत्त्व अपने आत्माका स्वभाव झलकता है ॥ ५० ॥ सूक्ष्म ज्ञानके चमकनेसे स्वयं अपूर्व लब्धियें या शक्तियें प्रगट होतीं हैं, केवलज्ञानका प्रकाश होजाता है ॥ ५१ ॥ द्वादशांग वाणीके मननसे क्षायिक सूर्य समान अर्हंत पद प्रकट होता है ॥ ५२ ॥ मनकी गहरी गुफाके भीतर मोक्षमार्ग स्वरूप आत्मानुभव छिपा है जो मनके भीतर स्थिर होनेसे प्रगट होता है ॥ ५३ ॥ तब आत्माका परिणाम शुद्ध ज्ञानका ही स्वाद लेता है ॥ ५४ ॥ जैसे पूर्वदिशामें सूर्य उदय होता है तब कमल फूल जाता है वैसे पूर्वोक्त अभ्यास द्वारा आत्मानुभवरूपी सूर्यके प्रकाशसे क्षायिक ज्ञानका धारी कमल समान प्रिय अरहन्त पद प्रगट होजाता है ॥ ५५ ॥

मनके पश्चिम भागमें होनेसे अर्थात् मनके छिपनेसे गुप्त आत्म स्वभाव प्रगट होता है ॥ ५६ ॥ वायव्यदिशाकी गुफामें अर्थात् पवनको रोककर आत्माकी गुफामें रमण करनेसे आत्मानुभव उत्पन्न होता है ॥ ५७ ॥ उत्तरदिशामें परिणमनसे अर्थात उत्तम शुद्ध भावसे रमण करनेसे भीतर छिपा हुआ ज्ञान प्रगट होता है ॥ ५८ ॥ ईशानदिशासे उत्पन्न अर्थात परमात्माके स्वभावसे प्रगट जो शुद्ध भाव उसमें रमण करनेसे अविनाशी स्वभाव झलकता है ॥ ५९ ॥ परम पदार्थ आत्मामें रमणसे दर्शन ज्ञान प्रगट होता है ॥ ६० ॥ उपादेय तत्वसे ही दर्शन गुण प्रगट होता है ॥ १ ॥ व ज्ञान उत्पन्न होता है उसीमें रमण रहता है ॥ ६२ ॥ उपादेय तत्वमें रमण करनेसे केवलज्ञान होता है ॥ ६३ ॥ तब सिद्ध पद, अविनाशी पद, तीर्थंकर या रत्नत्रयमें रमण पद या मोक्षपद प्रगट होता है ॥ ६४ ॥ सिद्ध पद ध्रुव है, सिद्धका हरएक प्रदेश आपमें रमण कर रहा है ॥ ६५ ॥ वे ही ज्ञानमें रमण करते हैं, वे ही मुक्तिमें रमण करते हैं, वे ही सिद्ध हैं, ध्रुव हैं ॥ ६३ ॥ ऐसे शुद्ध तत्वका ज्ञान जिसको नहीं होता है उसका कारण क्या है ॥ ६७ ॥

उसका कारण यह है कि आत्माका स्वभाव जनरंजन रागसे, शरीररंजन दोषसे, मनरंजन मदसे, दर्शन मोहसे अन्ध होरहा है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अन्तराय चारों घातीय कर्मोंका ही

मन वचनका परिणमन
उदय है। ज्ञानमें शङ्का होनेसे, शल्य होनेसे, भय होनेसे, कषायोंके उदयसे, मन वचनका परिणमन
विभाव रूप होता है। कषायका मैल भावोंमें छाया रहता है। मिथ्या दर्शन, मिथ्या ज्ञान, मिथ्या
चारित्र तीनों मलीन होते हैं, इससे मिथ्या देव मिथ्या गुरु, मिथ्या धर्मको मानता है। कुदेव, कुगुरु,
कुधर्मकी संगतिसे कुमति ज्ञान होता है, मिथ्या संयम पालता है, मिथ्या ज्ञानमें रमण करता है, उसके
भीतर मिथ्या देव, मिथ्या गुरु, मिथ्या धर्मकी श्रद्धा होती है, मिथ्या संयम होता है, मिथ्या परिणति
होती है, मिथ्या प्रमाणमें उत्साह रहता है, मिथ्या प्रयोजन संसारवर्द्धक होता है, मिथ्या परिणति व
मिथ्याज्ञानसे संयम झूठा पालता है, झूठा तप करता है, मिथ्या भावोंमें परिणमन करनेसे भेदविज्ञानसे
गिरा हुआ रहता है, भेदविज्ञानकी प्राप्ति नहीं होती है, भेदविज्ञानके पतनसे प्राणधारीकी अवस्था यह
होती है कि मिथ्यात्वकी मददसे वनस्पतिकायमें जन्म प्राप्त करता है। जब उपयोग अशुद्ध रहता है
अपर्याप्त होकर एक अंतर्मुहूर्तमें अठारह हजार छत्तीस वार जन्म मरण करता है, सूक्ष्म साधारण निगो-
दके ६०१२, बादर निगोदके ६०१२, प्रत्येक वनस्पतिके ६०१२, इसतरह वनस्पतिकायके १८०३६ क्षुद्र भव
एक अन्तर्मुहूर्तमें धारण करके जन्म मरणके कष्ट उठाता है।

भ्रमण अनन्तकालं तत्र जेन केनापि जीव विन्यान न्यान सहकार उद्देस परिण प्रमाण
दिस्टि उत्पन्नं भवतु तदि निकल १, अतींद्री राग जिन राग दिस्टि जिन दिस्टि २, मन जिन
मन ३, वयन जिन वयन ४, उक्त जिन उक्त ५, सहकार जिन औकाम ६, जिन अन्मोद ७,
जिन षिपक ८, जिन मुक्ति ९, जिन सौख्य १०, जिन कमल ११, जिन रमण १२, जिन
न्यान १३, जिन लंकृत १४, जिन विन्यान १५, जिन न्यान विसेष १६, जिन विषय १७,
जिन मिथुन १८, जिन उत्पन्न १९, जिन हितकार २०, उत्पन्न जिन सहकार २१, उत्पन्न जिन
न्यान विन्यान २२, जिन पद परम तत्तु २३, जिन सुभाव २४, जिन सर्वाथ २५, जिन आसर
२६, जिन सुर रमण २७, जिन विंजन २८, जिन जिन पद २९, जिन अथ ३०, जिन तिथअ
३१, जिन समर्थ ३२, जिन समय अन्मोद ३३, जिन सहकार ३४, जिन औकास ३५, अर्थ जिन

३६, अनन्त जिन ३७, अन्मोद जिन ३८, षिपक जिन ३९, मुक्ति जिन ४०, सुयं लब्धि जिन ४१, तस्य सुभाव सुद्ध सार्थं करोति ४२, तस्य जीवस्य विन्यान सहकार निकलै सुद्ध विसेष ४३, अनन्त चतुष्टय ४४, सुख सत्ता बोध चैतन्य प्राण लब्धि विसेष ४५, राग दोष विलयंति ४६, आवर्ण घाति कम्म विलयति ४७, मिथ्या कषाय सल्य संक भय विलयंति ४८, उत्पन्न विली ४९, मुक्त विली ५०, विनन्द विली ५१, सुपन विली ५२, संसय विली ५३, पुग्गल विली ५४, पर्जाय विली ५५, पर सुभाव विली ५६, अन्यान विली ५७, न्यान आचरण परमेष्ठी न्यान विन्यान अन्मोद ५८, अवल वली ५९, विषय विली ६०, अन्मोद न्यान अवल वली अनन्त चतुष्टै सूक्ष्म प्रतिपाद न्यान अन्मोद मुक्ति सुद्ध सुद्धं भवति ॥ ६१ ॥

अर्थ—इसतरह वनस्पतिकाय आदिमें अनन्तकाल भ्रमण करते करते मानव जन्म पावे तब किसी जीवको भेदविज्ञानकी मददसे मोक्षका प्रयोजन होजाय, सम्यग्ज्ञानकी दृष्टि होजावे अर्थात् सम्यग्दृष्टी होजावे तो संसारसागरसे निकल जावे ॥ १ ॥ तब अतीन्द्रिय-आत्माके स्वभावमें प्रेम होजावे, वीतरागमय सम्यग्दर्शन होजावे, वीतरागभाव झलक जावे ॥ २ ॥ तब मन जिनेन्द्रमें लवलीन हो ॥ ३ ॥ वचनोंसे वीतराग जिनेन्द्रका वचन उच्चारण करे ॥ ४ ॥ जिनेन्द्र कथित कथनको ही बोले ॥ ५ ॥ अनन्त गुणधारी जिनेन्द्रको अपने मनमें विठाले ॥ ६ ॥ वीतराग भावमें आनन्द भोगे ॥ ७ ॥ वीतराग क्षायिक भावको भावे ॥ ८ ॥ वीतरागतासे पूर्ण मुक्तिका लाभ करे ॥ ९ ॥ वीतराग सुखमें मगन रहे ॥ १० ॥ जिनेन्द्ररूपी कमलमें बस जावे ॥ ११ ॥ जिन स्वभावमें रमण करें ॥ १२ ॥ वीतरागता गर्भित ज्ञान रक्खे ॥ १३ ॥ वीतराग भावको आभूषण बनावे ॥ १४ ॥ वीतरागमय भेद विज्ञानको साधे ॥ १५ ॥

तब वीतरागतामय ज्ञान बढता जायगा ॥ १६ ॥ वीतराग भावको ही अपना विषय भोग बना लेगीं ॥ १७ ॥ वीतराग भावमें ही लिपटा रहेगा ॥ १८ ॥ तब वीतराग भाव ही इस वीतराग मैथुनसे उत्पन्न होगा ॥ १९ ॥ वीतराग भाव ही हितकारी है ॥ २० ॥ वही भाव अरहन्त पदकी उत्पत्तिमें

सहकारी है ॥२१॥ इसीसे वीतरागमय ज्ञान होता जायगा ॥२२॥ तब वीतराग परमात्मतत्त्व प्रगट होगा ॥२३॥ वही अरहन्त जिनका स्वभाव है ॥२४॥ यह जिनपद सर्व पुरुषार्थसे पूर्ण है ॥२५॥ वीतराग जिनेन्द्रका स्वभाव अविनाशी है ॥ २६ ॥ तब वीतरागमय ज्ञान सूर्यमें रमण होता है ॥ २७ ॥ वीतरागभाव प्रत्यक्ष प्रगट होता है ॥ २८ ॥ वही परम जिनका पद है ॥ २९ ॥ वही यथार्थ आत्मा पदार्थ है ॥३०॥ वहीं निश्चय रत्नत्रय भाव है ॥ ३१ ॥ वहीं जिनेन्द्र प्रभु अनन्त वीर्यवान हैं ॥ ३२ ॥ वहीं वीतराग आनन्दमय परमात्मा हैं ॥ ३३ ॥ वहीं मोक्षका कारण वीतरागभाव है ॥ ३४ ॥ वही अनन्त वीतरागभाव है ॥३५॥ वही वीतराग पदार्थ है ॥ ३६ ॥ वही अनन्त शक्तिधारी जिनराज हैं ॥ ३७ ॥ वह आनन्दमय जिन हैं ॥ ३८ ॥ वही क्षायिक जिन हैं ॥ ३९ ॥ वही मोक्षरूप जिन हैं ॥ ४० ॥ जिन्होंने जिनपदको स्वयं प्राप्त किया है ॥ ४१ ॥ उनका स्वभाव शुद्ध रहता है ॥ ४२ ॥ उस जीवके भेदविज्ञानकी सहायतासे विशेष शुद्धि प्रगट होजाती है ॥ ४३ ॥ अनन्त ज्ञानादि चतुष्टय प्रगट होजाते हैं ॥ ४४ ॥ सुख सत्ता ज्ञान व स्वानुभूति मय चैतन्य ऐसे चार निश्चय प्राण प्रगट होजाते हैं ॥ ४५ ॥ राग द्वेष भाव दूर होजाते हैं ॥४६॥ चारों घातीय कर्म क्षय होजाते हैं ॥ ४७ ॥ मिथ्यात्व कषाय, शङ्का, भय, शल्यादि चले जाते हैं ॥ ४८ ॥ जन्म मरण बन्द होजाते हैं ॥ ४९ ॥ विषयभोग नहीं रहता है ॥ ५० ॥ विषय सुख नहीं रहता है ॥५१॥ स्वप्न समान क्षणिक अवस्था नहीं रहती है ॥५२॥ सब संशय मिट जाता है ॥५३॥ पुद्गलोंका संयोग या शरीरका संयोग छूट जाता है ॥ ५४ ॥ सांसारिक पर्याय नहीं रहती है ॥ ५५ ॥ पर स्वभाव चला जाता है, स्वस्वभाव बना रहता है ॥ ५६ ॥ सब अज्ञान क्षय होजाता है ॥ ५७ ॥ ज्ञानमें आचरण होता है, परम पदमें रहनेवाला आत्मा ज्ञानानन्दको भोगता है ॥ ५८ ॥ अनुपम बलका धारी होता है ॥ ५९ ॥ सर्व विषयोंका भाव क्षय होजाता है ॥६०॥ अनन्त सुख, अनन्त ज्ञान, अनन्त वीर्य आदि अनन्त चतुष्टयका धारी सूक्ष्म अतींद्रिय स्वभावका धारी ज्ञानानन्दमय मुक्तिको पाकर परम शुद्ध व सिद्ध होजाता है ॥६१॥

नीच निगोद सुभाव—नीच निगोद सुभाव, जिन उक्तं न दिस्टते १, जिन उक्त सुद्ध बोध विन्यान विंद २, जिन उक्त उत्पन्न उत्पन्न हितकार न्यान ३, उत्पन्न सहकार न्यान ४, उत्पन्न न्यान विन्यान पद ५, उत्पन्न न्यान दिस्टंति नीच सुभावेन नीच निगोद ६, जिन उक्त

सम्मत्त सम ७, उक्त समय सम दिस्टि न्यान अंकुर ८, सम दिस्टि दर्सि न्यान ९, सम दिस्टि वीर्ज उत्पन्न १०, सम दिस्टि सुद्ध सुभाव ११, सम दिस्टि न्यान अन्मोद १२, हितमित परिणै कोमल १३, अवगाहन न्यान जिन बली दिस्टि १४, अवगाहन न्यान सुय रमण १५, जिन विंजन सुर अगुरु लघु न दिस्टते १६, बाधा विलय शरीर बाधा रहित १७, एवं प्रभाव जिन उक्त १८, जिन उक्त न दिस्टि न समय न सहकार १९, न दिस्टि विप्रिशो करै विप्रियो बोले २०, जिन समय, जिन सुभाव, जिन मिलन, न्यान रमण न दिस्टइ न रमइ न सुभावं न सहइ असहनी २१, नीच सुभाव जिन उक्त विली करै नीच निगोद जिन उक्त गुरु न मूल सेवइ इत्यादि २२ ।

न्यान व्रत अहिंसा इत्यादि सुक्ष्म सुभाव तत्काल उत्पन्न तप आचरण चरण २३, कुन्यान विवर्जितं आयरण २४, सुद्ध पडिमा तिअर्थ २५, दान अनन्त विसेष २६, परम व्यक्त रूप २७, जाति उत्पन्न लंकृत गम्य अगम्य २८, अन्यान असुत न्यानं न २९, सुत रमण ३०, दर्सि रमण ३१, न्यान रमण ३२, चरण रयण तप ३३, जिन उक्त सूष्म सुभाव सूष्म क्रांति ३४, तस्य प्रभाव न द्रिस्यते न सहइ न समइ न सहकारै ३५, जनरंजन राग बंध आक्रांत करण प्रिय ३६, उक्त व्रत करण गुण छंडै ३७, तव करण, पडिमा करण, दान करण, पानी गालन करण, अन्यान थुति करण, रयण तय करण, नीच मिथ्या सहाइ, भय सहाइ, सल्य सहाव, संक सहाइ, सूष्य करण उवएसनं करोति जिनवयण लोयनं करोति ३८, करण सुभाव दिस्टि करण सहकार नीच सुषिणी सुभाइ जिन उक्त लोपनं नीच निगोद ॥ ३९ ॥

अथ—अथ नीच निगोद स्वभावको कहते हैं। जिन परिणामोंसे साधारण वनस्पति निगोद पर्याय पानेका बन्ध पड़ता है उन भावोंको दिखाते हैं। जिसका नीच स्वभाव निगोदमें जानेयोग्य होता है वह

जिनेन्द्र कथित तत्वपर श्रद्धा नहीं लाता है ॥ १ ॥ जिनेन्द्रने कहा है शुद्ध ज्ञान स्वभावका अनुभव करना चाहिये । २ ॥ जिन कथित तत्वोंका मनन करते करते हितकारी ज्ञान पैदा हो जाता है ॥ ३ ॥ यह ज्ञान केवलज्ञानका कारण है ॥ ४ ॥ इसीसे केवलज्ञान पद प्रगट होता है ॥ ५ ॥ परन्तु नीच स्वभाव होनेके कारण मिथ्यात्वीके भीतर आत्मज्ञानकी श्रद्धा नहीं होती है। ऐसा जीव नीच निगोदकी गति बांध लेता है ॥६॥ जिनेन्द्रने कहा है कि सम्यग्दर्शन एक सम या वीतराग भाव है ॥ ७ ॥ ऐसी बताई हुई आत्माकी समदृष्टि ही केवलज्ञानका अंकुर है ॥ ८ ॥ समदृष्टिसे दर्शन ज्ञान प्रकाश होते हैं ॥ ९ ॥ समदृष्टिसे आत्म वीर्य प्रगट होता है ॥ १० ॥ समदृष्टिसे शुद्ध स्वभाव चमकता है ॥ ११ ॥ समदृष्टिसे ज्ञानमें आनन्द भासता है ॥ १२ ॥ इसीसे हित रूप व मर्यादा रूप व कोमल नम्र भाव रूप परिणमन रहता है ॥ १३ ॥ इसीसे अनन्तज्ञान धारी वीतरागका बलवानपना झलकता है ॥ १४ ॥ ज्ञानमें डूबना स्वयं आपमें रमण करना है ॥ १५ ॥

वीतरागी आत्माका प्रगट सूर्य सम स्वभाव अगुरुलघुरूप मिथ्यातीकी श्रद्धामें नहीं आता है ॥ १६ ॥ सिद्ध स्वभावमें कोई बाधा नहीं है, उनका ज्ञान शरीर अव्याबाध है ॥ १७ ॥ ऐसा जिन कथित आत्माके तत्वका प्रभाव है ॥ १८ ॥ परन्तु जिन कथित तत्वपर मिथ्यात्वीकी श्रद्धा नहीं होती है, उसे आत्माका तत्व भाता नहीं, वह अध्यात्मिक तत्वको सहन नहीं कर सक्ता है ॥ १९ ॥ उसे आत्माकी चर्चा प्यारी नहीं लगती है, वह विरुद्ध वर्ताव करता है व विरुद्ध ही बोलता है ॥ २० ॥ उसकी श्रद्धा वीतराग आत्मापर, जिन स्वभावपर, जिनकी भक्तिपर, ज्ञानके रमनेपर नहीं होती है, उसे वे सब बातें रुचिकर नहीं प्रगट होती हैं, वह तत्व चर्चाको सहन नहीं कर सक्ता है, उसका भाव असहनेका होजाता है ॥ २१ ॥ उसका ऐसा नीच स्वभाव होता है। वह जिनवाणीका कथन नहीं जानता है, वह नीच निगोद स्वभावोंके कारण जिन कथित सच्चे गुरुकी जरासी सेवा नहीं करता है इत्यादि उसे सच्चा देव गुरु शास्त्र नहीं सुहाता है ॥ २२ ॥ ज्ञान पूर्वक अहिंसा व्रत आदि व सूक्ष्म अतीन्द्रिय आत्माके स्वभावसे उत्पन्न तपमें आचरण करना ॥ २३ ॥ मिथ्या ज्ञान रहित चारित्र ॥ २४ ॥ शुद्ध रत्नत्रयमई आदर्श ॥ २५ ॥

अनन्त परिणमन रूप दान अर्थात् आपमें आपका सुख देना ऐसा परिणमन ॥ २६ ॥ आप ही दान लेनेवाला पात्र प्रगट है ॥ २७ ॥ जो स्वभावसे स्थूल सूक्ष्म सर्व ज्ञानसे शोभित है ॥ २८ ॥ जहां

न कुमति है न कुश्रुत ज्ञान है ॥ २९ ॥ जो शास्त्रमें रमण करता है ॥ ३० ॥ जो सम्यग्दर्शनमें रमण करता है ॥ ३१ ॥ जो ज्ञानमें रमण करता है ॥ ३२ ॥ जो रत्नत्रयमें आचरण करता है ॥ ३३ ॥ वहां जिन कथित सूक्ष्म अतीन्द्रिय स्वभावमें ही अतीन्द्रियपनेकी शोभा है ॥ ३४ ॥ नीच निगोद स्वभाव-धारी मिथ्यादृष्टीके भीतर ऐसा आत्मप्रभाव नहीं दिखलाई पड़ता है, उसको आत्मकथन नहीं रुचता है वह सहन नहीं कर सक्ता है ॥ ३५ ॥ वह जनरंजन रागमें बन्धा हुआ इंद्रियोंके द्वारा भोगकी क्रिया करता है ॥ ३६ ॥ जिनवाणी कथित व्रत क्रिया व गुणोंको छोड़ देता है, ध्यानमें ही नहीं लेता है ॥ ३७ ॥ इस मिथ्यात्वीको इन बातोंका उपदेश नहीं लगता है कि तप करो, श्रावककी प्रतिमाएँ पालो, दान करो, पानी छानकर पीओ, जिन आज्ञाकी प्रशंसा करो, रत्नत्रयका आचरण करो, नीच मिथ्यात्व स्वभावके कारण भय स्वभाव, शल्य स्वभाव, शङ्काशील स्वभावसे यह सब सुखकारी उपदेश नहीं रुचता है। वह जिन वचनका लोप करता है, आज्ञा उलंघन करता है ॥ ३८ ॥ इंद्रियोंके भीतर रमनेका श्रद्धान रखता है उसका स्वभाव सुखिया होजाता है। जो जिनवाणीका लोप करता है वह नीच निगोदगति बांधता है ॥ ३९ ॥

जिन उक्त जनरंजन राग, कलरंजन दोष, मनरंजन गारौ, न्यान आवर्ण, दर्सि आवर्ण, मोहक आवर्ण, न्यान अन्तर, संक सल्य संक भय, कषाय, मिथ्या कुन्यान, त्रिविहि कम्म, अन्मोय विरोध १, विलय न दिस्टि न सब्द न उत्पन्न न सहकार न औकास, न अन्मोद न विषय न समय न सहकार, सुभाव न करोति २, केन सुभावेन जनरंज कलरंज मनरंज दस मोहंध सुभाई जिन उक्त न दिस्टते ३, न्यान उक्त न समाइ न सुहाइ न सहकार, जिन उक्त पद लोपनं नीच सुभाव, नीच निगोद ४ ।

जिन उक्त अष्यरं, अषय रमण, परम अष्यर, परम अष्यर, परम सुर रमण ५, विंजन रमण, पद रमण, अर्थ रमण, तिअर्थ रमण ६, समर्थ रमण ७, समय रमण, सहकार रमण ८, औकास रमण ९, अन्मोद रमण १०, न्यान षिपक रमण ११, मुक्ति रमण १२, सूक्ष्म सुख

रमण १३, रंज रमण १४, उत्पन्न रंज १५, उत्पन्न सुयं लब्धि रंज १६, सोलही रंजन १७, जं षिपिय रमण १८, तं नन्द रूव १९, हितकार रंज २०, हितकार सुयं लब्धि रंज २१, सोलही रंज कमल परिणाम २२, ममल अनन्त तं अमिय रमण २३, रोम प्रियो रमण २४।

तं नन्द आनन्द सहकार रंज २५ सुयं लब्धि षिपक इष्ट उत्पन्न २६, सोलही गुपिज गुहिज परिणाम २७, ममल अनन्त नन्त रंज २८, तं चेय दिप्ति दिस्टि २९, नन्त दिप्ति रमण ३०, तं नन्द आनन्द चिदानन्द ३१, विन्यानु रंज जान ३२, सुयं लब्धि इस्ट उत्पन्न सोलही परिणाम ३३, इष्ट उत्पन्न ममल नन्तानन्त रंज तं रमण ३४, जिन रमण ३५, तं नन्द आनंद चिदानन्द तं सहजानन्द ३६, रंज जिन रंज समर्थ ३७, अंगदि अनन्तानन्त पद विंद ३८, सर्वांग लोक अवलोक अनन्तानन्त परिणाम ३९, जिन उक्त मुक्ति ४०।

तस्य सुभाव मनरंज गारौ बन्धान मोहंध दस दिष्टि, जनरंज कलरंज विषय दिस्टि करण क्रिया, उद्देस करण क्रिया, गारौ करण क्रिया, राग करण क्रिया, दर्स मोहंध करण क्रिया, वय-करण क्रिया, तवकरण क्रिया, गारौ जिन उक्त लोयन नीच सहकार पर्जाय, गारौ जिन उक्त न दिस्टउ न सहउ न वयन न उक्त न समई न सहकार नीच सहाइ मिथ्या भयभीत जिन उत्तु लोपनं करोति, तं नीच निगोद, जिन उत्त नन्त चतुष्टै गारव सहकार लोपनं करोति, नीच सहकार नीच उत्पन्न मन नीच सब्द वयण नीच ४१।

क्रिया सहकार क्रांति नीच ४२, जाति उत्पन्न नीच ४३, कलण नीच ४४, रुचि प्रिये नीच ४५, मान अभिमान नीच ४६, न्यान नीच ४७, करणतव नीच ४८, बल बीर्ज नीच ४९, सहकार नीच ५०, पद नीच ५१, स्पर्सन नीच ५२, रसन नीच ५३, घ्राण नीच ५४, चषु सोत्र नीच ५५, सब्द नीच ५६, सुभाव इन्द्री इष्ट विषय नीच ५७, नीचश्री ५८, नीच

राग ५९, नीच भय ६०, नीच पद ग्रहण ६१, नीच जोइ ६२, न समय मै मूर्ति ६३, नीच सुर रमण ६४, विषय नीच ६५, निस्वास विषय नीच ६६, पर्जाव दिष्टि सहकार विषय रिद्धि नीच ६७, नीच सहाउ ६८, नीच चेत ६९, नीच उत्पन्न पर्जाव ग्रहण अन्मोद ७०, विषय प्रपंच पर्जाव विभ्रम सहकार रमण ७१, शिष्य अशिष्य उत्पन्न उपाय नीच ७२, नीच सव्द ७३, नीच अलाप सुभाव ७४, सभावेन अनन्त नीच सहाउ, नीच निगोद भ्रमणं करोति, इतर सुभावेन जिन उत्त लोपन इतर निगोद नीच इतर सुभाउ जिन उत्त लोपनी नीच इतर गति अनादिकाल भ्रमणं करोति ७५ ।

अर्थ—जिनेन्द्र भगवानने कहा है कि जनरंजन राग, शरीर रंजन दोष, मनरंजन अभिमान, ज्ञानावरण कर्म, दर्शनावरण कर्म, मोहनीय कर्म, अन्तराय कर्मके वशीभूत हो, शङ्का शल्य भयमें पड़कर, कषायोंके आधीन हो, मिथ्याज्ञान धारकर, द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म, तीन प्रकार कर्मोंमें गृसित रहकर सच्चे आनन्दका लाभ इस जीवने नहीं किया ॥ १ ॥ इन सब पर भावोंका नाश नहीं हुआ। क्योंकि इस जीवने कभी अपने स्वभावपर दृष्टि नहीं दी। न शब्द सुने, न ज्ञान पैदा हुआ, न कोई सहायता मिली, न स्वभावमें प्रवेश किया न स्वभावका आनन्द लिया, न उस तरफ ध्यान ही लगाया ॥ २ ॥ क्यों ऐसा हुआ, कारण यही है कि जहां जनरंज, शरीर रंज, मनरंज भाव होता है व दर्शनमोहसे श्रद्धान अन्धा होता है वहां जिनेन्द्र कथित उपदेशपर श्रद्धा या रुचि नहीं होती है ॥ ३ ॥ ज्ञानकी बातें उसे नहीं सुहाती हैं। वह ज्ञानकी संगति नहीं करता है, वह जिनवाणीके कथनका लोप करता है, जिन आज्ञाको नहीं मानता है, ऐसे नीच स्वभावको नीच निगोदमें जाने लायक स्वभाव कहते हैं ॥ ४ ॥ जिनेन्द्र भगवानकी वाणीमें ये अक्षर प्रगट हुए हैं कि अक्षय या अविनाशी आत्माके स्वभावमें रमण करना चाहिये। उनका श्रेष्ठ उपदेश यही है कि परम अक्षर स्वभाव अविनाशी परमेश्वर स्वभावमें या परम सूर्यमें रमण करो ॥ ५ ॥

किसी शब्दके व्यञ्जनमें रमण व पदमें रमणका यही भाव है कि आत्मा पदार्थमें रमण किया जावे या रत्नत्रय स्वभावमें रमण किया जावे ॥ ६ ॥ स्वरूपमें रमण करना ही शक्तिशाली रमण है ॥ ७ ॥

उसीको समय या आत्मामें रमण कहते हैं ॥ ८ ॥ यही मोक्षमार्गमें रमण है ॥ ९ ॥ यही अनन्त गुणोंमें
रमण है ॥ १० ॥ यही आत्मानन्दमें रमण है ॥ ११ ॥ यही मोक्षस्वभावमें रमण है ॥ १२ ॥ यही सुक्ष्म
अतीन्द्रिय सुखमें रमण है ॥ १३ ॥ यही आनन्दमें रमण है ॥ १४ ॥ इसीसे आनन्द गुण बढ़ता है ॥ ५ ॥
इसीसे स्वयं प्राप्त होनेवाला अनन्त सुख होता है ॥ १६ ॥ स्व रूपमें रमण सो ही दर्शनविशुद्धि आदि
षोड़शकारण भावनाओंमें रमण है ॥ १७ ॥ यही निर्मल पदमें रमण है ॥ १८ ॥ वहीं आनन्द स्वभाव है
॥ १९ ॥ वहीं हितकारी आनन्द है ॥ २० ॥ वहीं हितकारी स्वयं प्राप्त होनेवाला अनन्त सुख है ॥ २१ ॥ वहीं
षोडशकारण भावनाओंकी मगनतासे आत्मारूपी कमलका भाव झलकता है ॥ २२ ॥ वहीं अनन्त शुद्धतामें
अमर रूपसे रमण है ॥ २३ ॥

वहां ऐसा रमण है कि साधकका रोम रोम प्रफुल्लित होजाता है ॥ २४ ॥ वहीं परमानन्द सहित
मग्नता है ॥ २५ ॥ इसीसे स्वयं झलकनेवाला क्षायिक इष्ट पद प्रगट होता है ॥ २६ ॥ यही षोडशकारण
भावनाओंके द्वारा आत्माकी गुफामें विराजित शुद्ध भाव है ॥ २७ ॥ वही शुद्ध व अनन्त आनन्द है ॥ २८ ॥
यहीं चेतनाका दर्शन व ज्ञान है ॥ २९ ॥ यहीं अनन्तज्ञानमें रमण है ॥ ३० ॥ यहीं आनन्दमय चिदानन्द
पद है ॥ ३१ ॥ वहीं ज्ञानानन्द मोक्षमार्ग है ॥ ३२ ॥ वहीं स्वयं शक्तिसे उत्पन्नवाले षोडशकारण भाव-
नाओंका परिणाम है ॥ ३३ ॥ वहीं उपादेयरूप प्रगट अनन्त आनन्दमें मगनता है ॥ ३४ ॥ वहीं जिनेन्द्रके
भीतर रमण है ॥ ३५ ॥ वहीं नन्द है, आनन्द है, चिदानन्द है, सहजानन्द है ॥ ३६ ॥ वहीं वीतरागमय
आनन्द व वीर्य है ॥ ३७ ॥ वही अनन्त गुणधारी आत्माका अनुभव है ॥ ३८ ॥ वहीं पूर्ण लोकको देखने-
वाला भाव प्रगट होता है ॥ ३९ ॥ वहीं जिनेन्द्र कथित मोक्षका स्वभाव है ॥ ४० ॥

परन्तु इस शुद्ध आत्म स्वभावको वह नहीं देख सकता है, जिसका स्वभाव मनको रंजायमान
करनेवाले अभिमानमें गृसित है, जिसका श्रद्धान दर्शन मोहसे अन्धा है, जो मानवोंके प्रसन्न रखनेमें व
शरीरको राजी रखनेमें फँसा है, जिसकी दृष्टि पांचों इंद्रियोंके विषयभोगमें उलझी है, जो विषयोंकी
क्रिया ही क्रिया करता है, विषयभोगका प्रयोजन रखकर जो काम करता है, जो अभिमानको पुष्ट करने-
वाली क्रिया करता है, जो रागको बढ़ानेवाली क्रिया करता है, जो मिथ्यात्वको पोषनेवाली क्रिया करता
है, मिथ्यात्व सहित व्रत करता है, तप करता है, अभिमानके वश हो जिनेन्द्रकी आज्ञाको लोप करता

है, नीच परिणाम या अवस्था रखता है, मदके कारण जिनेन्द्र कथित तत्वका श्रद्धान नहीं करता है न देखता है, न उसे सुहाता है, न स्वयं कहता है न कथनको सुनता है, न कभी तत्व ज्ञानियोंका संग करता है, नीच स्वभावको धारके मिथ्यात्वके कारण भयभीत रहता है। जिनेन्द्र कथित आज्ञाको लोप करता है, ऐसा ही प्राणी नीच निगोद स्वभावका धारी है, आत्मामें अनन्त ज्ञानादि चतुष्टयकी शक्ति है, वह नीच अभिमानसे इस घातको नहीं मानता है, उसका मन भी नीच विचार करता है, उसके शब्द भी नीच निकलते हैं, उसकी वाणी भी नीच होती है ॥४१॥

उसकी सर्व कायकी क्रिया भी नीच होती है ॥ ४२ ॥ वह नीच जातिमें पैदा होजाता है ॥ ४३ ॥ उसका व्यवहार नीच होता है ॥ ४४ ॥ उसकी रुचि व प्रीति नीच कामोंकी तरफ होती है ॥ ४५ ॥ वह नीच कामोंको करके अभिमान रखता है ॥ ४६ ॥ उसका ज्ञान मिथ्या व नीच होता है ॥ ४७ ॥ वह मिथ्या तप करता है ॥ ४८ ॥ वह अपने बल वीर्यको नीच काममें खर्च करता है ॥ ४९ ॥ वह नीचोंकी संगति रखता है ॥ ५० ॥ वह नीच पदमें पड़ा रहता है या उसका पग नीच कामोंमें ही पड़ता है ॥५१॥ वह स्पर्शन इंद्रियका विषय नीच व खोटा कुआचाररूप करता है ॥ ५२ ॥ वह रसना इंद्रियका विषय नीच रखता है, अभक्ष्य खाता है ॥ ५३ ॥ उसका नाकका विषय नीच होता है ॥ ५४ ॥ आंखोंका व कानोंका विषय नीच व खोटा होता है ॥ ५५ ॥ वह नीच बुरे शब्दोंको बोलता है ॥ ५६ ॥

उसका स्वभाव पांचों इंद्रियोंके नीच व अन्यायपूर्ण विषयोंके सेवनमें लगा रहता है ॥ ५७ ॥ उसकी लक्ष्मी नीच कामसे आती है व नीच काममें खर्च होती है ॥५८॥ उसका राज्य नीच व अन्याय-पूर्ण होता है ॥ ५९ ॥ वह नीच व निंदनीक भय रखके कायर रहता है ॥ ६० ॥ वह नीचे पदोंको ग्रहण करता है, नीच निंदनीक खोटे कामोंके प्रचारमें मुखिया बन जाता है ॥ ६१ ॥ उसकी दृष्टि नीच ही होती है ॥ ६२ ॥ वह कभी ज्ञानमूर्ति आत्माको नहीं देख पाता है ॥ ६३ ॥ वह नीच गानोंके सुननेमें रमण किया करता है ॥ ६४ ॥ वह खोटे विषयोंको सेवता है ॥ ६५ ॥ उसका विश्वास या विषय नीच होता है, उसको मिथ्या तत्वोंका विश्वास होता है ॥ ६६ ॥

शरीरमें मगनताके कारण खोटे धनको व विषयोंको ग्रहण करता है ॥६७॥ उसके मित्र भी नीच होते हैं ॥ ६८ ॥ उसकी चेतना नीच व बेखबर अन्धी रहती है ॥ ६९ ॥ वह नीच अवस्थाके ग्रहणमें

आनन्द मानता है ॥ ७० ॥ वह विषयोंके प्रपञ्चजालमें फँसा रहकर शरीरको भ्रमसे अपना मानता हुआ उसीमें रमण करता है ॥७१॥ वह गुरु होकर शिष्योंको व धनादि परिग्रहको नीच उपायोंसे संग्रह करता है ॥ ७२ ॥ उसके शब्द नीच मार्गके प्रेरक होते हैं ॥ ७३ ॥ उसका स्वभाव नीच वार्तालापका होता है वह स्त्रीकथा, भोजनकथा, देशकथा, राजाकथाएँ, प्रसन्न होकर किया करता है ॥ ७४ ॥ ऐसे ही अनन्त प्रकारके नीच स्वभावसे नीच निगोदकी पर्यायमें जाकर भ्रमण किया करता है। अन्तर आत्मासे भिन्न बहिरात्मा स्वभावसे जिन कथित आज्ञाको लोप करके मरके इतर निगोदमें जन्म लेता है, जिसका स्वभाव बहिरात्मारूप है। जो जिनकी आज्ञाका खण्डन करता है वह नीच प्राणी नीच गतियोंमें अनन्तकाल भ्रमण करता रहता है ॥ ७५ ॥

भावार्थ—यहां यह दिखलाया है कि निगोदमें यह जीव कैसे भावोंसे जाता है, जहांसे निकलना अनन्तकालमें भी कठिन है।

नीच लब्धि १, लोभ नीच २, कोप अनन्त ३, नीच मान अनन्त ४, नीच माया, पर्जाय अनन्त विसेष ५, त्यागी मिलै नीच विषय अनन्त पर्याय ६, न मिलै त्यागी पर्जाय मिलण अनन्त पर्याय ७, न मिले विषय मिलन न विषय पर्जाय रष्यनं करोति ८, विषय रमण सुभाव नीच मिलन मिथ्या पर्जाव ९, त्यागी मुक्त पर्जाव १०, अत्यागी पर्जाव ग्रहण ११, नीच रमण समय त्यागी पर्याय १२, समय अत्यागी १३, न समय समय १४, मिथ्या रमण प्रकृति १५, मिथ्या प्रकृति त्यागी मुक्त अप्रकृति पर्जाव १६, त्यागी अमुक्त ग्रहण समय प्रकृति १७, मिथ्या रमण एकान्त १८, त्यागी सुभाव रमण अनेकांत पर्जाव १९, त्यागी न मुक्त ग्रहणं करोति २०, एकांत मिथ्या रमण २१, विप्रियो मिथ्यात प्रियो २२, त्यागी मिलण अनन्त पर्जाव त्यागी विप्रियो भवतु २३, विप्रिय मिथ्या रमण नीच बुद्धि २४, नीच पर्याय रमण २५, नीच निगोद पतनं भवतु २६, जिन उक्त न्यान रमण २७, प्रथम न्यान पद श्रेष्ठ पद २८, न्यान विन्यान

सहकार मिलन आहार २९, न्यान सहकार आहार ३०, बाधा रहित अबाधा आहार ३१।

इच्छित न्यान रमण बाधादि मुक्त भेषज ३२, भेषज बाधा पर्जाय अनन्त मिलण ३३, संसार सरीर भोग उपभोग मन, वच, क्रांति, कृत, कारित अनुमत ३४, बाधा उद्देस परिणै प्रमाण ३५, बाधा इन्द्रिय विषय दिस्टि ३६, अदिस्ट रिस्टि ३७, रिस्टि समय इस्टि ३८, सह इष्ट उत्पन्न इष्ट ३९, अत्याग मुक्ति इष्टि ४०, सर सब्द असब्द गुपित ४१, सर कमल उत्पन्न धन, धान्य, सुवर्ण, मणि, रयण रमण ४२।

बाधा रहित अबाधा मुक्ति मिलन भेषज ४३, अभयप्रेच्छा न्यान ४४, न्यान रमण त्यागी ४५, मुक्ति सरूपी ४६, सुयं रूपी सरूपी सुभाव ४७, स्वरूप भय विनस्य भय सल्य संक विलयंतु ४८, अभय सेवन संक सल्य रहित ४९, निरूप त्यागी स्वरूपी ५०, त्यागी मुक्त ५१, जदि-दातृ लष्य तदि पात्र त्यागी ५२, मुक्ति सुभाव प्रापति ५३, तदि विसेष जिन उक्त नीच सहाय इतर सहाय जिन उक्त लोपनं ५४, नंद त्यागी ५५, पर्जाव मुक्त रमण त्यागी, ५६, मुक्त न्यान, आहार भेषज ५७, अनन्त विसेष त्यागी ग्रहं मुक्त न भवतु ५८, नीच सहाय नीच विषय रमण जिन उक्त लोपनं करोति ५९, नीच पर्जाय रमण ६०, विषय रमण सहकार ६१, जिन उक्त, जिन बन्धु, जिन वयण, जिन दर्स, जिन लष्य, जिन अलष्य लष्य, जिन सुभाव सूषम नीच सह भयभीत नीच इतर इन्द्रिय सहकार गारौ सुभाव नीच सहकार जिन उक्त लोपनं करोति ॥ ६२ ॥

तदि नीच निगोद इतर निगोद पतनं करोति, अनन्त संसारिणो जीवा ६३, जेन केनापि त्यागी मिलण विषय, स्वरूप, विषय, मन विषय, वचन विषय, क्रांति विषय, सुभाव रमण त्यागी

मिलै और पर्जाव सहनी असहनी असहनी अनन्त पर्जाव रूव ग्रहण सुभाव निधि राजा रयण मणि, सुवर्ण मुक्तामणि विसेष ६४, पर्जाव दिष्टि न मिलै अन्मोद आनन्द न्यान अन्मोद एक समय पर्जाव दिस्टि विनन्द भवति नीच सुभाव जिन वयण लोपनं करोति, नीच पर्जाव सुभाव न्यान अन्मोद विनन्द समय मात्रेण नीच इतर सहकार नीच इतर पर्याय लब्धि भवतु, नीच इतर निगोद तुच्छ भवतु ६५।

अर्थ—मिथ्यादृष्टी अज्ञानी जीव अपनी ज्ञानादि शक्तियोंका उपयोग नीच कामोंमें करता है ॥१॥ लोभ कषायके उदयसे नीच काम करता है॥२॥ जिसपर क्रोध होता है वह अनन्तानुबन्धी होता है, बहुत काल तक द्वेष छोड़ता नहीं है ॥ ३ ॥ अनन्तानुबन्धी मान होता है, नीच भाव रखके मान करता है, दूसरोंका अपमान करता है ॥४॥ मायाके उदयसे बहुत नीच कपटके काम करता है, अनन्त परिणामोंकी विशेषता रखता है ॥ ५ ॥ यदि कोई प्राणी साधु मिलते हैं, उनसे भी सच्चा उपदेश नहीं लेता है, अनंत प्रकारके विषय भावोंकी पुष्टिका लक्ष्य रखके उपदेश ग्रहण करता है, नीच मार्गकी तरफ जाता है ॥ ६ ॥

यदि कोई त्यागी न मिले तौ भी अपने शरीरमें रागी होकर अनन्त परिणाम किया करता है॥७॥ जो इंद्रियोंके विषय नहीं मिलेंगे उनके मिलानेकी इच्छा करता है। मनुष्य पर्यायमें जो विषय मिले हुए हैं उनकी रक्षा करता है ॥ ८ ॥ इस मिथ्यात्वीका स्वभाव विषयोंके भीतर रमण करनेका होता है, नीचोंसे मिलता हैं, मिथ्या भाव किया करता है ॥ ९ ॥ त्यागियोंकी संगति छोड़नेका स्वभाव रखता है ॥ १० ॥ जो त्यागी नहीं हैं, संसारासक्त हैं, उनके भावोंको ग्रहण करता है ॥ ११ ॥ उसका स्वभाव ऐसा बन जाता है कि वह नीचोंके साथ रमण करता है, आत्मज्ञानीका संग नहीं करता है ॥१२॥ उसका आत्मा किसी विषयका त्याग नहीं करता है ॥ १३ ॥ उसे बहिरात्मापना ही सुहाता है। उसका आत्मा मिथ्यादृष्टी बना रहता है ॥ १४ ॥ उसका स्वभाव मिथ्या बातोंमें रमण करनेका होजाता है ॥ १५ ॥ मिथ्यात्व प्रकृतिके उदयसे त्यागियोंकी संगतिको छोड़कर मिथ्या स्वभावको ही रखता है ॥ १६ ॥

त्यागी यदि कोई मिलता है तो उनसे मुक्तिसे विरुद्ध संसार पोषणकारी बातको ग्रहण करता है

ऐसा आत्माका स्वभाव रखता है ॥ १७ ॥ एकांत मिथ्यात्वमें रमण करता है। वस्तु अनेक स्वभाववाली है उसको एक स्वभाववाली मानता है ॥ १८ ॥ अनेकांत स्वभावधारी आत्माके भीतर रमण नहीं करता है। त्यागीसे मुक्तिके स्वभावको नहीं स्वीकार करता है ॥ २० ॥ एकांत मिथ्यात्वमें रमण किया करता है ॥ २१ ॥ त्यागने योग्य मिथ्यात्व ही उसको प्यारा लगता है ॥ २२ ॥ त्यागी कोई मिल जाता है तौभी वह अनन्त गुण धारी आत्माका विश्वास नहीं करता है, विपरीत ही रहता है ॥ २३ ॥ विपरीत मिथ्यात्वमें रमण करता है। जैसे हिंसासे धर्म मान लेता है, बुद्धि नीच हिंसक कामोंपर जाती है ॥ २४ ॥ यह नीच निन्दनीय अवस्थामें रमण करता है ॥ २५ ॥ इसीसे वह नीच भावसे निगोद पर्यायमें गिर पड़ता है ॥ २६ ॥ परन्तु जो जिनेन्द्र कथित सम्यग्ज्ञानमें रमण करते हैं ॥ २७ ॥ वे केवलज्ञानके पदको ही श्रेष्ठ पद मानते हैं ॥ २८ ॥ वे उसी बातको ग्रहण करते हैं जिससे ज्ञानकी वृद्धि हो ॥ २९ ॥ ज्ञान बढ़ानेको ज्ञानका ही आहार करते हैं ॥ ३० ॥ उनपर बाधा रहित ज्ञानका आहार ऐसा होता है जिससे कोई बाधा नहीं पहुंचा सक्ता है ॥ ३१ ॥ यह उपादेय शुद्ध ज्ञानमें रमण करते हैं। यही वह बाधारहित औषधि है जिससे संसार रोग मिटता है ॥ ३२ ॥ इस संसारमें बाधाकारी अनन्त पर्याय मिल चुकी है जिनमें सच्चा सुख नहीं पाया ॥ ३३ ॥

इस संसारमें शरीरोंको धारकर मन वचन काय कृत कारित अनुमोदनासे नौ प्रकार भोग–उपभोग ही करता रहा ॥ ३४ ॥ बाधाकारी संसारका ही उद्देश्य रहा व इसी मिथ्याज्ञानमें परिणमन करता रहा ॥ ३५ ॥ बाधाकारी व संसारवर्द्धक इंद्रियोंके विषयोंमें ही दृष्टि रही ॥ ३६ ॥ हानिकारक मिथ्यादृष्टि बनी रही ॥ ३७ ॥ हानिकारक आत्माकी परिणति ही अच्छी लगी ॥ ३८ ॥ इसी इष्टभावसे इसी इष्ट परिणतिको अर्थात् खोटी परिणतिको ही बढ़ाता रहा ॥ ३९ ॥ त्याग भाव नहीं सुहाया, भोगोंमें ही प्रेम करता रहा ॥ ४० ॥ ऐसे शब्द कहता रहा जिससे शब्द रहित आत्माका लोप हो, अर्थात् आत्मज्ञानसे विपरीत बातें कीं ॥ ४१ ॥ पुण्यरूपी सरोवरसे उत्पन्न कमल समान धन, धान्य, मणि, रत्न आदि विभूतिमें रमण करता रहा ॥ ४२ ॥ इस संसाररूपी रोगसे मुक्त होनेकी औषधि यही है जो बाधा रहित मुक्तिका पता मिल जावे–स्वानुभव होजावे ॥ ४३ ॥ तब उसका ज्ञान भय रहित होजाता है। उसको अपने स्वरूपमें निःशंक भाव होजाता है, वह निर्भय ज्ञानको ही देखता है ॥ ४४ ॥ वह आत्माके ज्ञानमें

रमण करनेवाला त्यागी होजाता है ॥४५॥ वह स्वयं मोक्ष स्वरूपी शुद्धोपयोगी होजाता है ॥४६॥ वह स्वयं ज्ञान स्वरूपमें रहनेवाला स्वभाव रखता है ॥ ४७ ॥ उसको अपने स्वरूपमें भय नहीं रहता है, इसका सर्व भय, सब शल्य, सब शंकाएँ क्षय होजाती हैं ॥ ४८ ॥ वह शंका व शल्यसे रहित निर्भय रहता है ॥ ४९ ॥ वह अमूर्तीक पर वस्तुके ग्रहणका त्याग स्वरूप ही रहता है ॥ ५० ॥ वही सच्चा त्यागी है, वही मुक्त स्वभाव है ॥ ५१ ॥ उसका लक्ष्यबिंदु शुद्ध आत्मतत्व है, वह तो आनन्ददाता है, वह त्यागी इस आनन्दके लेनेवाला पात्र है। भावार्थ—आप ही वह पात्र है, आप ही दातार है, आपसे आपको वह आनन्द देता है ॥ ५२ ॥

इसतरह ज्ञानीको मोक्ष स्वभावकी प्राप्ति होती है ॥ ५३ ॥ परन्तु यदि इस भावको जो नहीं पाता है वह जैसा जिनेन्द्रने कहा है नीच स्वभावको रखता हुआ मिथ्यात्व स्वभावसे जिनेन्द्रकी आज्ञाका लोप करता है । ५४ ॥ उसको सच्चा सुख नहीं मिलता है ॥ ५५ ॥ उसको मोक्षमें रमण भाव नहीं होता है ॥ ५६ ॥ उसको न तो ज्ञानका आहार मिलता है, न ज्ञानकी औषधि मिलती है ॥ ५७ ॥ वह अनन्त गुणोंके धारी आत्माका ज्ञान नहीं पाता है इससे मुक्त नहीं होता है ॥ ५८ ॥ उसका स्वभाव नीच होता है व नीच अन्यायके विषयोंमें रमण करता है, जिनेन्द्रकी आज्ञाका लोप करता है, जिनधर्मके विरुद्ध चलता है ॥ ५९ ॥ वह नीच अशुभ परिणामोंसें रमण करता रहता है ॥ ६० ॥ विषयोंके रमणमें सहकारीसे मेल रखता है ॥ ६१ ॥ यह मिथ्यादृष्टी अपने नीच स्वभावके कारण नीचे लिखे उपकारियोंसे भयभीत रहता है, उनके पास खड़ा नहीं होता है, जिन कथन, जिनबन्धुगण, जिनवाणी, जिनेन्द्रकी श्रद्धा, जिनेन्द्रपदका लक्ष्य, वीतराग अतीन्द्रिय आत्मापर ध्यान, वीतराग सूक्ष्म आत्मीक स्वभावपर दृष्टि। इन बातोंपर ध्यान न देकर नीच व खोटे इंद्रिय विषयोंकी संगति करता है। संसारके मदमें चूर रहता है। नीच स्वभावसे जिनवाणीकी आज्ञाका लोप करता है तब वह नीच गति बांधकर इतर निगोदमें गिर पडता है। इसतरह संसारी जीव निगोदके कष्ट पाते हैं ॥ ६२ ॥ जिस किसीको कोई त्यागी भी मिल जावे तौभी उनसे विषयोंकी वासनाको दृढ़ करता है, विषयोंका स्वरूप ही मनमें रखता है, वचन विषय-पोषक बोलता है, कायसे विषयोंके भोग करता है, मन वचन कायसे भोगोंमें रमण करता है, त्यागीके मिलनेपर भी शरीरको रुचिकर पदार्थोंकी वांछा बढ़ाता है, अनेक भण्डार चाहता है, राज्यकी, रत्नोंकी,

मणि मोती सुवर्णकी ही चाह करता है ॥ ६४ ॥ शरीरमें दृष्टि रखनेसे उसको कभी भी आत्मीक आनंद, ज्ञानानन्द नहीं मिलता है, उसकी श्रद्धा एक आत्माके निज भावपर नहीं रहती है, यह सुखी नहीं होता है, नीच स्वभावसे जिनवाणीका लोप करता है, यह अपने नीच स्वभावसे ज्ञानानन्दको न पाता हुआ आत्माको आकुलित रखता है, वह नीच इतर निगोदकी पर्यायमें जाकर जन्म पाता है ॥ ६५ ॥

भावार्थ—ऊपर श्री तारणतरण स्वामीने पांच स्थावरोंकी पर्यायमें जानेवाले मिथ्यात्व पोषक व सम्यक्त विरोधक भावोंको दिखलाया है। मिथ्यात्व जीवका महान शत्रु है, पांचों स्थावरोंमें जितने क्षुद्र भाव होते हैं उनको बताया है। एक श्वासमें अठारहवार जन्म मरण करनेवाले सर्व प्राणियोंमें नीचे प्रमाण लगातार भव होते हैं। एक अन्तर्मुहूर्तमें ६६३३६ भव होते हैं अर्थात् ३६८५$\frac{1}{3}$ श्वासमें ८८३३६ भव होते हैं। एक मुहूर्त ३७७३ श्वासका होता है।

(१) पृथ्वीकायिक—बादरके ६०१२
सूक्ष्मके ६०१२
(२) जलकायिक—बादरके ६०१२ ... ...१२०२४
सूक्ष्मके ६०१२
(३) अग्निकायिक—बादरके ६०१२ . १२०२४
सूक्ष्मके ६०१२
(४) वायुकायिक—बादरके ६०१२ ... ...१२०२४
सूक्ष्मके ६०१२
(५) वनस्पतिकाय—निगोद साधारण बादर ६०१२ ... ..१२०२४
" " सूक्ष्म ६०१२
प्रत्येक वनस्पति ६०१२
एकेन्द्रियोंके सूक्ष्म भव ..१८०३६
६६१३२
द्वीन्द्रियोंके ८०

तेन्द्रियोंके	... .		८०
चौन्द्रियोंके	... .		६०
पंचेन्द्रियोंके असैनी तिर्यंच		८	
सैनी तिर्यंच		८	
मानव		८	२४
	कुल		६६३३६

श्री गोम्मटसार जीवकांड गाथा—

सीदी सट्ठी तालं वियले चउवीस होंति पंचक्खे ।
छावट्ठिं च सहस्सा सयं च बत्तीसमेयक्खे ॥ १२३ ॥
पुढविदगागणिमारुदसाहारणथूलसुहमपत्ते या ।
एदेसु अपुण्णेसु य एक्केक्के बार खं छक्कं ॥ १२४ ॥

अर्थ—साधारण वनस्पतिको निगोद कहते हैं। ऊपर दिखाया है कि जो विपर्याय होते हैं, नास्तिक होते हैं, जिन आज्ञा नहीं माननेवाले होते हैं, वे जीव नीच गति बांधकर निगोदमें जन्मते हैं। निगोदसे निकलना अनन्तकालमें भी दुर्लभ है। अतएव यह शिक्षा ग्रहण करना चाहिये कि मानवजन्म पाकर सतसङ्गति करे, जैन त्यागी महात्माओंकी सङ्गति करे, जिनवाणीका मनन करे, तत्वज्ञान प्राप्त करे, आचार शुद्ध पाले, आत्मज्ञानको भावे, सम्यग्दर्शनका लाभ करे व निरन्तर अपने ही आत्माके शुद्ध स्वभावमें रमण करे, स्वानुभव करे, यही रत्नत्रयकी एकता है, यही कर्म निर्जराकारक ध्यानकी अग्नि है, व यही मोक्षका मार्ग है, यही ज्ञानानन्दका लाभ है, यही मोक्षके स्वभावमें रमण है।

तृतीय अध्याय।

विकलत्रय चौवीस स्थान।

द्वेन्द्रिय जीवमें चौवीस स्थान।

(१) गति–तिर्यंच
(२) इंद्रिय–दो इंद्रिय
(३) काय–त्रसकाय
(४) योग ४–औदारिक २, १ वचन अनुभय, १ कार्मण
(५) वेद–नपुंसक
(६) कषाय–२३ (२५–स्त्री व पुंस)
(७) ज्ञान–२ कुमति, कुश्रुत
(८) संयम–१ असंयम
(९) दर्शन–१ अचक्षु दर्शन
(१०) लेश्या–३ कृष्ण, नील, कापोत
(११) भव्य–२ दोनों
(१२) सम्यक्त–१ मिथ्यात्व
(१३) सैनी–१ असैनी
(१४) आहारक–२ दोनों
(१५) गुणस्थान–१ मिथ्यात्व
(१६) जीव समास–दो इंद्रिय सम्बन्धी
(१७) पर्याप्ति–५ मन विना
(१८) प्राण–६ इंद्रिय २, काय, वचन, वल, आयु, श्वास।
(१९) संज्ञा–४ चार
(२०) उपयोग–३ ज्ञान २, दर्शन १
(२१) ध्यान–८ आर्त ४, रौद्र ४
(२२) आस्रव-४० (मिथ्या० ५ + अविरति ८ तीन इन्द्रिय मन विना + क० २३ + योग ४)
(२३) योनि–२ लाख
(२४) कुलकोडि–७ लाख

तेन्द्रिय चौवीस स्थान।

(१) गति-तिर्यञ्च
(२) इंद्रिय-तीन
(३) काय-त्रस
(४) योग ४-औ० २, वचन अनुभय, १ कार्मण
(५) वेद-नपुंसक
(६) कषाय २३ (२५-स्त्री, पुं०)
(७) ज्ञान-२ कुमति, कुश्रुत
(८) संयम-१ असंयम
(९) दर्शन-१ अचक्षु
(१०) लेश्या-३ कृष्णादि
(११) भव्य-२ दोनों
(१२) सम्यक्त-मिथ्यात्व
(१३) सैनी-असैनी
(१४) आहारक-२ दोनों
(१५) गुणस्थान-मिथ्यात्व
(१६) जीव समास-तेन्द्रिय सम्बन्धी
(१७) पर्याप्ति ५ मन विना
(१८) प्राण ७-इंद्रिय ३, काय, वचन, बल, आयु, श्वास
(१९) संज्ञा ४-चारों
(२०) उपयोग ३-दो ज्ञान, १ दर्शन
(२१) ध्यान ८-आर्त ४ + रौद्र ४
(२२) आस्रव-४१ (मिथ्या ५+अविरति ९ द्रो इंद्रिय व मन विना + एक० २३ + योग ४)
(२३) योनि-२ लाख
(२४) कुल कोडि-८ लाख

चार इन्द्रिय चौवीस स्थान।

(१) गति-तिर्यंच
(२) इन्द्रिय-४ चार
(३) काय-त्रस
(४) योग ४-औ० २, वचन अनुभय १ कार्मण
(५) वेद-नपुंसक
(६) कषाय-२३ (स्त्री पुं० विना)
(७) ज्ञान-२ कुमति, कुश्रुत
(८) संयम-१ असंयम
(९) दर्शन-२ चक्षु, अचक्षु
(१०) लेश्या-३ कृष्णादि
(११) भव्य-२ दोनों
(१२) सम्यक्त-१ मिथ्यात्व
(१३) सैनी-१ असैनी
(१४) आहारक-२ दोनों

(१५) गुणस्थान–मिथ्यात्व
(१६) जीव समास–४ इंद्रिय सम्बन्धी
(१७) पर्याप्ति–५ मन विना
(१८) प्राण–८–इंद्रिय ४, काय, वचन, आयु, श्वास
(१९) संज्ञा–४–चारों
(२०) उपयोग ४–ज्ञान २, दर्शन २

(२१) ध्यान ८–आर्त ४, रौद्र ४
(२२) आस्रव-४२ (मिथ्या० ५ + अविरति १० पंचेन्द्रिय मन विना) + क० २३ + योग ४)
(२३) योनि–२ लाख
(२४) कुलकोडि–९ लाख

जदि सुभावेन जिन उक्त १, जिन वयण २, जिन दर्सि ३, जिन सहकार ४, जिन समय ५, जिन परिणै ६, जिन प्रमाण ७, जिन अष्यर ८, जिन सुर ९, सुयं रमण १०, जिन विन्यान ११, जिन पद १२, जिन अर्थ १३, जिन ति अर्थ १४, जिन समर्थ १५, जिन समय सहकार अर्थ १६, जिन मिलन १७, जिन कमल १८, जिन रमण १९, जिन रंज २०, जिन नन्द २१, जिन आनन्द २२, जिन चेयानन्द २३, जिन सहजानन्द २४, जिन परमानन्द २५, जिन सदर्थ २६, जिन लंकृत जिन २७, औकास जिन २८, इच्छ जिन प्रेक्ष्या २९, जिन गम्य ३०।

जिन अगम्य ३१, जिन चेय ३२, जिन वेय ३३, जिन प्रेष्य ३४, जिन सिष्य ३५, जिन धरन ३६, जिन ग्रहण ३७, जिन रहण ३८, जिन ठाण ३९, जिन ढलण ४०, जिन दिष्टि ४१, जिन इष्टि ४२, जिन रस्टि ४३, जिन रिष्टि ४४, जिन सम इष्टि ४५, जिन सहाव इष्टि ४६, जिन उत्पन्न इस्टि ४७, जिन सम इस्टि ४८, जिन सहकार इस्टि ४९, जिन औकास इस्टि ५०, जिन अन्मोद इस्टि ५१, जिन षिपक इस्टि ५२, जिन सर ५३, जिन सब्द सर ५४, जिन असब्द सर ५५, जिन गुपित सर ५६, जिन कमल सर ५७, जिन लष्य ५८, जिन अलष्य ५९।

जिन दर्स इस्टि ६०, जिन उत्पन्न दर्स ६१, जिन गुण जिन मूलगुण संवेय इत्यादि ६२, जिन

व्रत अहिंसा इत्यादि ६३, जिन तप अनसन इत्यादि ६४, जिन प्रतिमा दर्सन इत्यादि ६५, जिन दान न्यान दान इत्यादि ६६, जिन दरस ६७, जिन न्यान ६८, जिन चरण ६९, जिन उत्पन्न ७०, जिन उत्पन्न हितकार ७१, जिन उत्पन्न सहकार ७२, जिन न्यान विन्यान ७३, जिन पद विंद ७४, जिन सिद्धि गुण ७५, जिन दर्स लष्य गुण ७६, जिन सुयं लब्धि ७७, जिन कारण सोलह ७८, जिन सोलही उत्पन्न हितकार सहकार षिपक जिन इस्ट ७९, सोलही उत्पन्न सुयं लब्धि जिन इस्ट परमेस्टि ८०, जिन उत्पन्न परमिस्टि जिन चतुष्टै इस्ट ८१, जिन चतुष्टै उत्पन्न जिन रमण इस्ट ८२, जिन उत्पन्न रमण जिन रयणत्तय इस्ट ८३, जिन रयणत्तय उत्पन्न इस्ट जिन नन्त नन्त विसेष जिन दिप्ति जिन दिस्टि जिन अलंकृत जिन चरण दरस इत्यादि ८४, जिन सम्मत न्यान इत्यादि ८५, जिन सुयं सुभाव सूषम अतिंद्री सुभाव ८६, तत् द्रव्य काय पदार्थ सुभाव ८७, सूषम विंद विन्यान सुयं षिपति सूक्ष्म क्रिया क्रांति प्रतिपाद ८८, जिन समय सहकार रमण ८९, जिन जिननाथ अन्मोद न्यान ९०, कम्मस्य विलयं गत ९१ ।

अर्थ—यदि यह आत्मा अपने स्वभावमें रहे, जिन कथनको माने ॥ १ ॥ जिनवाणीको माने ॥ २ ॥ जिन भगवानकी श्रद्धा करे ॥ ३ ॥ जिनदेवकी सहायता लेवे ॥ ४ ॥ जिन कथित पदार्थको माने या वीत-राग आत्मा होजावे ॥ ५ ॥ वीतरागभावमें परिणमन करे ॥ ६ ॥ जिनकथित प्रमाणको माने ॥ ७ ॥ अविनाशी वीतरागभावमें रमे ॥ ८ ॥ सूर्य समान जिनदेवकी भक्ति करे ॥ ९ ॥ स्वयं अपने स्वरूपमें रमण करे ॥ १० ॥ वीतराग विज्ञानको धारे ॥ ११ ॥ वीतराग पदका सेवन करे ॥ १२ ॥ वीतरागी आत्मा पदार्थको जाने ॥ १३ ॥ वीतराग निश्चय रत्नत्रयमें स्थिर हो ॥ १४ ॥ वीतरागमय वीर्यको सम्हाले ॥ १५ ॥ वीतरागी आत्मामई पदार्थको जाने ॥ १६ ॥ वीतरागतामें मिल जावे ॥ १७ ॥ वीतरागी कमल समान प्रफुल्लित होजावे ॥ १८ ॥ वीतरागतामें रमण करे ॥ १९ ॥ वीतरागभावमें मगन हो ॥ २० ॥ वीतराग-भावमें आनन्द माने ॥ २१ ॥ वीतरागभावमें सुखी हो ॥ २२ ॥ वीतराग चिदानन्द होजावे ॥ २३ ॥

वीतराग सहजानन्द होजावे ॥ २४ ॥ वीतरागमय परमानन्दमें लीन होजावे ॥ २५ ॥ वीतरागमय सत् आत्माको जाने ॥ २६ ॥ वीतरागभावसे भूषित जिन होजावे ॥ २७ ॥ अनन्त वीतरागतामें मगन हो ॥ २८ ॥ उपादेय वीतागभावको अनुभव करे ॥ २९ ॥ वीतरागता ही अनुभवने योग्य है ॥ ३० ॥ वीतरागभाव इंद्रियगोचर नहीं है ॥ ३१ ॥ वीतरागभाव चितारने योग्य है ॥ ३२ ॥ वीतरागभाव जानने योग्य है ॥ ३३ । वीतरागता देखने योग्य है ॥ ३४ ॥ वीतरागता सीखने योग्य है ॥ ३५ ॥ वीतरागता धारणे योग्य है ॥ ३६ ॥ वीतरागभाव ग्रहण करने योग्य है ॥ ३७ ॥ वीतरागतामें गुप्त होना योग्य है ॥ ३८ ॥ वीतरागभावको ही अपना स्थान बनावे ॥ ३९ ॥ वीतरागभावमें अपनेको ढाले ॥ ४० ॥ वीतरागभावकी श्रद्धा करे ॥ ४१ ॥ वीतरागतासे इष्ट करे ॥ ४२ ॥ वीतरागताका स्वाद ले ॥ ४३ ॥ वीतरागताको अडग बनावे ॥ ४४ ॥ वीतरागता सहित समभावसे प्रेम करे ॥ ४५ ॥ वीतराग स्वभावसे प्रेम करे ॥ ४६ ॥ वीतरागतासे ही इष्ट मुक्ति पैदा होती है ॥ ४७ ॥ वीतरागमय समभावको उपादेय जाने ॥४८॥ वीतरागताकी सहायतासे ही इष्ट कार्यकी सिद्धि है ॥ ४९ ॥ वीतरागताके भीतर इष्ट तत्व गर्भित है ॥ ५० ॥ वीतरागमय व आनन्दमय इष्ट भाव है ॥ ५१ ॥ वीतराग क्षायिक भाव इष्ट भाव है ॥ ५२ ॥ वीतरागभावको ही स्नानका सरोवर जाने ॥ ५३ ॥ जिन शब्दके द्वारा उसी सरोवरमें प्रवेश करे ॥ ५४ ॥ वह सरोवर शब्द रहित वीतरागमय है ॥ ५५ ॥ वह वीतराग सरोवर गुप्त है ॥ ५६ ॥ वह सरोवर वीतरागभावरूपी कमलको रखता है ॥ ५७ ॥ वीतरागता ही लखने योग्य है ॥ ५८ ॥ वीतरागता इंद्रिय व मनसे लखने योग्य नहीं है ॥ ५९ ॥ वीतराग सम्यग्दर्शन इष्ट है ॥ ६० ॥ वीतरागतासे ही सम्यग्दर्शन दृढ होता है ॥ ६१ ॥ वीतरागमई गुणसे श्री जिनेन्द्रके मूल गुणको जानना चाहिये, इत्यादि ॥ ६२ ॥

वीतरागताके पोषक अहिंसा आदि पांच व्रत हैं ॥ ६३ ॥ वीतरागताके पोषक अनशन आदि बारह तप हैं ॥ ६४ ॥ वीतरागभावको वढ़ानेवाली दर्शक व्रत आदि ग्यारह प्रतिमाएं श्रावककी हैं ॥६५॥ वीतरागभावको देनेवाले ज्ञान दान आदि चार दान हैं ॥ ६६ ॥ वीतरागमय सम्यग्दर्शन ॥ ६७ ॥ वीतरागमय ज्ञान ॥ ६८ ॥ वीतरागमय चारित्र ॥ ६९ ॥ इन्हींसे जिनका वीतरागपद पैदा होता है ॥ ७० ॥ वीतरागभावसे हितकारी पद होता है ॥ ७१ ॥ वीतरागभावसे मोक्ष सहकारी पद होता है ॥ ७२ ॥ वीतरागभाव ही सम्यग्ज्ञान है ॥ ७३ ॥ वीतराग पद ही अनुभवने योग्य है ॥ ७४ ॥ वीतरागतापूर्ण

सिद्धोंके गुण हैं ॥ ७६ ॥ वीतरागभावको देखना जानना ही गुणकारी है ॥ ७३ ॥ वीतरागभाव स्वयं आपसे प्राप्त होता है ॥ ७७ ॥ तीर्थंकर जिनराजपदकी कारण दर्शनविशुद्धि आदि सोलहकारण भावनाएं हैं ॥ ७८ ॥ सोलहकारण भावनाओंके फलसे हितकारी सहकारी क्षायिकभावधारी तीर्थंकर अरहन्तका पद प्राप्त होता है ॥ ७९ ॥ षोड़शकारण भावनाओंके फलसे स्वयं ही वीतराग अरहन्तपद प्रगट होता है ॥८०॥ वीतराग अरहन्त परमेष्ठीमें अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त वीर्य, अनन्त सुख चार चतुष्टय प्रगट होते हैं ॥ ८१ ॥ इन चतुष्टयके प्रतापसे अरहन्त भगवान आपमें ही रमण करते हैं ॥ ८२ ॥ वीतराग-भावमें रमणसे ही निश्चय रत्नत्रयका झलकाव होता है ॥ ८३ ॥ निश्चय रत्नत्रयमें रमणसे ही अनन्त गुण धारी अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शनमय व यथाख्यात चारित्रमय पद प्रगट होता है ॥ ८४ ॥ वहीं वीतराग सम्यग्दर्शन आदि गुण हैं ॥ ८५ ॥ वे अरहन्त जिनराज स्वयं सूक्ष्म अतीन्द्रिय स्वभावमें रमण करते हैं ॥ ८६ ॥ वे ही स्वाभाविक आत्मा द्रव्य हैं, वे ही स्वाभाविक अस्तिकाय हैं, वे ही स्वाभाविक आत्मा पदार्थ हैं ॥ ८७ ॥ वे अतीन्द्रिय सूक्ष्म स्वभावका अनुभव करनेवाले क्षायिक स्वभावधारी अतीन्द्रिय स्वभावमें ही रमणशील हैं ॥ ८८ ॥ वे ही वीतराग समयसारतत्वमें रमण करते हैं ॥ ८९ ॥ वे ही वीत-राग जिनेन्द्र ज्ञानानन्दमय हैं ॥ ९० ॥ उनके कर्म क्षय होगए हैं ॥ ९१ ॥

उत्पन्न न्यान १, उत्पन्न कम्म विली २, उत्पन्न मुक्त न्यान ३, मुक्त कम्म विलयंति ४, जिन उत्पन्न नन्द आनन्द ५, विनन्द उत्पन्न विलयंति ६, न्यान अन्मोद अवल वली ७, विषय सुयं विलयं गता ८, अन्मोद न्यान मुक्ति गत ९, तस्य सुभावेन जिन उक्त, जिन परिणै, जिन समय दिस्टि इस्टि दर्स सहन सहकार विकलं जाति १०, विकल सुभाव ११, विकल दिस्टि १२, विकल इस्टि १३, विकल स्थान १४, विकल रयणत्तय १५, विकल सयनासन १६, विकल मिलन १७, विकल अन्मोद १८, जिन उक्त स्थान विकलं जंति १९, विकल उत्पन्न २०, विकल हित-कार २१, विकल सहकार २२, जिन उक्त विलं जंति २३ ।

कौन सुभाइ, जनरंजन राग, कलरंजन दोष, मनरंजन गारौ, दर्सन मोहंध, न्यान आवरण,

दर्स आवरण, मोह आवरण, अन्तर विसेष संक आसा स्नेह आदि मिथ्या आदि तीन सल्य, तीन कुन्यान, कषाय मल, मद्य मान, विषय, व्यसन, मिथ्या रमण, दुखेन सुभाव, अनिष्ट व्रत, अनिष्ट तप, अनिष्ट गुण, अनिष्ट पडिमा, अनिष्ट दान, अनिष्ट पात्र, अनिष्ट रयणत्तय, अनिष्ट गुण सिद्ध, अनिष्ट सुयं लब्धि, अनिष्ट दर्सि, अनिष्ट लष्य, अनिष्ट अलष्य, अनिष्ट उत्त, अनिष्ट औकास, अनिष्ट आनन्द, जिन उक्त विकलं जंति २४।

जिन उक्त दात्र पात्र विसेष विकलं जंति २५, जिन उक्त दात्र पात्र न्यान अन्मोद, न्यान सहकार, न्यान अन्मोद, न्यान मिलन, न्यान परिणै, न्यान श्रीन्यान, पुरुष न्यान, अन्मोद असहनी सहकार विकलं जंति, विकलत्रयबेन्द्री, तेन्द्री, चौइन्द्री, विकलत्रय जोनि भ्रमणं करोति २६, जिन उक्त विकल विकलत्रय भ्रमण, अनन्त काल भ्रमणं २७।

अर्थ—जब सम्यग्ज्ञान पैदा होता है ॥ १ ॥ तब कर्मोंका आस्रव रुकता है ॥ २ ॥ जब ज्ञानका भोग या स्वानुभव उत्पन्न होता है ॥ ३ ॥ तब कर्मकी निर्जरा होती है, नवीन कर्म नहीं बन्धता है ॥४॥ जब जिनकथित तत्वोंके आनन्दमें मगनता होती है ॥ तब सर्व दुःख व चिंता चली जाती है। ६ ॥ जब अनुपम बलवान ज्ञानानन्द प्रगट होता है ॥ ७ ॥ तब इंद्रियोंके विषयोंकी चाह स्वयं विला जाती है ॥८॥ तब मोक्षके ज्ञानमें आनन्द आता है ॥ ९ ॥ परन्तु जब यह स्वभाव विगड़ जाता है, जिन कथनमें, वीत-राग परिणतिमें, वीतरागी आत्मामें मूढ़ होजाता है, सम्यग्दर्शन स्वभाव मिथ्यात्वरूप दोषी होजाता है ॥ १० ॥ स्वभाव दोष पूर्ण होता है ॥ ११ ॥ श्रद्धा विगड़ जाती है ॥ १२ ॥ उपादेय तत्व दोष पूर्ण होजाता है ॥ १३ ॥ गुणस्थान नीचा दोष पूर्ण मिथ्यात्व होजाता है ॥ १४ ॥ रत्नत्रय स्वभाव दोषी हो-जाता है ॥ १५ ॥ शय्या व आसन क्रिया धर्मपूर्ण न होकर दोषपूर्ण होजाती है ॥ १६ ॥ दोषोंसे मिलता जाता है ॥ १७ ॥ सचे सुखसे छूट जाता है ॥ १८ ॥
जिन कथित मार्गसे भ्रष्ट होजाता है ॥ १९ ॥ तब सर्व भाव दोष पूर्ण पैदा होते हैं ॥ २० ॥

दोषोंको हितकारी समझता है ॥ २१ ॥ दोषोंकी सङ्गति करता है ॥ २२ ॥ जिनकथित तत्वको नहीं मानता है ॥ २३ ॥ कैसा स्वभाव होजाता है सो कहते हैं कि वह जनरंजन रागमें, शरीररंजन दोषमें, मनरंजन घमण्डमें फंस जाता है, दर्सनमोहका अन्धपना होता है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोह, अन्तराय कर्मोंका विशेष उदय होता है, शंकाशील होजाता है। आशा तृष्णामें फंस जाता है, स्नेह व वैरमें उलझ जाता है। मिथ्या माया निदान शल्योंसे पीड़ित होजाता है, उसमें कुमति कुश्रुत कुअ-वधि तीनों मिथ्याज्ञान होते हैं, कषायोंसे मलीन होता है, मानका नशा चढ़ा होता है, विषयोंमें व सात व्यसनोंमें फंसा होता है, मिथ्यात्व भावमें रमण करता है, दुःखमय स्वभावसे श्रद्धा रहित आर्तध्यान सहित अनिष्ट व्रत करता है, दोष पूर्ण तप तपता है, हिंसादि हानिकारक गुणोंकी वृद्धि करता है। ग्यारह प्रतिमाओंको दोषपूर्ण मिथ्यात्व सहित पालता है। मानकषायके वशीभूत हो अपात्रोंको अनिष्ट दान देता है, स्वयं मिथ्यात्व सहित अपात्र होजाता है, रत्नत्रयको दोषी बना देता है, हानिकारक गुणोंकी सिद्धि करता है, स्वयं अनिष्ट भावोंको प्राप्त करता है, श्रद्धान खोटा होता है, ध्येय खोटा होता है, अतीन्द्रिय आत्मा पर इष्ट होता नहीं, अनिष्ट कथन करता है, अनिष्ट ज्ञान रखता है, हानिकारक बातोंमें सुख मानता है, श्री जिनेन्द्र कथित आज्ञाको दोष पूर्ण कर देता है ॥ २४ ॥

जिनेन्द्र कथित न तो वह दाता रहता है न पात्र रहता है। वह अपनेको अनिष्ट ही प्रदान करता है ॥२५॥ जिन कथित दातार पात्र, ज्ञानानन्द भाव, सम्यग्ज्ञानकी सहायता, ज्ञानानन्दके साथ ज्ञानको बढ़ाना, ज्ञानमें परिणमन करना, ज्ञानरूपी सम्पदाका ज्ञान, आत्माका यथार्थ ज्ञान, सच्चा सुख आदि बातें उसे सुहाती नहीं, वह दोषपूर्ण होजाता है, पाप बांधकर द्वेन्द्रिय, तेन्द्रिय, चौन्द्रिय विकलत्रयमें जन्म पाकर भ्रमण करता है ॥ २६ ॥ जो जिन कथित मार्गको दोषी बनाता है वह विकलत्रयमें भ्रमण करता है, फिर अनन्तकाल तक एकेन्द्रियादिमें भ्रमण करता है ॥ २७ ॥

व्रताव्रतकार, बंभ अबंभ रक्ष्य निरोध, अन्यान न्यान अन्मोद, दिष्टि विकल १, एय विसेष विकलत्रय जोनि भ्रमणं करोति २, जदि कदि कालांतर विसेष सुभाउ–सुद्ध जिन उत्त ३, जिन वयण ४, जिन दर्स सुभाव ५, जिन समय ६, जिन सहकार ७; जिन औकास ८,

जिन अन्मोद सुभाव उत्पन्नं भवति ९, तदि काल विसेष निकलं मनु प्रासं भवति १०, जदि कदि कालांतर अनेकवार जदि कलण सुभाव परिणाम भवति ११, कलण सहकार कलणं सुभाव १२, न्यान अन्मोद सहकार परिणाम दरस न्यान चरण सुभाव १३; स्त्री पुंवेद उत्पन्नं भवति १४; अन्मोद न्यान कलण सुभाव निकलै १५; बीर्ज न्यान सहकार कलण सुभाव १६; कितीकवार सुभाव कलण उत्पन्न परिणाम भवतु १७; जदि काल जिन उक्त जिन परिणै १८; जिन प्रमाण १९; जिन समय २०; जिन सहकार २१; जिन औकास २२; जिन अन्मोद २३; जिन षिपक २४; जिन मुक्ति २५; जिन कमल २६; जिन रयण २७; जिन रंज २८; जिन वेद २९; जिन न्यान ३०; जिन विन्यान ३१, जिन अनन्त ३२, जिन न्यान प्रकार ३३, जिन अन्मोद न्यान षिपक ३४, जिन मुक्ति ३५, जिन अषय ३६, जिन सुरय ३७, सुयं रमण ३८, जिन विंजन ३९, जिन पद ४०, जिन अर्थ ४१, जिन तिअर्थ ४२, जिन उत्पन्न उत्पन्न जिन ४३, उत्पन्न हितकार रमण ४४, जिन अर्क ४५; जिन विंद ४६; जिन आगन्त ४७; जिन हितकार ४८; जिन हुंतकार ४९; जिन रमण जिन उत्पन्न ५०, सहकार जिन इस्ट ५१; सहकार जिन सुभाव ५२; सहकार जिन लष्य ५३; सहकार जिन गुप्ति अलष्य ५४; सहकार जिन गुहित गुप्त अन्मोद ५५; सहकार जिन सुयं लब्धि उत्पन्न ५६; आदि जिन सूषम सुभाव ५७; अनन्त अन्मोद ५८; इन्द्री प्राण चतुदस सुभाव ५९; अनन्त विसेष न्यान अन्मोद रंज ५; रमण ५; नन्द ५; चरण ५, इस्ट परमिस्टि न्यान ५, सम्मत्त ५, अर्क ५–६० ।

भय विनस्य भय विली ६१; चतुष्टय नन्त अरहन्त सुभाइ ६२; अंगदि अंग दरस सम्यक दरस अनन्त दरस श्री सम्यक दर्स न्यान चरण संजुक्त ६३; दात्र पात्र सुभाव सहकार ६४;

कल्प विकल्प मुक्त रमण ६५, न्यान अन्मोद अनन्त विशेष कलण सुभाइ ६६, अनन्त विसेष कलै ६७, न्यान अन्मोद कलै ६८, कलण सहकार कलण सुभाइ कलै ६९, न्यान उत्पन्न ७०, अनादि कम्म उत्पन्न विली ७१, न्यान मुक्त रमण ७२, न्यान अनन्त कलण ७३, मुक्त कम्म बिली ७४, न्यान अन्मोद नन्द ७५, विनन्द विली ७६, सुमन विली ७७, न्यान अन्मोद अवल वली मिषाय गली ७९, कलण जिन उत्त समय सहकार ८०, अनन्त विसेष कलण भवति ८१, न्यान अन्मोद मुक्ति गमनं भवतु ॥ ८२ ॥

अर्थ—जहां अपूर्ण श्रद्धा होती है वहां कभी व्रत पालनमें, कभी व्रत रहित होनेमें भाव होते हैं, कभी ब्रह्मचर्यकी रक्षामें, कभी कुशील रमणमें भाव होते हैं, कभी परिग्रहकी रक्षामें, कभी परिग्रहके विरोधमें भाव होते हैं, कभी मिथ्याज्ञानमें आनन्द मानता है, कभी सम्यग्ज्ञानमें आनन्द मानता है। यह सब विकल दृष्टि है ॥ १ ॥ विकल स्वभावसे यह प्राणी बहुत काल विकलत्रयकी योनियोंमें भ्रमण करता है ॥ २ ॥ जब कभी काल सुधरनेका आवे, विशेष स्वभाव प्रगट हो शुद्ध जिन कथन ॥ ३ ॥ जिन-वाणी ४, जिनेन्द्रके श्रद्धान योग्य स्वभाव ॥ ५ ॥ वीतराग आत्मा ॥६॥ वीतरागकी शरण ॥७॥ वीतराग-मय ज्ञान ॥ ८ ॥ वीतरागतामें आनन्द, इन बातोंके माननेका समय आजावे ॥ ९ ॥ तब बहुत काल पीछे मनुष्य जन्मकी प्राप्ति हो। उन्नति करते करते मनुष्य जन्म पावे ॥ १० ॥ तब मनुष्य जन्ममें इसके अनेक-बार आत्माके जाननेका परिणाम हो ॥११॥ आत्माके ज्ञानकी मददसे आत्माका अनुभव प्रगट हो ॥१२॥ ज्ञानमें आनन्द पानेका स्वभाव प्रगट हो, तथा सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्रमई रत्नत्रय स्वभाव झलक उठे ॥ १३ ॥ स्त्री या पुरुष वेदमें हो ॥ १४ ॥ ज्ञानानन्दके अभ्यासका स्वभाव प्रगट हो ॥ १५ ॥ आत्मवीर्यके द्वारा ज्ञानकी सहायतासे आत्मानुभव प्रगट हो ॥ १६ ॥ बारबार स्वभावका अनुभव रहा करे ॥ १७ ॥ समय पाकर जिन कथित वीतरागतामें परिणमन हो ॥ १८ ॥ वीतरागमय सम्य-ग्ज्ञान होजावे ॥ १९ ॥ वीतरागी आत्मा हो ॥ २० ॥ वीतरागताकी मदद हो ॥ २१ ॥ वीतरागतामें प्रवेश हो ॥ २२ ॥ वीतरागभावमें मगनता हो ॥ २३ ॥ क्षायिक वीतरागभाव प्रगट हो ॥ २४ ॥ वीतरागमय

मोक्षका स्वभाव झलके ॥ २५ ॥ वीतरागमें कमल समान प्रफुल्लित हो ॥ २६ ॥ वीतरागतामें रमण हो ॥ २७ ॥ वीतरागतामें मगनता हो ॥ २८ ॥ वीतरागतामें आनन्द माने ॥ २९ ॥ वीतरागता सहित ज्ञान हो ॥ ३० ॥ वीतरागता सहित भेदविज्ञान हो ॥ ३१ ॥ अनन्त वीतरागता हो ॥ ३२ ॥ वीतरागता सहित ज्ञानका प्रचार हो ॥ ३३ ॥ वीतराग व आनन्दमय क्षायिक ज्ञान हो ॥ ३४ ॥ वीतरागतापूर्ण मोक्ष स्वभाव झलके ॥ ३५ ॥ अविनाशी वीतरागता हो ॥ ३६ ॥ सूर्य समान वीतरागी आत्मा हो ॥ ३७ ॥ स्वयं आपमें रमण करै ॥ ३८ ॥ जिनपद प्रगट हो ॥ ३९ ॥ जिनपद हो ॥ ४० ॥ जिन वीतराग आत्मा पदार्थ हो ॥ ४१ ॥ रत्नत्रय स्वभावी वीतराग जिन हो ॥ ४२ ॥ वीतरागतासे ही वीतरागता बढ़ रही हो ॥ ४३ ॥ उपादेय तत्वमें रमणता हो ॥४४॥ सूर्य समान जिन भगवान हो ॥४५॥ वीतरागताका अनुभव हो ॥४६॥ वीतरागतामें परिणमन हो ॥ ४७ ॥ हितकारी वीतरागता हो ॥ ४८ ॥ कर्म नाशक वीतरागता हो ॥४९॥ वीतरागताकी रमणसे वीतरागता उत्पन्न हो ॥ ५० ॥

वीतरागता ही इष्ट भासे ॥ ५१ ॥ वीतराग स्वभाव प्रगट हो ॥ ५२ ॥ वीतरागताका ही लक्ष्य हो ॥५३॥ वीतराग गुप्त अतीन्द्रिय स्वभावमें तन्मय हो ॥ ५४ ॥ वीतरागताकी गुफामें गुप्त होकर आनन्द भोगे ॥ ५५ ॥ वीतरागतासे स्वयं शक्तियें प्रगट हों ॥५६॥ इत्यादि वीतरागमय सूक्ष्म अतीन्द्रिय स्वभाव प्रगट हो ॥ ५७ ॥ अनन्त सुख हो ॥ ५८ ॥ पांच इंद्रिय तीन बल आयु श्वास दश प्राण मनुष्यगतिकी अपेक्षासे हों परन्तु अरहन्तपदकी अपेक्षा केवल चार प्राण हों। वचनबल, कायबल, श्वास, आयु। केवलीके इंद्रिय मनका काम नहीं होता है ॥ ५९ ॥ अनन्त गुण सहित ज्ञान व आनन्दमें मगनता हो। पांच तरहसे मगनता हो, पांच तरहसे रमण हो, पांच तरहसे आनन्द हो, पांच तरहसे चारित्र हो, पांच तरहसे उपादेय अरहन्त परमेष्ठीका ज्ञान हो, पांच तरहका सम्यक्त हो, पांच तरहका सूर्य स्वभाव हो। अर्थात् अरहन्तके अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त वीर्य, अनन्त सुख, जीवत्व। इन शुद्ध पांच भावोंमें मगनता है, इन्हींमें रमणता है, इन्हींमें आनन्द है, इन्हींका आचरण है, इन्हींका ज्ञान है, इन्हींका श्रद्धान है, ये ही पांच सूर्य समान प्रकाशित हैं ॥ ६० ॥

भय नाश होगया हो, विला गया हो ॥६१॥ अरहंतके स्वाभाविक अनन्तज्ञानादि चतुष्टय प्रगट हों ॥६२॥ सर्वांग सम्यग्दर्शन, अनन्तदर्शन व सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्रका प्रकाश हो ॥६३॥ आप ही दाता

हो, आप ही पात्र हो, आपसे आपको आनन्द देता हो ॥६४॥ सर्व कल्पनाओंसे व विकल्पोंसे मुक्त होकर आपमें रमण करता हो ॥६५॥ ज्ञानानन्दमय अनन्त गुणोंके अनुभवका स्वभाव झलकता हो ॥६६॥ ऐसे अरहंत अनन्त गुणोंका अनुभव करते हैं ॥ ६७ ॥ ज्ञान आनन्दका अनुभव करते हैं ॥ ६८ ॥ अनुभवकी सहायतासे अपने स्वभावका स्वाद लेते हैं ॥ ६९ ॥ केवलज्ञान प्रगट है ॥७०॥ अनादिसे होनेवाला कर्मोंका आस्रव नहीं रहा ॥७१॥ ज्ञानमई मुक्त स्वभावमें रमण करते हैं ॥७२॥ अनन्तज्ञानका स्वाद लेते हैं ॥७३॥ कर्म उदयमें आकर क्षय होरहे हैं ॥७४॥ ज्ञान व आनन्दमें मगनता है ॥७५॥ सर्व आकुलता मिट गई है ॥७६॥ स्वप्न समान जगत व्यवहार दूर होगया है ॥ ७७ ॥ अनुपम बलवान ज्ञान व सुख प्रगट है ॥७८॥ सर्व विषयकी चाह जल गई है ॥ ७९ ॥ जिनेन्द्र कथित आत्मीक तत्वका पूर्ण अनुभव है ॥ ८० ॥ अनन्त गुणोंका अनुभव है ॥ ८१ ॥ ज्ञानमय व आनन्दमय आत्मा मोक्षमें चला जाता है ॥ ८२ ॥

भावार्थ—यहां आत्माके अनुभवको मोक्षमार्ग बताकर उसीसे मोक्षका लाभ बताया है। नौमें गुणस्थान तक वेद होता है, आगे नहीं। यह श्रेणी चढ़ते हुए स्त्री व पुरुष वेदकी मुख्यता कही है, यद्यपि नपुंसक वेदधारी भी चढ़ सक्ता है। द्रव्यवेद पुरुषका ही होता है। पुरुष शरीरधारी ही मोक्ष लाभ कर सकता है।



चतुर्थ अध्याय ।

पंचेन्द्रिय चौवीस स्थान ।

(१) गति–४ सब ।
(२) इंद्रिय–पंचेन्द्रिय ।
(३) काय–त्रस ।
(४) योग–१५ सर्व ।
(५) वेद–३ सर्व ।
(६) कषाय–२५ सर्व ।
(७) ज्ञान-८ सर्व ।
(८) संयम–७ सर्व ।
(९) दर्शन-४ सर्व ।
(१०) लेश्या–६ सर्व ।
(११) भव्य–२ दोनों ।
(१२) सम्यक्त–६ सर्व ।
(१३) सैनी–२ दोनों ।

(१४) आहारक–२ दोनों ।
(१५) गुणस्थान–१४ सर्व ।
(१६) जीव समास–२ सैनी, असैनी, पंचेंद्रिय पर्याप्त, अपर्याप्त सहित ४ ।
(१७) पर्याप्ति–६ सब ।
(१८) प्राण–१० सब ।
(१९) संज्ञा–४ सब ।
(२०) उपयोग–१२ सब ।
(२१) ध्यान–१६ सब ।
(२२) आस्रव–५७ सब ।
(२३) योनि–२६ लाख ।
(२४) कुल कोड़ि–१०६॥ लाख ।

जिन उक्त १, जिन वयन २, जिन दिस्टि ३, जिन इस्टि ४, जिन रस्टि ५, जिन रिस्टि ६, जिन समय इस्टि ७, जिन सह इस्टि ८, जिन उत्पन्न इस्टि ९, जिन सहकार दिस्टि १०, जिन औकास इस्टि ११, जिन अन्मोद न्यान दिस्टि १२, जिन षिपक दिस्टि १३, जिन मुक्त इस्टि १४, जिन उत्पन्न इस्टि १५, जिन इष्ट दर्स १६, जिन उत्पन्न दर्स १७, जिन इस्ट लष्य १८, जिन उत्पन्न लष्य १९, जिन उत्पन्न रमन २०, जिन इस्ट रमन २१, जिन जीव आह्वान

२२, जिन षिपक जिन २३, धुव रमन जिन २४, जिन इस्ट उत्पन्न सुयं लब्धि २५, जिन उत्पन्न इस्ट लब्धि २६, सुयं जिन हितकार २७, सुयं इस्ट लब्धि जिन उत्पन्न हितकार २८, उत्पन्न इस्ट सुयं सुभाव रमण २९, क्रांति २, स्पश २, रूप ४, सब्द ४, मनपर्यय ४, ३०, षिपक सुयं लब्धि ३१, इस्ट षिपक उत्पन्न इस्टि हितकार रमण अर्क इत्यादि ३२।

जिन इस्ट उत्पन्न सुयं लब्धि रमण सुभाव जिननाथ ३३, जिन उक्त जिन दर्स जिन वयण ३४, अतीन्द्रिय सुभाव ३५, इंद्रिय विलय ३६, विषय विलय ३७, राग जन रंजन विलय ३८, दोष गारौ दर्सन मोहंध विलय ३९, आवरण विलय ४०, मिथ्या विलय ४१, कषाय विलय ४२, अन्यान वय तव क्रिया कस्ट विलय ४३, जिन उत्त केवल सुभाव ४४, उक्त न्यान सह-कार न्यान औकास न्यान ४५, अन्मोद अनन्त बली अतीन्द्रिय सुभाव ४६, भय द्रव्य भय उत्पन्न विलय ४७, अभय भय विनस्य ४८, दात्र पात्र न्यान रमण ४९, न्यान विन्यान रमण ५०, न्यान इष्ट रमन ५१, न्यान उत्पन्न न्यान कलण रमण ५२, इष्ट न्यान गम्य रमण ५३, अगम्य रमण ५४, रंज रमण ५५, आनन्द रमण ५६, अतीन्द्रिय सहकार जिन उक्तं ५७, न दिस्टते किं न विसेष इंद्रिय सुभाव इन्द्री इस्ट सुभाव ५८; इन्द्री उत्पन्न इस्ट विषय ५९, इस्ट विषय उत्पन्न इस्ट मिथ्या राग दोष कषाय आवरण न्यान दर्सन मोहंध संक सल्य भय सहित भयभीत इन्द्री सुभाव दिस्टते ६०, इंद्रिय निरोध विरोध ६१; अन्मोद इन्द्रिय विषय सहकार ६२, इंद्री सुभाव अन्यान वय तव क्रिया ससंक भय इंद्री सुभाव अन्मोद इंद्रिय प्रभाव अनन्त सुभाव इंद्री अन्मोद अतिन्द्री भाव न दिस्टते इन्द्री सुभाव अन्मोद पंचेन्द्रिय सुभाव जीव उत्पन्न भ्रमणं करोति ॥६३॥

अर्थ—जिनेन्द्र कथित तत्व ॥ १ ॥ व जिनवाणीमें हित जय होता है ॥ २ ॥ तब वीतराग सम्यग्दर्शन पैदा होता है ॥ ३ ॥ वीतरागतासे प्रेम होजाता है ॥ ४ ॥ वीतरागताका स्वाद आता है ॥ ५ ॥ वीतरागताकी खड्ग कर्म काटनेको तैयार होजाती है ॥ ६ ॥ वीतराग आत्मा उपादेय भासता है ॥७॥ वीतरागतासे इष्ट होजाता है ॥ ८ ॥ वीतराग भावसे हित बढ़ता जाता है ॥ ९ ॥ वीतरागता सहित सम्यग्दर्शन शोभता है ॥ १० ॥ वीतरागतामें प्रवेश इष्ट भासता है ॥ ११ ॥ वीतरागता सहित आनन्द व ज्ञान व सम्यग्दर्शन झलकता है ॥ १२ ॥ वीतराग क्षायिक सम्यग्दर्शन होजाता है ॥ १३ ॥ वीतराग स्वभाव मुक्तिमें उपादेयपना दिखता है ॥ १४ ॥ वीतरागतासे इष्ट भाव बढ़ता जाता है ॥ १५ ॥ वीतरागता सहित उपादेय तत्वपर दृष्टि रखता है ॥ १६ ॥ वीतरागतासे आत्मदर्शनमें स्थिति बढ़ती जाती है ॥ १७ ॥ वीतरागतासे अनुभवने योग्य तत्व इष्ट भासता है ॥ १८ ॥ वीतरागतासे लक्ष्यका प्रकाश होता जाता है ॥ १९ ॥ वीतरागतासे आत्मरमण बढता जाता है ॥ २० ॥ वीतरागतासे इष्ट तत्वमें रमण होता है ॥ २१ ॥ तब वीतराग आत्माका प्रकाश होजाता है ॥ २२ ॥ वीतराग क्षायिक भावधारी जिन होता है ॥ २३ ॥ अविनाशी आत्मरमी जिन होजाता है ॥ २४ ॥ वीतराग इष्ट तत्वके द्वारा स्वयं आत्माकी लब्धियें प्रगट होजाती हैं ॥ २५ ॥ वीतरागतासे इष्ट लब्धियें प्रगट होती हैं ॥ २६ ॥ तब आत्मा स्वयं हितकारी अरहन्त होजाता है ॥ २७ ॥ स्वयं इष्ट भावको प्राप्त किये हुए हितकारी जिनेन्द्र होजाता है ॥ २८ ॥ तब उपादेयके प्रकाशसे स्वयं वे जिनराज अपने स्वभावमें रमण किया करते हैं ॥२९॥ सोलह प्रकारसे मन वचन कायको निरोध कर रहे हैं अर्थात् काय पद्मासन है या कायोत्सर्ग है, स्पर्शसे कठोर है या कोमल है, रूप सुन्दर, असुन्दर, दीर्घ या लघु है, वचन सत्य, असत्य, उभय, अनुभय या मनके सत्यादि चार तरहके विचारसे १६ विकल्प नहीं हैं ॥ ३० ॥ स्वयं क्षायिक लब्धियोंके धारी होते हैं ॥ ३१ ॥ इष्ट क्षायिक भाव सहित अपने इष्ट तत्वमें रमण करनेवाले सूर्य समान तेजस्वी जिन होजाते हैं ॥ ३२ ॥ वे ही उपादेय वीतराग भावके द्वारा उत्पन्न स्वयं आत्माका प्रकाश उसमें रमण करनेवाले स्वभावमई जिनेन्द्र हैं ॥ ३३ ॥ जो कोई जिन कथित वीतराग सम्यग्दर्शनमें जिनवाणीके अनुसार रमण करते हैं ॥ ३४ ॥ वे अतीन्द्रिय स्वभाव होजाते हैं ॥ ३५ ॥ इंद्रियोंके द्वारा विषयोंका ग्रहण बन्द होजाता है ॥ ३६ ॥ इंद्रियोंके विषयोंमें राग दूर होजाता है ॥ ३७ ॥ लोगोंके रंजायमान करनेका रागभाव नहीं

रहता है ॥३८॥ अहंकारके दोषसे पूर्ण दर्शन मोहका अन्धपना क्षय होगया है ॥३९॥ कर्मोंका आवरण दूर होगया है ॥ ४० ॥ मिथ्यात्वका क्षय होगया है ॥ ४१ ॥ कषायोंका क्षय होगया है ॥ ४२ ॥ अज्ञानपूर्वक तप, व्रत क्रियाकांडका कष्ट मिट गया है ॥ ४३ ॥ जिनेन्द्र कथित केवलीका स्वभाव प्रगट होगया है ॥४४॥ जिन कथित शुद्ध ज्ञान स्वाध्यायिक ज्ञान, केवलज्ञान प्रकाशित है ॥ ४५ ॥ अनुपम वीर्यवान आनन्दमय अतींद्रिय स्वभाव प्रगट है ॥ ४६ ॥ तत्वमें भय, भय कर्मका आस्रव सब क्षय होगया है ॥ ४७ ॥ भयोंका नाश होकर निर्भय पद प्रगट होगया है ॥ ४८ ॥ आप ही ज्ञान दाता हैं, आप ही ज्ञानके लेनेवाले पात्र हैं। आपसे आपके ज्ञानमें रमण करते हैं ॥ ४९ ॥ ज्ञानमें रमणशील हैं ॥ ५० ॥ उपादेय शुद्ध ज्ञानमें रम रहे हैं ॥ ५१ ॥ ज्ञानसे प्रगट ज्ञानके अनुभवमें रमण कर रहे हैं ॥ ५२ ॥ उपादेय व ज्ञानगम्य आत्मामें रमण कर रहे हैं ॥ ५३ ॥ अतीन्द्रिय आत्मामें रमण कर रहे हैं ॥ ५४ ॥ वे आनन्दमें रमण कर रहे हैं ॥ ५५ ॥ परमानन्दमें रमण कर रहे हैं ॥ ५६ ॥ परन्तु जहां अतीन्द्रिय स्वभावका अनुभव जैसा जिनेन्द्रने कहा है ॥ ५७ ॥ नहीं दिखलाई पड़ता है, क्यों नहीं दिखलाई पड़ता है ? इंद्रियोंका व्यापार है व वही व्यापार उपादेय भास रहा है ॥ ५८ ॥ इंद्रियोंके भोगके लिये विषयोंको एकत्र करता है ॥ ५९ ॥ इष्ट विषयोंमें रमण करनेसे मिथ्यात्वभाव, राग द्वेष भाव, कषाय भाव, कर्मका आवरण, ज्ञानावरण, दर्शनावरण, शङ्का, शल्य, भय सहित इंद्रियोंका व्यापार ही देखा जाता है ॥ ६० ॥ वहां इंद्रियोंके रोकनेका अभाव है ॥ ६१ ॥ जिनसे इन्द्रियोंके विषयभोगनेमें सहायता मिलती है उनमें आनन्द होता है ॥ ६२ ॥ इंद्रियोंके विषयभोगके लिये अज्ञानमय व्रत, तप क्रियामें लीन रहता है, विषयोंमें जानेकी शङ्का रखता है, भयवान रहता है, इंद्रियोंके विषयोंमें रंजायमान होनेके प्रभावसे अनन्त स्वभाव इंद्रियोंके विषयानन्दके दिखते हैं, परन्तु अतीन्द्रिय स्वभावका रमण नहीं दीखता है, इंद्रियोंके विषयोंमें मगन होनेसे वह जीव पञ्चेंद्रिय जाति कर्मको बांधकर पञ्चेंद्रिय हो होकर भ्रमण करता है ॥ ६३ ॥

अतींद्रिय सुभाव न्यान अन्मोद विन्यान न्यान अन्मोद न दृष्टते । अन्यान अन्मोद इंद्री सुभाव–पंचेन्द्री सुभाव संसार सरणि भ्रमणं करोति १, जदि कदि कालांतर सुकीय सुभाव न्यान अन्मोद २, अतींद्रिय सुभाव अतींद्रिय सहकार ३, अतींद्रिय इस्ट ४, अतींद्रिय उत्पन्न न्यान

५, इस्ट न्यान ६, इस्टि न्यान ७, वयण आताप न्यान ८, परिणै न्यान ९, समय न्यान १०, दरस न्यान ११, औकास न्यान १२, अन्मोद अतींद्रिय सुभाव न्यान अन्मोद कम्म पिपति १३, इंद्री विषय विलय १४, रंज रमण आनन्द अतींद्रिय न्यान अन्मोद १५, राग दोष गारव दर्सन मोहंध न्यान आवरण घाति कम्म, मिथ्या कषाय, संक सल्य संक भय विलयंति १६, न्यान विन्यान अतींद्रिय सुभाव न्यान अन्मोद कम्म पिपति १७, अनन्त चतुस्टय परमेस्टि रयणत्तय सुयं लब्धि १८, रमण हितकार सहकार अनन्त विसेष न्यान अन्मोद जिन न्यान सुद्ध वुद्ध केवल सुभाव, न्यान आचरण, सम्यक्त, वीर्य, अनन्त क्षय, उपशम गुप्ति रमण १९, न्यान गुण व्रत तव दान व्रत रयण तव सिद्धि सुयं लब्धि २०, दरस लष्य रमण तव परमेस्टि २१, न योग श्री रयण तप श्री सुभाव चतुस्टय रमण २२, जिननाथ सुभाव विमल २३, कलय विकलय विलय २४, अतीन्द्रिय सुभाव न्यान अन्मोद २५, कम्म विलय मुक्तं गता सिद्धं सुवं ध्रुवं सिद्धि भवतु ॥२६॥

अर्थ—मिथ्यादृष्टी पंचेंद्रिय जीवके भीतर अतीन्द्रिय स्वभावका व ज्ञानानन्दका अनुभव नहीं दिखलाई पड़ता है, वह अज्ञानमें मगन है, इंद्रियोंके स्वभावमें, पांचों इंद्रियोंके विषयमें लीन होकर संसार वनमें भ्रमण करता है ॥१॥ यदि कभी काल आजावे तो उसे अपने स्वभावका ज्ञान हो व उसीमें आनन्द माने ॥ २ ॥ अतीन्द्रिय स्वभावके प्रकाशका कारण है ॥ ३ ॥ ऐसा समझकर अतीन्द्रिय स्वभावमें रमण अतीन्द्रिय स्वभावके रमणसे ज्ञान प्रगट हो ॥ ५ ॥ ज्ञान ही उपादेय भासे ॥ ६ ॥ ज्ञानमें ही स्वाद ले ॥ ७ ॥ आत्मज्ञानका कथन करे व आत्मज्ञानकी चर्चा करे ॥ ८ ॥ ज्ञानमें परिणमन करे ॥ ९ ॥ ज्ञानमय आत्मा होजावे ॥ १० ॥ दर्शनज्ञानमें रमण करे ॥ ११ ॥ ज्ञानमें ही प्रवेश करे ॥ १२ ॥ अतीन्द्रिय स्वभाव व ज्ञानानन्दमें मगन होनेसे कर्मोंका क्षय होता है ॥ १३ ॥ इंद्रियोंके विषयकी चाह गल जाती है ॥ १४ ॥ अतीन्द्रिय ज्ञान व आनन्दमें मगन होनेसे व रमण करनेसे ॥ १५ ॥ राग द्वेष, अभिमान, दर्शन मोह, ज्ञानावरण आदि घातिकर्म, मिथ्यात्व, कषाय, शङ्का शल्य भयआदि सब विभाव क्षय होजाते हैं ॥ १६ ॥ ज्ञानमय अतीन्द्रिय स्वभावमें ज्ञान सहित

आनन्द लाभ होनेसे कर्मोंका क्षय होजाता है ॥ १७ ॥ स्वयं अनन्त चतुष्टय सहित व रत्नत्रयमई अरहन्त परमेष्ठी पदका लाभ होजाता है ॥ १८ ॥ तब वे हितकारी व साथ रहनेवाले अनन्त गुणोंमें रमण करते हैं। ज्ञानमय, आनन्दमय जिनेन्द्र, शुद्ध, बुद्ध केवल स्वभावी ज्ञानमें आचरण करनेवाले, क्षायिक सम्यग्दृष्टी, अनन्त वीर्यवान, अनन्त कालतक क्षायिक व शांत भावमें गुप्त होकर रमण करते हैं ॥ १९ ॥ उन्होंने आत्मज्ञानसे, मूलगुणोंसे, व्रतोंके पालनेसे, तप करनेसे व रत्नत्रय स्वभावमें लीन होनेसे स्वयं सिद्धिको प्राप्त किया है ॥२०॥ अपने लक्ष्यका दर्शन कर लिया है। वे रत्नत्रयके स्वामी परमेष्ठी हैं ॥ २१ ॥ और चौदहवें गुणस्थानमें योगोंका होना बन्द होगया। केवल रत्नत्रय स्वभावमें या अनन्तज्ञानादि चतुष्टयमें रमणशील एकाग्र हैं ॥ २२ ॥ वे जिनेन्द्र स्वभावसे निर्मल हैं ॥ २३ ॥ संकल्प विकल्प आदिका क्षय है ॥ २४ ॥ वे अतींद्रिय स्वभावधारी ज्ञानमें मगन हैं ॥ २५ ॥ वे ही अघातीय चार कर्मोंके क्षयसे मोक्षपद पाते हैं। स्वयं सिद्ध ध्रुव अविनाशी सिद्ध होजाते हैं ॥ २६ ॥

खरभाग पृथ्वी निरूपणं—पहली रत्नप्रभा पृथ्वीके तीन भाग हैं—खरभाग, पंक भाग, अब्बहुल भाग। पहली दोमें भवनवासी देव व व्यंतरोंका स्थान है। अब्बहुलमें पहला नर्क है। उसको लक्ष्यमें लेकर तारणस्वामी कहते हैं—

जिन उक्तं जिन वयणं जिन दरस, दर्सयंति जिन समयं।
जिन सुभाव जिन गमनं, जिन अन्मोय न्यान विन्यानं ॥ १ ॥
जिन रहनं जिन गहनं, जिन उवनं जिन हिययार सुद्ध सुइ मिलनं।
जिन सहयार सु रमनं, जिन विन्यान न्यान सुइ सुवनं ॥ २ ॥
जिन अषयं जिन सुरयं, जिन वइ जिन समय जिनय जिन जिनयं।
जिन सहकार सु ममलं, जिन अवयास नन्त जिन वयनं ॥ ३ ॥
जिन कमलं जिन ममलं, जिन उत्तं जिन अर्थ ती अर्थं।
जिन समय अर्थं सदर्थं, जिन सहकार नंत सु ममलं ॥ ४ ॥

जिन परिणै जिन प्रमाणं, जिन उवएस नन्त नन्ताए।
जिन अन्मोद सु समयं, जिन षिपनं जिनयति, जिनन्द विंदानं ॥ ५ ॥
जिन परमेस्टि सु चरणं, जिन सम्मएव अवगाहणं।
जिन लंकृत जिन विन्यानं, जिन जिनयति अनंत कम्म बंधानं ॥ ६ ॥
जिन तत्व दव्वपय अर्थं, जिन दिट्ठं दव्व दिस्टि इष्टं च।
जिन काया क्रांति जिन उवनं, जिन कम्मोद न्यान विन्यानं ॥ ७ ॥
जिन उत्त नन्तानन्तं, नन्त सुभावेन कम्म विलयंती।
जिन नन्तानन्त सु दिट्ठं, जिन उत्तं नन्तानन्त सिद्धि सिद्धानं ॥ ८ ॥

आठ गाथाओंका अर्थ—जो कोई जिनेन्द्र कथितको, जिनवाणीको देखते हैं, जिन वचनपर श्रद्धान लाते हैं, वे वीतराग आत्माका अनुभव करते हैं। वे वीतराग स्वभावी होकर वीतराग भावमें परिणमन करते हैं, वे वीतरागमय आनन्द व ज्ञानका स्वाद लेते हैं ॥ १ ॥

जो वीतराग भावमें गुप्त होते हैं, वीतरागताको ग्रहण करते हैं, वीतराग भावको बढ़ाते हैं, वीत-राग भावसे शुद्ध स्वभावी आत्मासे मिलते हैं, वीतराग भावमें रमण करते हैं, वे ही वीतराग विज्ञानमें लीन होते हैं ॥ २ ॥

श्री जिनेन्द्र भगवान अविनाशी हैं, जिनेन्द्र सूर्य समान तेजस्वी हैं, वे वीतराग पदमें हैं, वे ही वीतराग आत्मा हैं, वे ही कर्मविजयी जिन हैं, वीतराग भावके कारण निर्मल हैं। श्री जिनेन्द्रमें अनन्त ज्ञान है, उनके ही वीतरागतापूर्ण वाणीका प्रकाश होता है ॥ ३ ॥

श्री जिनेन्द्र कमलके समान प्रफुल्लित हैं, श्री जिनेन्द्र शुद्ध हैं, उनका कथन वीतराग है, वे ही वीतरागी आत्मा पदार्थ हैं, वे ही रत्नत्रय स्वरूप हैं, वे ही वीतराग समयसार हैं, वे ही सत्य पदार्थ हैं, वीतरागताके साथ ये अनन्त कालतक निर्मल बने रहते हैं ॥ ४ ॥

वे वीतरागभावमें परिणमन करते हैं, वे ही जिनेन्द्र प्रमाण हैं, मानने योग्य हैं, जिनेन्द्रने अन-

न्तानन्त गुण पर्याय सहित द्रव्योंका उपदेश किया है, वे वीतराग आत्मामें मगन हैं, वे क्षायिक भाव धारी हैं, वे जिनेन्द्र ज्ञानानुभवी सच्चे कर्मविजयी हैं ॥ ५ ॥

वे परमेष्टी जिनेन्द्र आपमें आचरण कर रहे हैं, वे जिनेन्द्र वीतराग सम्यग्दर्शनमें लीन हैं, वे वीतरागतासे शोभित हैं, वे वीतरागमय ज्ञानी हैं, श्री जिनेन्द्रने अनन्त कर्म बन्धको जीत लिया है ॥ ६ ॥

श्री जिनेन्द्र ही सच्चे तत्व हैं, सत्य आत्मा द्रव्य है, सत्य आत्मा पदार्थ है, जिनेन्द्रने इष्ट व द्रव्यार्थिक दृष्टिसे सर्व द्रव्योंको यथार्थ देख लिया है। श्री जिनेन्द्रका शरीर परमौदारिक शोभायमान है, वे प्रगट जिनेन्द्र हैं, जिनेन्द्रने ज्ञान व आनन्द पूर्ण है ॥ ७ ॥

जिनेन्द्रने अनन्त पदार्थोंको बताया है, उनका अनन्त स्वभाव प्रगट है, उनके कर्म क्षय होगये हैं, जिनेन्द्रने अनन्तानन्त द्रव्यगुण पर्यायोंको देखा है। जिनेन्द्रने कहा है कि अनन्तानन्त जीव सिद्धिको पाकर सिद्ध होचुके हैं ॥ ८ ॥

तस्य जिनय जिन वयणं, षल सुभावेन किं सहकारेण किं करि जानंति १, षल सुभाव २, षल ग्रियो ३, षल वास स्थितं ४, षल सुभाव जिन वयणं किं कारणं, किं विशेषनं रमणं ५, षल पृथ्वी सुभाव उत्पन्न किंनर किं पुरिसा सुभाव, जिन उक्तं जिन रमणं किं किरिया जानंति ६, षल सुभाव जिन रंजन राग ७, जिन सुभाव जिन वयणं न रमंति ८, तं सुभावेन किंनर किंपुरिस उत्पन्नं भवति ९, जदि कदि कालंतर अनन्त काल भ्रमण भरत सुद्ध बुद्ध सुभावेन जैनोक्त जिन न्यान अन्मोद न्यान रमण न्यान विन्यान रमण ॥ १० ॥

सुयं लब्धि सोल ही सुभाव ११, जन रंजन राग विलयंगता संक सत्रह विलयं गता १२, निसंक रूव भय सल्य संक विलयं १३, निसंक सुभाव १४, जिन अन्मोद १५, जिन रमण प्रतिपाद्य १६, सूक्ष्म क्रिया सूक्ष्म प्रतिवाद १७, जदि काल सुभाव गहणं तदि काल उत्पन्न मनुष्य फल १८, जिन उक्त कलण १९, जिन उक्त ग्रहण अन्मोद न्यान उत्पन्न २०, वज्रनाराच रमण सुभाव २१, न्यान सुभाव २२, न्यान विन्यान मुक्त सुभाव मुक्ति गतं ॥ २३ ॥

अर्थ—खरभागमें किंनर किंपुरुष व्यंतर रहते हैं उनमें जो उत्पन्न होते हैं उनको लक्ष्यमें लेकर कहते हैं कि जो कोई दुष्ट स्वभावसे जिन भगवानको व जिनेन्द्रके वचनको क्या है, क्या नहीं है ऐसा शंकाशील हो, विना समझे जानते हैं ॥ १ ॥ दुष्ट स्वभाव रखनेसे ॥ २॥ उनको दुष्टताकी घात ही अच्छी लगती है, विषयभोगकी बात सुहाती है ॥ ३ ॥ दुष्टोंके व नीचोंके स्थानोंमें जो रहते हैं, कुसङ्गति रखते हैं ॥ ४ ॥ दुष्ट स्वभाव या मूर्ख स्वभावसे वे जिनवाणीमें रमण नहीं करते हैं ॥ ५ ॥ उनका स्वभाव ऐसा बन जाता है जिससे वे खरभाग पृथ्वीमें उत्पन्न होते हैं। किन्नर व किंपुरुष व व्यंतर होते हैं, वे जिन कथनमें रमण नहीं करते हैं, केवल कियाकाण्डमें मिथ्यात्व भावसे लगे रहते हैं ॥ ७ ॥ खल सुभावसे जनोंको राजी रखनेके रागमें लगे रहते हैं, खोटा तप कहते हैं, पूजवाते हैं ॥ ७ ॥ वीतराग भगवानके स्वभावमें व जिनवाणीमें रमण नहीं करते हैं ॥ ८ ॥ ऐसे स्वभावसे खोटा तप करके किन्नर किंपुरुष पैदा होते हैं ॥ ९ ॥ इस तरह अनन्त काल मिथ्यात्व भावके कारण अनेक पर्यायोंमें भ्रमण करते रहते हैं। कालांतरमें समय आजाता है, तब वे मनुष्य होकर शुद्ध बुद्ध स्वभाव आत्माको पहचानते हैं। श्री जिनेन्द्र कथित तत्वोंमें, वीतराग विज्ञानमें रमण करते हैं, ज्ञानानन्दमें मगन होते हैं ॥ १० ॥ स्वयं सोलह कारण भावनाको भाकर तीर्थंकर कर्म बांधते हैं ॥ ११ ॥ तब जनरंजन राग दूर होजाता है, सत्रह प्रकारकी शंकाएँ मिट जाती हैं अर्थात् सात तत्वोंमें शंका नहीं रहती है, सात प्रकारका भय नहीं रहता है व तीन शल्य नहीं रहती हैं ॥ १२॥ निःशंक स्वभाव होजाते हैं, सर्व भय व शंका व शल्य मिट जाती है ॥ १३ ॥ निःशंक स्वभावमें ॥ १४ ॥ वीतराग भावमें आनन्द मानते हैं ॥ १५ ॥ वीतराग भावमें रमण करते हुए केवली होजाते हैं ॥ १६ ॥ फिर तेरहवें गुणस्थानके अन्तमें सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति तीसरे शुक्लध्यानको पाते हैं ॥ १७ ॥ फिर चौदहवें गुणस्थानमें जाकर योग रहित स्वभावमें लीन रहते हैं तब मनुष्यभव पानेका सच्चा फल पाते हैं ॥ १८॥ जैसा जिनेन्द्रने कहा है उसी शुद्ध आत्मतत्वमें मगन रहते हैं ॥ १९ ॥ जिन कथित तत्वमें आनन्द पाते हैं, केवलज्ञानसे प्रकाशित रहते हैं ॥ २० ॥ जैसा उनका शरीर वज्रवृषभनाराच संहननका होता है, वैसा आत्मा भी वज्र समान चिर आस्रव रहित होजाता है ॥ २१ ॥ वे ज्ञान स्वभावी होते हैं ॥ २२ ॥ ज्ञान स्वभावको लिये हुए ज्ञानाकार सर्व कर्मोंसे व शरीरोंसे छूटकर मोक्षको प्राप्त होजाते हैं ॥ २३ ॥

पंक पृथ्वी निरूपणं ।

गाथा—जिन उत्तं सु विमलं, जिन सहकारेण न्यान अन्मोयं ।
भय सल्य संक विलयं, अन्मोद सहावेन सिद्धि संपत्तं ॥ १ ॥

अर्थ—जिनेन्द्रका कथन दोष रहित शुद्ध है। वीतराग भावकी सहायतासे ज्ञानमें आनन्द आता है। सर्व भय, शल्य, शंकाएँ नाश होजाती हैं। जिसका स्वभाव अभय आत्मानुभवरूप होजाता है वही सिद्धिको पाता है।

जिन उक्त १, जिनपद २, जिन अष्यर ३, जिन सुर ४, जिन रमण ५, जिन विन्यान ६, जिनपद जिन सव्दं ७, जिन दिस्टि ८, जिन उक्त जिन समय ९, जिन परिणै १०, जिन प्रमाण ११, जिन उक्त जिन सहकार १२, जिन औकास १३, जिन अनन्त चतुस्टय १४, जिन अन्मोद १५, जिन षिपक १६, जिन मुक्ति १७, जिन मुक्ति जिन वयण १८, जिन दरस १९, जिन लष्य २०, जिन अलष्य २१, जिन गम्य २२, जिन अगम्य २३, जिन जिनयति जिनपद न दिस्टते २४, अपद पद अनिस्ट अपद करण अपद अनिष्ट पद, अनिस्ट व्रत तव क्रिया अनिस्ट व्रत राग बन्ध २५, न्यान रमण न दिस्टते न सार्ध करोति २६, मिश्र राग बन्ध, राग सुभाव पंक प्रियो पंक पृथ्वी, महोरग गन्धर्व जष्य जष्यी पंक सुभाव २७, जष्य व्रति उत्पन्न अजष ग्रहण जय विलयं २८, जष्य सव्द, जष्यपति, जष्य त्रिजाति उत्पत्ति अनंत संसार भ्रमण भवनवासिनो उत्पत्ति अस्तीति भवति २९, जदि कदि अनन्त काल भ्रमण जदि न्यान उत्पन्न, न्यान सहकार, उत्पन्न न्यान रमण ३०, न्यान अन्मोद जीव मनुष्य काल लब्धि प्राप्ति भवति ३१, मनुष्य पंकज माल विधि ३२, मनस्य उववन्नं सहाइ विलयन्ति ३३, विलय कम्म बन्धं ३४, न्यान अन्मोय सिद्धि संपत्तं ३५।

अर्थ—जिसको जिनेन्द्र कथित सुहाता नहीं ॥ १ ॥ जिन पद भाता नहीं ॥ २ ॥ अविनाशी वीतराग भावका बोध नहीं ॥ ३ ॥ जिन सूर्य दिखता नहीं ॥ ४ ॥ वीतराग भावमें रमण होता नहीं ॥ ५ ॥ वीतराग ज्ञानका बोध नहीं ॥ ६ ॥ जिन पद व जिन शब्दका भाव भासा नहीं ॥ ७ ॥ वीतराग सम्यक्त हुआ नहीं ॥ ८ ॥ जिनेन्द्र कथित वीतरागी आत्माका बोध नहीं ॥ ९ ॥ वीतराग भावमें परिणमन नहीं ॥ १० ॥ जिन स्वरूप सचा भासता नहीं ॥ ११ ॥ जिन कथनसे वीतरागकी सहाय लेता नहीं ॥ १२ ॥ वीतराग भावमें प्रवेश होता नहीं ॥ १३ ॥ अनन्तज्ञानादि चतुष्टयधारी जिनको जो पहचानता नहीं ॥ १४ ॥ वीतरागतामें आनन्द आता नहीं ॥ १५ ॥ क्षायिक वीतराग भाव भासता नहीं ॥ १६ ॥ जिनेन्द्र कथित मुक्तिकी पहचान नहीं ॥ १७ ॥ जिन कथित जिनवाणीका मनन नहीं ॥ १८ ॥ जिनराजके धर्मपर दृष्टि नहीं ॥ १९ ॥ अनुभवने योग्य वीतराग भावको जानता नहीं ॥ २० ॥ अतीन्द्रिय गोचर वीतराग भावको पहचानता नहीं ॥ २१ ॥ श्री जिनराज ध्यान योग्य हैं ऐसा श्रद्धान नहीं ॥ २२ ॥ जिनराज अतीन्द्रिय हैं ऐसा लक्ष्य नहीं ॥ २३ ॥ जिसको जिनपद वीतराग पदपर श्रद्धान नहीं ॥ २४ ॥ परपद, अनिष्ट पद, जो दुःखका कारण है वह अच्छा लगता है। हानिकारक मिथ्यात्व सहित व्रत करता है, तप तपता है, क्रियाकाण्ड करता है। हानिकारक, मोक्षमार्ग विरोधी व्रतोंमें रागका बन्धन है ॥ २५ ॥ उसके भीतर आत्मज्ञानमें रमणता नहीं दिखलाई पड़ती है, न वह ज्ञानीकी संगति करता है ॥ २६ ॥ मिश्र राग रहता है, धर्म अधर्मका मिश्रित राग होता है, राग स्वभावकी कीच प्रिय भासती है। इससे पंक पृथ्वीमें जाकर महोरग, गन्धर्व, जक्ष जक्षी जन्मता है ॥ २७ ॥ यक्षदेवका स्वभाव प्रगट होता है, संसार भाव ग्रहण करता है, जयपना या सम्यक्त विला रहा है ॥ २८ ॥ यक्षोंका पति होता है, यक्षोंकी तीनप्रकार जातियोंमें उत्पन्न होता है। मिथ्यात्वके कारण अनन्त संसारमें ही भ्रमण करता है। वारवार भवनवासी देव होजाता है ॥ २९ ॥

अनन्त काल भ्रमण करते करते जब कभी सम्यग्ज्ञान पैदा होता है, तब ज्ञानकी मददसे ज्ञानमें रमण करता है ॥ ३० ॥ ज्ञानमें आनन्द मानता है। ऐसे मनुष्य जीवकी काल लब्धि आजाती है ॥ ३१ ॥ तब मनुष्य आत्माके गुणरूपी कमलोंकी माला पहनता है, ऐसा आत्मरमी होजाता है ॥ ३२ ॥ कि मनकी सहायता नहीं रहती है ॥ ३३ ॥ सर्व कर्म बन्ध क्षय होजाता है ॥ ३४ ॥ ज्ञानानन्दके साथ सिद्धिको पालेता है, मुक्त होजाता है ॥ ३५ ॥

भावार्थ—यहां सामान्य कथन है–यद्यपि पंक पृथ्वीमें असुरकुमार भवनवासी व राक्षस जातिके व्यंतर रहते हैं, शेष भवनवासी व व्यंतर खर भागमें रहते हैं। यहां यक्षादिको पंक पृथ्वीमें कहा है, यहां दृष्टि मात्र रत्नप्रभा पृथ्वीमें खर व पंक भागमें थी। इससे कोई विवादकी बात नहीं, प्रयोजन मिथ्यात्वके फलका बताया है। मिथ्यात्वी जीव ही भवनवासी व व्यंतर जन्मता है।

गाथा—अनिष्ट इष्ट नहु पिच्छै, इष्ट अन्मोय उवन सोइ रमणं।
इस्टं इस्टंति न्यानं, उत्पन्न अन्मोय सिद्धि संपत्तं ॥ २ ॥
उवनं उवन सहावं, उवन हिययार न्यान विन्यानं।
अर्क विंद हिय हुवयं, आगन्तु रमण हिययार सिद्धिं च ॥ ३ ॥
उवन हिययार संजुत्तं, उवनं सहकार रमण विन्यानं।
भय सल्य संक विलयं, परजय भय विलय न्यान उववन्नं ॥ ४ ॥
परजय सुभाव विलयं, न्यान अन्मोय नन्द जिन नन्दं।
न्यानं न्यान सु उवनं, उववन अन्मोय सिद्धि संपत्तं ॥ ५ ॥

॥ इति चौवीस ठाणौ ग्रन्थ जिन तारणतरण विरचित सम उत्पन्निता ॥

अर्थ—जहां शुभ व अशुभ भावोंपर प्रेम नहीं होता है, उपादेय शुद्ध आत्मीक तत्वमें आनन्द पैदा होजाता है, उसी शुद्धोपयोगमें रमण होता है। ज्ञान ज्ञानको ही चाहता है। इसीसे केवलज्ञानके साथ अनन्त सुख झलकता है और आत्मा सिद्ध गतिको प्राप्त कर लेता है ॥ २ ॥

जब आत्मामें सम्यग्दर्शनका स्वाभाविक गुण प्रगट होजाता है और इस सम्यक्तके साथ ज्ञान सम्यग्ज्ञान होजाता है और वह ज्ञानी ज्ञान सूर्यसम आत्मापर अनुभव करता है, ध्यानकी आग जलाता है और मोक्ष भावमें रमण करता है तब कर्मोंका नाश करके हितकारी सिद्धगतिको पालेता है ॥ ३ ॥

सम्यग्दर्शन हितकारी है, उसीके साथ ज्ञानमें रमण होता है, तब सब भय, शल्य व शङ्काएँ दूर

होजाती हैं। शरीरके छूटनेका व जन्म मरणका भय नहीं रहता है तब केवलज्ञान जाग जाता है ॥ ४ ॥

शरीरमें रमणका भाव दूर होजाता है। ज्ञान आत्मीक आनन्दमें मगन होजाता है तब आत्मानुभव रूपी ज्ञानसे केवलज्ञान पैदा होजाता है और अनन्त सुख झलक जाता है तब आत्मा सिद्धगतिको पा लेता है ॥ ५ ॥

इस तरह श्री तारणतरणस्वामी रचित चौवीस ठाणाकी भाषा पूर्ण हुई।

ग्रन्थका सारांश।

इस ग्रन्थमें श्री तारणस्वामीने चौवीस स्थान संसारी जीवोंके दिखलाये हैं। ये सब स्थान भेदरूपसे संसारी जीवोंके पाये जाते हैं। जब संसारी जीवोंको कर्मबन्धकी दृष्टिसे देखा जावे तो उनमें चार गतियां, पांच इंद्रियां, काय छः, योग तीन, वेद तीन, कषाय पच्चीस, ज्ञान आठ, संयम सात, दर्शन चार, लेश्या छः, भय दो, सम्यक्त छः, सेनी दो, आहारक दो, चौदह गुणस्थान, जीव समास १९, पर्याप्त छः, प्राण दस, संज्ञा चार, उपयोग बारह, ध्यान सोलह, आस्रव सत्तावन, योनि चौरासी लाख, कुल कोडि १९७॥ लाख, ऐसे चौवीस स्थान पाये जाते हैं। परन्तु उन संसारी जीवोंको शुद्ध निश्चयनयसे देख जावे तो वे इन २४ अवस्थाओंसे रहित परम शुद्ध अतीन्द्रिय, शुद्ध ज्ञानदर्शन स्वरूप, परमानन्दमय, निराकुल ध्यानकी कल्पनासे रहित—जन्म, मरणके दोषसे शून्य नित्य अविनाशी दीखते हैं। यहां लिखित चौवीस ठाणकी प्रतिमें कुल कोडि १९९॥ लाख है जब कि श्री गोम्मटसारमें १९७॥ लाख है। मनुष्यके कुल कोड़ि १२ लाख गिने हैं, १४ लाख लेनेसे १९९॥ लाख होते हैं।

गोमट्टसार गाथा—एया च कोडि कोडी सत्ताण उदीयं सद सहस्साइं।
पण्णं कोडि सहस्सा सव्वं गीणं कुलाणं य ॥ ११६ ॥

भावार्थ—सर्व जीवोंके समस्त कुलोंकी संख्या एक कोड़ाकोडी सत्ताणवे लाख तथा पचास हजार कोडि है। १९७५००००००००००

शायद किसी और ग्रन्थके आधारसे श्री तारणस्वामीने १९९॥ लाख कोडि कुल लिखे हैं।

नर्ककी दशा बताकर व पांच स्थावरोंकी व खासकर निगोदकी दशा बताकर स्वामीने बताया है। मिथ्यात्वके अन्धकारसे गृसित प्राणी अपने आत्माके महत्वको न पहचानकर इंद्रिय विषय व कषायोंकी तीव्रतासे दुर्गतिमें चला जाता है तथा अनन्त काल भ्रमण करता है। कभी क्षुद्र भव भी धार लेता है। एक श्वासमें अठारह दफे जन्म, मरण करता है। ऐसी दुर्गतिमें पड़े हुए जीव भी भावोंकी पलटनसे उन्नति करते करते मानव गतिमें आजाते हैं और यहां सम्यग्दर्शनको पाकर आत्मज्ञानी होजाते हैं। फिर उन्नति करते करते इसी भवसे या अन्य भवोंसे चार घातीय कर्म नाशकर अरहन्त होजाते हैं फिर शीघ्र ही सर्व कर्मसे मुक्त होकर सिद्ध होजाते हैं। सम्यक्तकी उत्पत्तिसे ही ज्ञानानन्दमें रमण होजाता है, विषय रमण घटता जाता है। जैसा २ आत्म रमण बढ़ता है, विषय रमण घटता जाता है वैसा वैसा मोक्षमार्ग तय होता जाता है। मोक्षका उपाय एक परमानन्द भोगते हुए आत्माका ध्यान है या स्वानुभव है। श्री पूज्यपादस्वामी इष्टोपदेशमें कहते हैं—

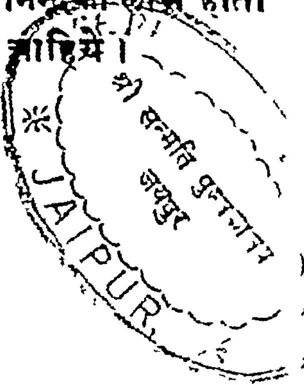
यथा यथा समायाति संवित्तौ तत्वमुत्तमम्। तथा तथा न रोचंते विषयाः सुलभा अपि ॥ ३७ ॥
यथा यथा न रोचंते विषयाः सुलभा अपि। तथा तथा समायाति संवित्तौ तत्वमुत्तमम् ॥ ३८ ॥
आत्मानुष्ठाननिष्ठस्य व्यवहारबहिःस्थितेः। जायते परमानन्दः कश्चिद्योगेन योगिनः ॥ ४७ ॥
आनन्दो निर्दहत्युद्धं कर्मेंधनमनारत। न चासौ खिद्यते योगीर्बहिर्दुःखेष्वचेतनः ॥ ४८ ॥

भावार्थ—जैसे जैसे उत्तम आत्मतत्व अपने अनुभवमें आता जायगा वैसे वैसे सुगमतासे प्राप्त विषय भी नहीं सुहाएंगे। जैसे जैसे सुलभ भी विषय नहीं सुहाएंगे वैसे वैसे अपने अनुभवमें उत्तम तत्व विशेष आता जायगा। जो व्यवहारसे बाहर होकर आत्माके ध्यानमें लीन होजाते हैं उनको इस योगाभ्याससे अद्भुत आनन्द होता है। यही परमानन्द निरन्तर विशेष कर्मरूपी ईंधनको जलाता है। स्वानुभवके समय बाहरी कष्टोंको लक्ष्यमें नहीं लेता हुआ कुछ भी खेदित नहीं होता है।

श्री तारणस्वामीने इस करणानुयोग ग्रन्थमें भी अध्यात्मभावकी वर्षा वर्षाई है। शब्दोंसे पुनः पुनः अपने आत्मीक तत्वका मनन होता है।

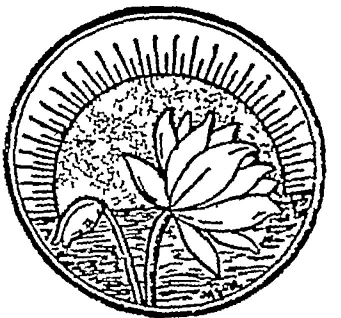
मिथ्यात्वसे ही यह जीव भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी देव जन्मता है। यह बात भी स्वामीने बताई है। जितनी दुर्गतियोंके स्थान यहां बताए हैं, नर्क गति व एकेन्द्रियादि पंचेन्द्रिय पर्यंत तिर्यंच गति व कुदेव गति इन सबको वही जीव पाता है जो अपने आत्माके ज्ञानसे बाहर है। इसलिये यही बात झलकाई है कि मानवको परम हितकारी आत्मज्ञानका लाभ करना चाहिये जिससे यह जीव सिद्ध-गति पाकर सदाके लिये सुखी होजावे।

अध्यात्म चर्चा हर दशामें सुखदाई है। आत्माके गुणोंके विचारसे यह भाव राग द्वेषकी कालिमासे मुक्त होता है तथ निराकुलता आती है, समता प्राप्त होती है, समतामें सदा आनन्दका लाभ होता है। जीवनको सुखदाई बनानेवाली अध्यात्म चर्चा है, हर समय इसीपर लक्ष्य रखना चाहिये।



मुलतान शहर।
भादों वदी २ वी० सं० २४६४
ता० २७-८-१९३८

ब्रह्मचारी सीतलप्रसाद।



टीकाकारकी प्रशस्ति।

अवध लक्ष्मणपुर बसै, अग्रवाल कुल सार।
विद्वन् मंगलसेनजी, ज्ञानी जिन वृष धार ॥ १ ॥

तिन सुत मक्खनलालजी, पुत्र चार तिन जान।
प्रथम बड़े संतलालजी, तृतीय सु सीतल मान ॥ २ ॥

बत्तिस वय अनुमानमें, घर त्यागा हितकाज।
इत उत भ्रमत स्वधर्म हित, लिखत पढ़त दिन जात ॥ ३ ॥

साठ वर्ष अनुमान वय, वर्षाकाल मंझार।
पुर मुलताने विराजिया, होवे धर्म विचार ॥ ४ ॥

सुखानन्द जैनी रचित, उपवन शांत महान्।
धर्म ध्यान सहकार है, रहो चित्त उमगान ॥ ५ ॥

जैनी दिग् अम्बर बसे, घर पचास सुख लीन।
मन्दिर बड़ा शिखर सहित, विद्याशाला कीन ॥ ६ ॥

पण्डित अजितकुमारजी, चौथमल्ल वृष लीन।
रामजीदास सभापती, परमानन्द प्रवीण ॥ ७ ॥

दासूराम सुखानन्द, भोलाराम जिनदास।
गुमानचन्द्र शिवनाथजी, आशानन्द प्रकाश ॥ ८ ॥

रंगूराम सु विहारी, लाल सुधर्मी जान।
संगति वृष धारीनकी, करत बुद्धि अमलान ॥ ९ ॥

श्री तारणस्वामी रचित, चौवीस ठाणा जान।
भाषा टीका लिख दई, होवे जग कल्याण ॥ १० ॥

भादों सुदी द्वितीया दिना, वार शनीश्चर जान।
वीर मुकत चौविस शतक, चौसठ संवत् मान ॥ ११ ॥

सत्ताईस अगस्ट है. सन् उन्निस अड़तीस।
ग्रन्थ पूर्ण सुखसे किया, नमहु वीर गुण ईश ॥ १२ ॥

अध्यातमके मननको, यह दर्पण अविकार।
जो देखें रुचि लायके, पावें सुख शुचिकार ॥ १३ ॥

मंगल श्री अरहन्त है, मंगल सिद्ध महान्।
मंगल श्री मुनिराज हैं, करहु कर्मकी हान ॥ १४ ॥

